प्रकाशकीय

साधुमार्गी जैन परम्परा मे महान् क्रियोद्धारक आचार्यश्री हुक्मीचदजी म सा की पाट–परम्परा मे षष्ठम् युगप्रधान आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा विश्व–विभूतियो मे एक उच्चकोटि की विभूति थे। अपने युग के क्रातदर्शी सत्यनिष्ठ तपोपूत सत थे। उनका स्वतन्त्र चिन्तन वैराग्य से ओत–प्रोत साधुत्व, प्रतिभा–सम्पन्न वक्तृत्वशक्ति एव भक्तियोग से समन्वित व्यक्तित्व स्व–पर–कल्याणकर था।

आचार्यश्री का चिन्तन सार्वजनिक सार्वभौम और मानव मात्र के लिए उपादेय था। उन्होने जो कुछ कहा वह तत्काल के लिए नहीं अपितु सर्वकाल के लिए प्रेरणापुज बन गया। उन्होने व्यक्ति समाज ग्राम नगर एव राष्ट्र के सुव्यवस्थित विकास के लिए अनेक ऐसे तत्त्वो को उजागर किया जो प्रत्येक मानव के लिए आकाशदीप की भाँति दिशाबोधक बन गये।

आचार्यश्री के अन्तरग मे मानवता का सागर लहरा रहा था। उन्होने मानवोचित जीवनयापन का सम्यक् धरातल प्रस्तुत कर कर्तव्यबुद्धि को जाग्रत करने का सम्यक् प्रयास अपने प्रेरणादायी उद्बोधनो के माध्यम से किया।

आगम के अनमोल रहस्यो को सरल भाषा मे आबद्ध कर जन–जन तक जिनेश्वर देवो की वाणी को पहुचाने का भगीरथ प्रयत्न किया। साथ ही प्रेरणादायी दिव्य महापुरुषो एव महासतियो के जीवन वृत्तान्तो को सुबोध भाषा मे प्रस्तुत किया। इस प्रकार व्यक्ति से लेकर विश्व तक को अपने अमूल्य साहित्य के माध्यम से सजाने–सवारने का काम पूज्यश्रीजी ने किया है। अस्तु! आज भी समग्र मानव जाति उनके उदबोधन से लाभान्वित हो रही है। इसी क्रम मे शालिभद्र चरित्र किरणावली का यह अक पाठको के लिए प्रस्तुत है। सुज्ञ पाठक इससे सम्यक् लाभ प्राप्त करेगे।

युगद्रष्टा युगप्रवर्तक ज्योतिर्धर आचार्यश्री जवाहरलालजी म सा का महाप्रयाण भीनासर मे हुआ। आपकी स्मृति को अक्षुण्ण रखने और आपके कालजयी प्रवचन साहित्य को युग–युग मे जन–जन को सुलभ कराने हेतु समाजभूषण धर्मनिष्ठ आदर्श समाजसेवी स्व सेठ चम्पालालजी बाठिया का चिरस्मरणीय श्लाघनीय योगदान रहा। आपके अथक प्रयासो और समाज के उदार सहयोग से श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर की स्थापना हुई। संस्था जवाहर साहित्य को लागत

मूल्य पर जन–जन को सुलभ करा रही है ओर पण्डित शोभाचन्द्रजी भारिल्ल के सम्पादकत्व मे सेठजी ने 33 जवाहर किरणावलियो का प्रकाशन कर एक उल्लेखनीय कार्य किया है। बाद मे सस्था की स्वर्ण जयन्ती के पावन अवसर पर श्री बालचन्दजी सेठिया व श्री खेमचन्दजी छल्लाणी के अथक प्रयासो से किरणावलियो की सख्या बढकार 53 कर दी गई। आज यह सैट प्राय बिक जाने पर श्री जवाहर विद्यापीठ ने यह निर्णय किया गया कि किरणावलियो को नया रूप दिया जावे। इसके लिए सस्था के सहमत्री श्री तोलाराम बोथरा ने परिश्रम करके विषय अनुसार कई किरणावलियो को एक साथ समाहित किया और पुन सभी किरणावलियो को 32 किरणो मे प्रकाशित करने का निर्णय किया गया।

ज्योतिर्धर श्री जवाहराचार्यजी म सा के साहित्य के प्रचार–प्रसार मे जवाहर विद्यापीठ भीनासर की पहल को सार्थक और भारत तथा विश्वव्यापी बनाने मे श्री अ भा साधुमार्गी जैन सघ बीकानेर की महती भूमिका रही। सघ ने अपने राष्ट्रव्यापी प्रभावी सगठन और कार्यकर्ताओ के बल पर जवाहर किरणावलियो के प्रचार–प्रसार और विक्रय प्रवन्धन मे अप्रतिम योगदान प्रदान किया है। आज सघ के प्रयासो से यह जीवन निर्माणकारी साहित्य जैन–जेनेतर ही नही अपितु विश्व धरोहर बन चुका है। सघ के इस योगदान के प्रति हम आभारी हैं।

धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती राजकुवर बाई मालू धर्मपत्नी स्व डालचन्दजी मालू द्वारा आरम्भ मे समस्त जवाहर साहित्य प्रकाशन के लिए 60 000 रु एक साथ प्रदान किये गये थे जिससे पूर्व मे लगभग सभी किरणावलियॉ उनके सौजन्य से प्रकाशित की गई थी। सत्साहित्य प्रकाशन के लिए बहिनश्री की अनन्य निष्ठा चिरस्मरणीय रहेगी।

प्रस्तुत किरणावली का पिछला सस्करण श्री समता युवा सघ मद्रास के सौजन्य से प्रकाशित किया गया और प्रस्तुत किरण 13 (शालिभद्र चरित्र) के अर्थ सहयागी श्री गुलाबचन्दजी बोथरा गगाशहर, बीकानेर हैं। सस्था सभी अर्थ–सहयोगियो के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करती है।

निवेदक

चम्पालाल डागा
अध्यक्ष

सुमतिलाल बाठिया
मत्री

आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा.

जीवन तथ्य

जन्म स्थान	थादला, मध्यप्रदेश
जन्म तिथि	वि स 1932, कार्तिक शुक्ला चतुर्थी
पिता	श्री जीवराजजी कवाड
माता	श्रीमती नाथीबाई
दीक्षा स्थान	लिमडी (म प्र)
दीक्षा तिथि	वि स 1948, माघ शुक्ला द्वितीया
युवाचार्य पद स्थान	रतलाम (म प्र)
युवाचार्य पद तिथि	वि स 1976, चैत्र कृष्णा नवमी
आचार्य पद स्थान	जैतारण (राजस्थान)
आचार्य पद तिथि	वि स 1976 आषाढ शुक्ला तृतीया
स्वर्गवास स्थान	भीनासर (राज)
स्वर्गवास तिथि	वि स 2000 आषाढ शुक्ला अष्टमी

आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा

आचार्य श्री जवाहर–ज्योतिकण

+ विपत्तियो के तमिस्र गुफाओ के पार जिसने सयम साधना का राजमार्ग स्वीकार किया था।
+ ज्ञानार्जन की अतृप्त लालसा ने जिनके भीतर ज्ञान का अभिनव आलोक निरतर अभिवर्द्धित किया।
+ सयमीय साधना के साथ वैचारिक क्राति का शखनाद कर जिसने भू–मण्डल को चमत्कृत कर दिया।
+ उत्सूत्र सिद्धातो का उन्मूलन करने, आगम–सम्मत सिद्धातो की प्रतिष्ठापना करने के लिए जिसने शास्त्रार्थो मे विजयश्री प्राप्त की।
+ परतत्र भारत को स्वतत्र बनाने के लिए जिसने गाव–गाव, नगर–नगर पाद–विहार कर अपने तेजस्वी प्रवचनो द्वारा जन–जन के मन को जागृत किया।
+ शुद्ध खादी के परिवेश मे खादी–अभियान चलाकर जिसने जन–मानस मे खादी–धारण करने की भावना उत्पन्न कर दी।
+ अल्पारभ–महारभ जैसी अनेको पेचीदी समस्याओ का जिसने अपनी प्रखर प्रतिभा द्वारा आगम–सम्मत सचोट समाधान प्रस्तुत किया।
+ स्थानकवासी समाज के लिये जिसने अजमेर सम्मेलन मे गहरे चितन–मनन के साथ प्रभावशाली योजना प्रस्तुत की।
+ महात्मागाधी विनोबाभावे लोकमान्य तिलक, सरदार वल्लभ भाई पटेल प श्री जवाहर लाल नेहरू आदि राष्ट्रीय नेताओ ने जिनके सचोट प्रवचनो का समय–समय पर लाभ उठाया।
+ जैन व जैनेत्तर समाज जिसे श्रद्धा से अपना पूजनीय स्वीकार करती थी।
+ सत्य सिद्धातो की सुरक्षा के लिये जो निडरता एव निर्भीकता के साथ भू–मडल पर विचरण करते थे।

"हुक्म सघ के आचार्य"

1 आचार्य श्री हुक्मीचदजी म सा – दीक्षा वि स 1870 स्वर्गवास वि स 1917
ज्ञान-सम्मत क्रियोद्धारक साधुमार्गी परम्परा के आसन्न उपकारी।

2 आचार्य श्री शिवलालजी म सा – दीक्षा वि स 1891, स्वर्गवास वि स 1933
प्रतिभा–सम्पन्न प्रकाण्ड विद्वान परम तपस्वी, महान शिवपथानुयायी।

3 आचार्य श्री उदय सागरजी म सा – दीक्षा 1918, स्वर्गवास वि स 1954
विलक्षण प्रतिभा के धनी, वदीमान–मर्दक, विरक्तो के आदर्श विलक्षण।

4 आचार्य श्री चौथमलजी म सा – दीक्षा 1909 स्वर्गवास वि स 1957
महान क्रियावान, सागर सम गभीर, सयम के सशक्त पालक शात–दात, निरहकारी निर्ग्रन्थ शिरोमणि।

5 आचार्य श्री श्रीलालजी म सा – दीक्षा 1944, स्वर्गवास वि स 1977
सुरा–सुरेन्द्र–दुर्जय कामविजेता अद्भुत स्मृति के धारक जीव–दया के प्राण।

6 आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा – दीक्षा 1947, स्वर्गवास वि स 2000
ज्योतिर्धर, महान क्रातिकारी, क्रातदृष्टा, युगपुरुष।

7 आचार्य श्री गणेशीलालजी म सा – दीक्षा 1962, स्वर्गवास वि स 2019
शात क्राति के जन्मदाता सरलता की सजीव मूर्ति।

8 आचार्य श्री नानालालजी म सा – दीक्षा 1996 स्वर्गवास वि स 2056
समता–विभूति विद्वद्शिरोमणि जिनशासन प्रद्योतक धर्मपाल प्रतिबोधक समीक्षण ध्यानयोगी।

9 आचार्य श्री रामलालजी म सा – दीक्षा 2031 आचार्य वि स 2056 से
आगमज्ञ तरुण तपस्वी तपोमूर्ति उग्रविहारी सिरीवाल प्रतिवोधक व्यसनमुक्ति के प्रबल प्रेरक बालब्रह्मचारी प्रशातमना।

अर्थ–सहयोगी परिचय

उदारमना गुरुभक्त सुश्रावक श्रीयुत गुलाबचन्दजी बोथरा

बीकानेर के उपनगर गगाशहर का बोथरा परिवार (पारवा वाला) सघ–सेवा मे अपना विशिष्ट योगदान एव स्थान रखता आ रहा है। इन परिवारो पर वर्तमान एव पूर्ववत् सभी आचार्यों की असीम कृपा रही है। इसी बोथरा परिवार मे जुलाई 1945 मे श्री गुलाबचन्द जी बोथरा का जन्म हुआ है।

श्री गुलाबचन्द जी बोथरा स्व भैरूदान जी (पुत्र स्व श्री खूमचन्द जी) एव स्व श्रीमती भँवरीदेवी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। आपके तीन अनुज भ्राता श्री अनोपचन्द श्री इन्दरचन्द, श्री विनोद कुमार अपने–अपने व्यावसायिक कार्यो मे सलग्न हैं एव सुश्रावक हैं। सभी की धर्म व्रत, सेवा मे अत्यन्त रुचि रहती है। श्री गुलाबचन्द जी के तीनो पुत्र एव पुत्र वधूएँ श्री किशोर–सज्जन चिकमगलूर महेन्द्र–सरोज कडूर एव नवरतन–समता भुवनेश्वर मे अपने–अपने व्यावसायिक कार्यो मे व्यस्त रहने के साथ–साथ अपने पिताश्री के अनुसरण एव निश्रा मे धर्म–ध्यान, सेवा एव सामाजिक कार्यो मे रुचि लेते हैं।

श्री गुलाबचन्द जी का विवाह 1965 मे नोखा निवासी श्रेष्ठी श्रावक श्री भैरूदान जी डागा की सुपुत्री छगनी देवी के साथ सम्पन्न हुआ। श्रीमती छगनी देवी शासन–प्रभाविका महासती स्व श्री केशर कवर जी म सा की सासारिक भतीजी भी है एव उनकी कृपा एव धार्मिक सस्कार आपको विरासत मे मिले हैं।

श्री गुलाबचन्द जी बोथरा अब तक कोलकाता मे अपने पैत्रिक व्यवसाय जूट के व्यापार मे सलग्न रहे है। अभी हाल मे कुछ वर्षो से आप व्यावसायिक कार्यो से निवृत्त प्राय हो चुके हैं।

आप हमेशा से ही एक श्रावक का धर्म पालन करते रहे हैं। सामायिक व्रत उपवास सॉवत्सरिक प्रतिक्रमण पौषध आदि नित–नियमो मे कभी कोताही नही बरती। वर्तमान आचार्य श्री 1008 श्री रामलाल जी म सा के सान्निध्य मे आने के बाद तो आप मे जैसे तप एव सयम के नये आयामो का जन्म हो गया है। पति–पत्नी दोनो व्रत एव सयमी जीवन के प्रति आराधना–रत है।

आचार्य श्री के सन 2001 के गगाशहर–भीनासर के चातुर्मास मे आपने सहर्ष आर्थिक सहयोग तो किया ही तप मे भी नये कीर्तिमान स्थापित

किए। तप एव सयम की कडी मे आपने आजीवन शीलव्रत आजीवन जमीकन्द त्याग चोविहार रात्रि भोजन त्याग आदि कई व्रत लिए – जिनकी पालना निर्बाध रूप से कर रहे हैं। तपस्या की कडी मे आपने गुरुदेव के इसी चातुर्मास मे मास–खामण की तपस्या प्रसन्नचित्त एव साताकारी अवस्था मे पूरी की। उपवास, तेला अठ्ठाई तो आप करते ही रहे हे। अभी वर्ष सन् 2006–07 मे आपने वर्षी तप कर पारणा हस्तिनापुर मे 20 अप्रेल 2007 को सम्पन्न किया एव अगले वर्ष हेतु पुन वर्षी तप शुरू कर दिया। शासनदेव एव गुरुकृपा से आपका शरीर एव स्वास्थ्य तप मे रम सा गया हे। वडे सहज रूप से आप अपने देनिक कार्यो का निष्पादन करते हुए तपस्यारत हें जो कि गुरुकृपा बगेर असम्भव है।

आपने गगाशहर–भीनासर सघ के अध्यक्ष के रूप मे भी कार्य किया है। सघ को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने मे आपका विशेष योगदान रहा है। सतो के दर्शन, स्वधर्मी सहायता, दान एव समाजसेवा मे बराबर सहयोगी बने हुए है।

आपने एव आपके परिवार ने धार्मिक सस्थानो सामाजिक सस्थानो, गो–सेवा एव प्याऊ आदि मे सहर्ष आर्थिक सहयोग दिया हे जिनमे प्रमुख हे – गगाशहर के समता भवन, जोधपुर समता भवन, कड्डुर समता भवन तथा डोडीलोहरा की अस्पताल मे अर्थ–सहयोग। राजस्थान मे 2003 के अकाल मे भी आपने गौ सेवा हेतु अर्थ सहयोग किया था। आपकी पत्नी श्रीमती छगनी देवी भी इन कार्यों एव तप–सयम मे आपका पूरा–पूरा साथ एव प्रेरणा दे रही हे।

श्री जवाहर विद्यापीठ से भी श्री गुलाबचन्द जी सक्रिय रूप से जुडे हुए हैं। इस सस्था के प्रति भी आपकी अटूट निष्ठा है। समय–समय पर इस सस्था मे भी आपने यथेष्ट अर्थ–सहयोग प्रदान किया है। अभी जब 32 किरणावलियॉ का यह नवीनतम सस्करण छप रहा हे, आपने स्वप्रेरणा से एक किरण की धनराशि उपलब्ध कराई है। इसके लिए विद्यापीठ आपको साधुवाद देती है।

ऐसे सुश्रावक उत्तरोत्तर अपनी तपस्या ज्ञान, दर्शन एव चरित्र मे परिष्कार करते रहे यही मगल कामना है।

अनुक्रम

शालिभद्र–चरित

1 : आमुख

सभी जानते है कि बिजली का बटन दबाते ही प्रकाश जगमगा उठता है। दरअसल उस पकाश का सम्बन्ध बिजलीघर (पावर हाउस) के साथ है। बिजली का बटन दबाकर बच्चा भी प्रकाश कर सकता है, लेकिन पावर हाउस बन्द हो तो पकाश नही होता। इससे यह बात प्रकट होती है कि असली महत्व बटन का नही पावर हाउस का है और असली काम बटन दबाना नही पावर (शक्ति) पैदा करना है।

शालिभद्र की ऋद्धि पसिद्ध है। प्रत्येक जैन व्यापारी वैसी ऋद्धि की कामना करता है। उसकी ऋद्धि की कल्पना करके प्रसन्नता का अनुभव करता है। मगर देखना चाहिये कि वह ऋद्धि कहा से आई है?

शालिभद्र की ऋद्धि का मूल स्रोत–उद्गम स्थान बतलाना ही इस कथा का उद्देश्य है।

प्रस्थान

जाति से वह गूजरी थी। उसके गाव का पता नही क्या नाम था। पति के नाम को भी हम नही जानते। सिर्फ यही मालूम है कि वह किसी छोटे से ग्राम मे रहती थी और वह गाव मगध की राजधानी राजगृह के आसपास ही कही था। उसका नाम धन्ना था।

एक समय था जब उसका भरा–पूरा परिवार था वह खुशहाल थी। उसके घर मे दूध की नदिया बहती थी और अनाज के ढेर लगे रहते थे। वह कितने ही दीन–हीनो को भोजन कराने के बाद भोजन करती थी।

लेकिन काल–गति बडी ही विचित्र है। न जाने कौनसी भूखी बीमारी का आक्रमण हुआ और उसका सारा परिवार उसका शिकार बन गया। उस बीमारी से न केवल उसका मानव–परिवार ही वरन् पशु–परिवार भी समाप्त हो गया। रह गया एक पुत्र जिसका नाम था सगम।

धन्ना धन–जनहीन हो गई। यहा तक कि भरपेट भोजन भी उसके लिये कठिन समस्या वन गई। कडी मेहनत–मजदूरी करके कठिनाई से अपना पेट पालती और सगम का सरक्षण करती थी।

धन्ना की वाह्य सम्पत्ति समाप्त हो गई थी फिर भी वह एकान्त दरिद्र न थी। सद्विचार और धर्मभावना की आतरिक सम्पत्ति उसके पास पर्याप्त थी। स्त्री जाति मे स्वभावत दृढता और धीरज की कमी देखी जाती हे पर धन्ना इसके लिए अपवाद थी। उसमे कूट–कूट कर दृढता भरी थी। इसका कारण उसकी धर्मभावना थी। धर्मभावना मनुष्य को घवराने से रोकती हे और कठोर से कठोर प्रसग पर भी शातचित्त रहने की प्रेरणा करती हे। धर्ममय भावना का आतरिक आदेश प्रत्येक परिस्थिति को समभाव से स्वीकार करने की क्षमता प्रदान करता है। साधारण स्त्री होती तो ऐसे विकट प्रसग पर कोन जाने क्या कर वेठती? पर नही, यह धन्ना थी असाधारण नारी।

उसने सोचा– चिन्ता किसी भी मुसीबत का इलाज नही बल्कि वह तो स्वय एक वडी मुसीवत हे जो सेकडो दूसरी मुसीवतो को घेरकर ले आती हे। चिन्ता करने से कोई लाभ नही होगा। चिन्ता मेरे प्राण ले लेगी और वालक सगम अनाथ बन जायेगा। सभव हे मेरे न रहने पर सगम का भी जीवन खतरे मे पड जाए। घर का सभी कुछ तो चला ही गया है अव तो चिन्ता छोड कर धर्म की रक्षा करना ही उचित हे। धर्म की रक्षा करने से ही सव रहेगा।

लोग समझते हैं–सध्या या प्रात काल सामायिक कर लेना या धर्म का उपदेश सुन लेना ही धर्म हे। लेकिन धर्म की व्याख्या इतनी सकीर्ण नही है। धर्म की समाप्ति इतने मे ही नही हो जाती। वास्तव मे धर्म का दायरा बहुत विशाल हे और गूजरी धन्ना के चरित्र से उसका यहा दिग्दर्शन होगा।

धन्ना सोचती है– मेरा पहला धर्म यह हे कि जव तक शरीर मे शक्ति हे तब तक मागकर नही खाना चाहिये। वाहर वालो से न मागना यही नही वल्कि कुटुम्ब या सज्जन से भी याचना नही करनी चाहिये कि आप मुझे कुछ दीजिये। भगवान् मेरी प्रतिज्ञा की रक्षा करे।

लज्जा भीख मागकर खाने म हे। मेहनत–मजदूरी कर के उदर पोषण करने मे न लज्जा हे न कोई वुराई ह अतएव मेरे लिए यही मार्ग हितकर हे कि मे मजदूरी करूगी ओर जो कुछ पाऊँगी उसी मे अपना ओर अपने वालक का पेट पालूगी।

धन्ना ने मेहनत मजदूरी करके उदर पोषण करने का निश्चय कर। अव उसके सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि किस जगह रहकर

मजदूरी करना उचित होगा? दुष्काल के कारण यहा तो मजूरी मिलती ही नही है फिर कहा जाना चाहिये? अन्त मे उसने राजगृह जाने का निश्चय कर लिया। वह अपने लडके सगम से कहने लगी—बेटा, चलो राजगृह। वहा नागरिको के जीवन मे अपना जीवन मिलाकर दु ख के दिन काटे।

नागरिक जीवन और ग्राम्य जीवन मे क्या अन्तर है। इस सबध मे बहुत कुछ विचार—विमर्श हो सकता है। नागरिक लोग ग्रामीणो को गवार कहकर उनकी अवहेलना करते है और आप सुसस्कारी, बुद्धिमान तथा अमीर होने का दावा करते हैं। मगर सोचना होगा कि ग्रामीण की सहायता के बिना नागरिक जीवन का निभना क्या सभव भी है? नागरिक बडी—बडी हवेलियो मे निवास करते हैं। यह ठीक है मगर ये हवेलिया किसके परिश्रम के प्रताप से बनी है? नागरिक सुन्दर और बारीक वस्त्र पहनकर मानो आसमान से बाते करते हैं पर किसकी कडी मेहनत ने कपास और रूई पैदा की है? नागरिक भाति—भाति के व्यजन खाते हैं और अपनी चटोरी जीभ को तृप्त करते हैं लेकिन उनकी सामग्री आती कहा से है? कौन अन्न पैदा करता है? अन्न नगर की विशाल हवेलियो मे या बाजार की चौपड मे नही पैदा होता और न नागरिक उसके लिये पसीना बहाते हैं। यह सब चीजे गवार समझे जाने वाले लोग ही उत्पन्न करते है और इस प्रकार नागरिको का जीवन गवारो की ही मुट्ठी मे है।

आज अमीरी का चिन्ह यह है कि इधर का लोटा उधर न रखा जाय। ऐसे 'कर्त्तव्य—कायर' अमीर अपने—आप को ससार की शोभा समझते है और दिन—रात कठोर परिश्रम करने वाले कर्त्तव्यपरायण ग्रामीणो को उपेक्षा की दृष्टि से देखते है मगर यह अमीर नागरिक एक दिन के लिये ही यह प्रतिज्ञा कर देखे कि वे ग्रामीणो के हाथ से बनी अथवा उनके परिश्रम से पैदा हुई किसी भी वस्तु का उपयोग न करेगे तो उन्हे पता लग जायेगा कि उनकी अमीरी की नीव कितनी मजबूत है?

नगर की सडाध से भरी हुई गलियो मे दुर्गन्ध पैदा होती है अरुचि पैदा होती है नाना प्रकार की हेजा प्लेग आदि बीमारियॉ पेदा हो सकती हैं मगर अन्न पेदा नही हो सकता। उन गलियो मे विषाक्त वायु का सचार होता है, प्राणवायु का प्रवेश भी नही होता। वहा बनावटीपन का राज्य हे नैसर्गिक सौन्दर्य के दर्शन तक नही होते।

और ग्रामो मे? ग्राम अन्न के अक्षय भडार हें। वहा प्राणो का अनवरत सचार है प्रकृति के सौन्दर्य की अनोखी बहार हे।

धन्ना अपने ग्राम को प्राणो की तरह चाहती थी। पर कभी–कभी जीवन मे ऐसे प्रसग उपस्थित हो जाते कि मनुष्य को विवश होकर मन को मारना पडता है और अपनी इच्छा के प्रतिकूल ही वर्ताव करना पडता है। धन्ना की यही स्थिति थी। वह अपने ग्राम्य जीवन की इतिश्री करके नागरिक–जीवन के साथ सम्बन्ध जोडने जा रही थी।

आज के नगरो की स्थिति जैसी निन्दनीय है उस समय राजगृह वैसा नही था। वहा धन तो था मगर धर्म के साथ ही था। वहा जो बडे आदमी थे वे अपने से छोटो को निभाते थे। वहा के पण्डित मूर्खों को समझा कर अपने नगर को आदर्श बनाये रखने के लिये यत्नशील रहते थे। भला जो नगर भगवान महावीर के चरणारविन्दो से अनेक बार पावन हुआ हो कैसे सम्भव है कि वहा के नागरिको मे कोई न कोई विशेषता न हो?

राजगृह नगर भले ही स्वर्ग के समान हो फिर भी धन्ना के लिए तो अपना गाव ही स्वर्ग था। वह उसे त्यागना नही चाहती थी। यही कारण है कि धन्ना जब गाव छोडकर रवाना होने लगी तो अतीतकाल की अनेक स्मृतिया उसके दिमाग मे चक्कर काटने लगी। उसके हृदय मे अपने गाव और छोटे–से मकान के प्रति, पडोसियो के प्रति और ग्राम की इच–इच भूमि के प्रति अपूर्व ममता उमड पडी, जिसका उसने पहले कभी अनुभव ही नही किया था। विछोह के समय ममता अतिशय घनीभूत हो जाती है।

धन्ना के हृदय मे जो विचारमथन हुआ, वह कहा नही जा सकता। उसे अपना ग्रामीण घर, पवित्र पवन देनेवाले हरे–हरे वृक्ष निर्मल और पावन जल देने वाले जलाशय और सुख–दु ख मे सहानुभूति दिखाने वाले भोले–भाले ग्रामीणजन सब याद आने लगे। आज मेरी स्थिति अगर बालक को पालने योग्य भी होती तो मैं इन सबको कदापि न छोडती।

अन्त मे धन्ना ने अपना हृदय कठोर बनाया और परिचित जनो से विनम्रतापूर्वक विदा ली।

2 : कर्तव्यनिष्ठा

दो बटोही राजगृह की ओर बढे चले जा रहे हैं। उनकी चाल मे स्फूर्ति नजर नही आती। अलस गति है। उनमे एक स्त्री है, एक बालक है। बालक अबोध है। उसमे समझ नाम की चीज अभी पैदा नही है। मा के बताये काम को कर देने के सिवाय उसे अधिक ज्ञान नही है।

स्त्री की चाल साफ बतला रही है कि वह अनमने भाव से चली जा रही है। मानो वह स्वय नही चल रही है उसका कलेवर ही चला जा रहा है। वह बार–बार मुह फेरकर पीछे की ओर देख लेती है जैसे उसका कोई अपना पीछे रह गया है। कभी–कभी वह साथ के बालक पर वात्सल्यभरी नजर डालती जाती है। फिर भी वह निरन्तर चल रही है। स्त्री धन्ना है और बालक सगम है।

जगली पशु जब जगल मे से पकड कर नगर मे लाया जाता है, तो उसकी दशा विचित्र हो जाती है।

धन्ना की भी कुछ–कुछ ऐसी ही स्थिति हो गई। जब तक नगर नजर नही आया था उसका मन अपने गाव मे और अपने घर मे ही भटक रहा था। नगर दिखाई देते ही झपट कर राजगृह जा पहुची और अनेक कल्पनाओ की सृष्टि करने लगी।

धन्ना सीधे–सादे स्वभाव की ग्रामीण स्त्री है। वह पढना–लिखना नही जानती। वह सोचने लगी–मै गवार कहलाने वाली स्त्री हू। इस नगर मे मेरी लाज कैसे रहेगी? में युवती हू और विधवा हू। मेरे पति परलोक चले गये है। बालक अभी अबोध है। सिवाय दीनबन्धु भगवान के और किसी का सहारा नही है। प्रभो! मेरी आत्मा मे ऐसा बल प्रकट हो कि मै अपने सतीत्व की भली–भाति रक्षा कर सकू। दीनबन्धु! बिना काम किये हराम का खाने का विचार तक मेरे मन मे न आवे। अधिक काम करके थोडा लेने की ही भावना बनी रहे। सब लोग मुझे प्रामाणिक मानेगे तभी मेरे ग्राम की लाज रहेगी।

एक मनुष्य के कृत्य से भी सारे गाव को यहा तक कि देश को भी भलाई और बुराई मिल सकती है।

धन्ना के पास एक जून खाने को भी नही था। उसके शरीर पर जो कपडे थे बस वही साथ मे कपडे थे। हडे–कुडे अगर उसके घर मे रहे होगे तो उन्हे वह टोकरे मे भर कर साथ लाई होगी।

धन्ना राजगृह मे दाखिल हुई। उसने सोचा– बाजार की ओर जाने से कोई लाभ नही है। पास मे एक पैसा भी नहीं है कि कुछ खरीद कर बच्चे को दिया जा सके। भूखा बालक खाने की कोई चीज देखकर मचल गया तो क्या होगा? बाजार तो पैसे वालो के लिये है।

यह सोचकर उसने धनिको की गलियो का रास्ता पकडा। इस विचार से कि वहा जल्दी कोई मजदूरी मिल जाये तो बच्चे के खाने–पीने का प्रबन्ध कर सकू।

पुण्य करुणा मे है। जो पुण्यवान होगा वह करुणावान होगा और जो करुणावान होगा, वह दीन–दु खियो से प्रेम करेगा। दरिद्र को देखकर वह नफरत नही करेगा।

धन्ना एक गली मे घुसी। यहा की पुण्यवती स्त्रियो ने धन्ना को देख कर सोचा–यह कोई दु खिया स्त्री है। जान पडता है इसका घर–द्वार छूट गया है।

उनमे से एक ने पूछ लिया– कहो बाई तुम कोन हो? कहा जा रही हो?

धन्ना ने विनम्र स्वर मे कहा– मैं एक विपदग्रस्त ग्रामीण स्त्री हू और मुसीबतो की मारी आपके नगर मे आश्रय लेने आई हू।

एक तो धन्ना के कहने का ढग ही कुछ ऐसा था फिर वे स्त्रिया भी दयावती थी अतएव धन्ना की बात सुनकर उनका हृदय पसीज उठा। उन्होने उसे प्रेम के साथ बिठलाकर कहा–तुम भूखी होओगी। दूर से आ रही हो पहले कुछ खा–पी लो।

धन्ना– आप दया की मूर्ति हे ओर आपके यहा का भोजन भी अच्छा ही होगा। मुझे भूख भी लग रही है फिर भी आपके यहा का भोजन नही कर सकती। एक स्त्री– क्यो?

धन्ना–आज मैं बिना मेहनत का खा लूगी तो मेरी जिन्दगी बिगड जायेगी। फिर मुझसे काम न होगा ओर मैं सीधा भोजन मिलने की ही इच्छा करने लगूगी।

धन्ना के इस उत्तर से नागरिक स्त्रियो को अपने कर्त्तव्य का भान हुआ और इस बात से वे काप उठी।

उन्होने कहा– हम तुम्हे काम बताएगी। पहले भोजन तो कर लो।

धन्ना– कृपा करके पहले मुझे काम बता दीजिए। आप जितनी जल्दी मुझे काम बताएगी उतनी ही जल्दी मानो भोजन देगी।

स्त्रिया–तुम्हारे साथ यह बालक भी तो भूखा होगा। तुम भोजन नही करती तो इसे करा दो।

धन्ना–यह बालक भी मेरे जैसा ही है। यह मेरे उद्यम द्वारा लाये हुए सामान मे से ही भोजन करता है। किसी का दिया हुआ भोजन नही करता।

धन्ना की इस बात ने स्त्रियो को और ज्यादा प्रभावित किया। वे कहने लगी– ठीक है। जिसके माता–पिता निष्ठा वाले होते हैं, वे बालक भी वैसे ही निष्ठावान होते हैं।

नागरिक स्त्रियो मे से एक ने कहा– अब बाते करना छोडो। बेचारी खुद भूखी है और बालक तो भूख से कुम्हला रहा है, इसे जल्दी कोई काम बता दो।

तब दूसरी ने पूछा– अच्छा बहिन तुम क्या काम करना जानती हो?

धन्ना– मै पीसना कूटना, पानी लाना, पशुओ की सार–सम्भाल करना दुहना दूध–दही की व्यवस्था करना और ग्रामीण भोजन बनाना आदि जानती हू।

एक स्त्री ने कहा– तो ठीक है। मैं तुम्हे भोजन–कपडा दूगी। ऊपरी खर्च के लिए भी कुछ दे दिया करूगी। तुम हमारे यहा रहकर काम किया करो। किसी प्रकार की तकलीफ नही पाओगी।

धन्ना–धन्यवाद। मगर मैं इस प्रकार नही रह सकूगी। मुझे एक अलग कोठरी मिलनी चाहिए जहा घर बनाकर रह सकू और अपना भोजन आप बनाकर खा सकू। आपके यहा का भोजन करने से मेरा काम नही चलेगा। आपका भोजन दूसरी तरह का होगा मेरा दूसरी तरह का। मुझे गरीबी मे गुजर करनी है। रईसी भोजन मै नही कर सकूगी। अपनी मजूरी मे ही मुझे निर्वाह करना पडेगा।

आखिर धन्ना को एक कोठरी मिल गई। उसने लडके को वहा खिलाया और आप काम मे लग गई। काम समाप्त करके उसे जो मजदूरी मिली उससे वह बाजार जाकर भोजन–सामग्री खरीद लाई। भोजन बनाकर पहले बालक को खिलाया और फिर खुद ने खाया। इसके बाद रास्ते की थकावट मिटाने के लिए वह विश्राम करने लगी।

धन्ना के पास न धन है न ओढने–बिछाने के लिए वस्त्र ही हैं। केवल मिट्टी के ही कुछ वर्तन हे। शृगार की वस्तुओ का तो प्रश्न ही नहीं उठता। उसे अपने दो हाथो का ही बल है। ससार मे उसका कोई नहीं हे जो उसके सुख–दु ख का साथी हो उसे सान्त्वना के दो शब्द कहे। बस वह है और उसका धर्म है। एक नन्हा–सा बालक अवश्य हे जिसे देखकर वह जी रही है। वह सब तरह से असहाय है, अनाथ हे।

धन्ना इस हालत मे भाग्यशालिनी है या अभागिनी?

प्रश्न अटपटा है। कौन धन्ना को भाग्यशालिनी कह सकता है? इस दुनिया मे सौभाग्य जिस गज से नापा जाता है उसे देखते तो उपर्युक्त प्रश्न ही असगत है। लेकिन इस दुनिया से परे भी एक और दुनिया है जहा के नाप वही नही हैं जो इस दुनिया के हैं। उसी दूर की दुनिया के नाप से अगर धन्ना के सौभाग्य को नापा जाय तो निस्सदेह कहना पडेगा कि धन्ना वास्तव मे भाग्यशालिनी है।

धन्ना गरीब हे इसलिए पुण्यशालिनी है। गरीब ही पुण्यशाली हो सकता हे और धनी नही हो सकता है– यह बात नही है। असल मे पुण्यवान कौन हे ओर कैसे हे, यह बात धन्ना के चरित्र से प्रकट होगी। जिसके दिल मे दया का वास है वही पुण्यवान है। जो आपा–पोषी है आप बढिया खाते–पीते, पहनते–ओढते हैं लेकिन आस–पडौस के दु खियो की ओर दृष्टि भी नही करते उन्हे पुण्यवान कैसे कहा जा सकता है?

धन्ना असहाय है फिर भी उसमे दीनता नही है। धन्ना दरिद्र है फिर भी बिना मेहनत किये किसी से कुछ नही चाहती। वह दूसरे के घर मे रहती हे फिर भी स्वावलम्बन को नही त्यागती। वह युवती है फिर भी उसने पुरुषमात्र को पिता और भाई के समान समझने का सकल्प किया हे और उसे निभाने के लिये दृढचित्त है। वह अपने कार्य मे व्यस्त रहती हे फिर भी जब विश्राम करती है तो यही सोचती है कि मैंने जो व्रत लिया हे वह जाने न पावे। ग्राम मे रहते हुए जिस शील धन की अब तक रक्षा की है वह कही लुट नही जाए। मेरे जीवन रूपी स्वच्छ चादर पर कलक का धब्बा न लगने पावे। वह अपनी हालत को भलीभाति समझती हे परन्तु असतोष की ज्वालाओ मे कभी दग्ध नही होती। जब जितना पाती है उसी मे सतोष मान लेती है।

अब आप सोचिए कि धन्ना पुण्यवती हे या नही?

आज लोग फैशन मे डूबे है। बम्बई और कलकता के नये-नये फैशनो से भी उन्हे सतोष नही होता तो विदेशी फैशनो का अनुकरण कर रहे है। लोगो को आधुनिक नगरो की हवा लग गई है। लेकिन धन्य है वह धन्ना जो नगर मे निवास करती हुई भी नागरिक रहन-सहन से अछूती ही रही। इस पकार जिसे अपनी कुलमर्यादाओ का ध्यान है, जिसके दिल मे दया है, जो अपने धर्म का विचार रखती है, उस धन्ना को अगर पुण्यशालिनी न कहा जाय तो फिर क्या कहा जाय?

धन्ना जिन सेठानियो के घर मजूरी करने जाती थी उनके यहा प्राय नये-नये पकवान बनते रहते थे। मगर धन्ना कभी किसी चीज के लिए दे कहना तो जानती ही नही थी। कभी कोई सेठानी कोई नई चीज देती हुई उसे कहती- धन्ना लो यह ले जाओ बहुत स्वादिष्ट चीज है। तुम भी खाना और बच्चे को भी खिलाना तो धन्ना सेठानी की दयालुता और उदारता के लिए उसे धन्यवाद देती हुई कहती-सेठानी जी ! यह भोजन आपके ही योग्य है। हमारे योग्य नहीं है। एक बार इसका स्वाद ले लूगी तो दोबारा खाने की इच्छा होगी और चाह बनी रहेगी कि कोई फिर दे दे। यह चाह धीरे-धीरे इतनी बढ जायगी कि मैं मागने भी लगूगी। इसके अतिरिक्त मेरा बालक भी कभी मचल जाएगा तो मैं कहा से लाऊगी?

इस प्रकार धन्ना उत्तम भोजन पर कभी न ललचाई। वह अपनी मेहनत-मजदूरी से कमाई हुई रूखी-सूखी रोटियो पर ही अपना निर्वाह करती और सतुष्ट रहती थी। सेठानियो के पकवानो को वह परतन्त्रता के जाल मे फसाने वाला प्रलोभन समझती थी। वह जानती थी कि अगर मैं जीभ की गुलामी मे फस गई तो मेरी सारी जिन्दगी गुलामी के बधनो मे जकड जाएगी। इस समय तो मैं सिर्फ काम-काज की गुलामी कर रही हू। किन्तु फिर भोजन की भी गुलामी करनी पडेगी। भोजन की गुलामी से निस्तार होना कठिन हो जाएगा।

पुण्य की रक्षा इस प्रकार की जाती है। बढिया खाना और पहनना एव जीभ का गुलाम बन जाना पुण्यशील का लक्ष्य नही है। पुण्यवान बनने के लिए जीभ पर अकुश रखना पडता है।

आज की भारतीय प्रजा अगर धन्ना के आदर्श का अनुसरण करती और विदेशी वस्त्रो आदि के प्रलोभन मे न पडती तथा स्वावलम्बी बनी रहती

तो उसे सदियो तक गुलामी न सहन करनी पडती लेकिन विदेशी वस्त्रो ओर अन्य वस्तुओ ने भारतीय जनता को गुलाम बना रखा है।

राजगृह नगर की उदार-हृदया सेठानिया धन्ना को मुफ्त मे ओर अच्छी नीयत से भोजन देती थी फिर भी धन्ना उसे स्वीकार नही करती थी। परन्तु आपको चौगुना अठगुना मूल्य लेकर ऐसी चीजे दी जाती हैं जिनका सेवन करके आप आर्थिक गुलामी के बन्धनो से छूट भी न सके। फिर भी आप विचार नही करते?

जो वस्तु आपके देश की उन्नति मे बाधा पहुचाती हो अथवा जिसके सेवन से आपके धर्म को आघात लगता हो, आपकी कुल-मर्यादा भग होती हो वह वस्तु अगर मुफ्त मे भी मिल रही हो तो भी यदि आप विवेकवान हैं तो उसे स्वीकार नही करेगे। कौन बुद्धिमान पुरुष बिना पैसे मिलने के कारण विष खाने को तैयार होगा?

लेकिन ऐसी बातो पर विचार करने वाले आज बहुत कम हैं। लोग तात्कालिक सुख और सुविधा का ही विचार करते हैं। उससे निकलने वाले अन्तिम परिणामो की ओर ध्यान नही देते। कॉड-लीवर ऑयल जो मछलियो के कलेजे का तेल है कई एक दूध मे मिलाकर पीते हैं। ऐसे लोगो मे दया कहा रहेगी? कपडो मे, दवाइयो मे तथा अन्य वस्तुओ मे चर्बी मिला-मिला कर आपका धर्म नष्ट किया जाता है। आप इन बातो को जानते भी हैं लेकिन कितने हैं जो इनका त्याग करते हैं?

अमुक वस्तु का सेवन मेरे धर्म के अनुकूल है या नही? इस वस्तु का व्यवहार करने से मेरे कुल की मर्यादा भग होती है या नही? इत्यादि प्रश्न किसके हृदय मे उठते हैं? अधिकाश लोग मजा-मौज मे पडे हैं उन्हे इन बातो से जैसे कोई मतलब ही नही है।

मगर धन्यवाद है उस धन्ना को जिसने मुफ्त मे मिलने वाली वस्तुओ का उपयोग नही किया जो उसके धर्म मे तथा व्रत मे बाधक हो सकती थी। धन्ना ऐसी विवेकवती थी तभी तो उसका पुत्र शालिभद्र हुआ।

धन्ना मोटा और सादा वस्त्र ही पहनती थी। उदारतापूर्वक अपना उतारा हुआ या नया वस्त्र कई स्त्रिया उसे कभी देने लगती थी।

पर धन्ना तो वस्त्र नही लेवे जामे काम जरा नहि होवे।
ज्या से व्रत म्हारा नष्ट होवे नहि लेऊ धन्ना इम केवे।।

धन्ना वस्त्रो को स्वीकार नही करती थी। वह नम्रतापूर्वक उत्तर – ये वस्त्र योग्य नही हैं। मैं पहना हुआ वस्त्र लेती ही नही हू। कदाचित

आप बिना पहना वस्त्र दे तो भी मै नही ले सकती। मुझे आपकी उदारता ओर सद्भावना का दुरुपयोग करने का क्या अधिकार है? मै तो अपनी आय मे से ही अपने योग्य वस्त्र खरीद लूगी।

धन्ना का उत्तर सुनकर सेठानिया कहती– तू हमारे यहा काम करती है और दरिद्र सी दिखाई देती है। यह हमारे लिये लज्जा की बात है। कोई क्या कहेगा कि इनकी नौकरानी ऐसी फटी हालत मे रहती है। जरा अच्छे कपडे पहना कर। इसमे तेरी भी इज्जत है और हमारी भी।

धन्ना उत्तर देती– मैं किसी की नौकरानी नही हू केवल काम–काज की नौकरानी हू। आपने बढिया कपडे पहने हैं मैने सादे और मोटे। मगर इसमे अन्तर क्या हुआ? जैसे आप सन्तुष्ट हैं वैसे मैं भी सन्तुष्ट हू। आपके सुदिन सदा बने रहे। फिर भी कल्पना कीजिये कि कदाचित् आपके ऊपर मेरे जैसी मुसीबत आ पडी तो आप क्या करेगी? आप उस मुसीबत को शाति के साथ सहन करेगी या हाय–हाय कर विकल हो जाएगी? ससार मे सबके दिन सदा समान नही बीतते। अतएव मनुष्य को प्रत्येक परिस्थिति के लिये तैयार रहना चाहिये। यह बढिया समझे जाने वाले वस्त्र गुलामी के बन्धन मे बाधने वाले है। अतएव आप अनुग्रह करके इन्हे पहनने का आग्रह न कीजिए। मेरे लिये वही कपडे अच्छे हैं जिन्हे पहन कर मैं अपना काम भली–भाति कर सकू, अपना पेट पाल सकू और विलासिता की दुर्गन्ध से बच सकू। मेरे लिये वही कपडे अच्छे है जिन्हे पहन लेने पर मेरी नीयत न बिगडे और मुझ पर किसी दूसरे की नीयत न बिगडे। जिन कपडो से मेरा व्रत टूटता हो आगे चलकर जिनके लिये भीख मागने की सम्भावना होती हो वे कपडे मेरे काम के नही है। सेठानी जी! आपकी उदारता के लिये कृतज्ञ हू। आपने मेरे प्रति जैसी उदारता प्रदर्शित की है वैसी ही दया भी दिखाइए। आपकी दया इसी मे है कि आप मुझे किसी ऐसी चीज का प्रलोभन न दे जिससे आगे चल कर मैं खराब हो जाऊ।

धन्ना की ऐसी–ऐसी ज्ञानभरी बाते सुन कर सेठानिया आश्चर्य मे डूब जाती थी। वे सोचने लगती– धन्ना को कौन ऐसा गुरु मिला है जिसने इसे यह उपदेश दिया है? यह गावडे की रहने वाली भोली औरत ज्ञान की बाते कहा से सीख सकी होगी?

नैसर्गिक गुण के सामने उपदेश की कोई बिसात नही है। नैसर्गिक गुण के होने पर मनुष्य की भावना जितना ऊची होती है उपदेश से उतनी

ऊची नही हो सकती। वास्तव मे धन्ना बडी पुण्यवती थी। अगर भारतवर्ष की प्रजा धन्ना के कार्यो को पहचान ले और उनका महत्त्व भली–भाति समझ ले तो थोडे ही दिनो मे अनेक बडे–बडे पाप धुल जाए।

धन्ना काम–काज से निपट कर आराम करने लगती तो सोचा करती थी– ससार की विलासवर्धक वस्तुए ही विषय–वासना को उत्पन्न करती हैं। यह सब जीवन को अपवित्र बनाने वाली हैं। प्रभो! मुझे इन वस्तुओ से बचाना। मेरा जीवन तेरे ही चरणो मे समर्पित हैं।'

धन्ना न जाने किस गहरे विचार मे डूबी है कि देने वाले तो खुशी–खुशी उसे देते हैं मगर वह नही लेना चाहती। वह विवेकवती है, इसी कारण नही लेती है। सचमुच ऐसे विवेकवान व्यक्ति ही अपने जीवन मे दाग नही लगने देते। धन्ना अपने पुण्य के कारण सदैव विकारजनक वस्तुओ से बचती रही।

3 संगम का शिक्षण संस्कार

धन्ना बडे विचार और विवेक के साथ अपना और अपने बालक का निर्वाह कर रही थी। उसकी आकाक्षाओ का दायरा बहुत छोटा था। यही कारण है कि उसे असतोष और तृष्णा ने कभी पराजित नही किया। वह थोडे मे ही सुखी थी।

धीरे–धीरे धन्ना का नन्हा बालक बडा हो गया। अब उसे बालक के सबध मे विचार करना पडा। एक दिन उसने सोचा– 'यह ग्रामीण लडका है। यह अमीर लडको के साथ खेलता रहता है। इसके भी सस्कार अमीरो जैसे हो जाना स्वाभाविक है। इधर मै गरीबिनी और ग्राम्य जीवन बिताने वाली असहाय स्त्री हू। लडका बिगड जाएगा तो मेरे सारे मन्सूबे मिट्टी मे मिल जावेगे। लोग कहेगे– इसने लडके को बिगाडा है। मेहनत–मजदूरी करके मैं इसका पेट पाल सकती हू मगर इसका बिगडना नहीं देख सकती।'

'तो उपाय क्या है? यही कि अमीर लडको की सगति से बचाया जाय। जिस प्रकार भी मैं स्वतन्त्र और सादा ग्राम्य जीवन बिता रही हू, उसी पकार का जीवन बिताने के लिये इसे प्रेरित किया जाय।

बिना कुछ कराये लाड लडाते रहने मे लडके का सुधार नही होता। बहुत से लोग समझते है कि लडके से कुछ काम न लेना और उसके बेकार भटकने देना ही उससे प्यार करना है। मगर यह विचार बडा घातक है। ऐसा करने से बालक के जीवन मे तरह–तरह के अवगुण प्रवेश कर जाते हैं। आगे चल कर बालक कभी समझदार हो गया और ठीक रास्ते पर आ गया तो वह अपने माता–पिता की लापरवाही का विचार करके उनके प्रति कृतज्ञ नही रहता।

धन्ना रात भर इसी विचार मे डूबी रही। उसने बालक के विषय मे अपना कर्त्तव्य तय कर लिया। पात काल बालक से कहा– 'बेटा! तू दिन भर गन्दी हवा वाली गलियो मे घूमता–फिरता हे। इस हवा मे घूमने से तेरा स्वास्थ्य खराब हो जायेगा।

वालक– गलियो मे न जाया करू तो कहा जाऊ? कोठरी मे ही वेठा रहू? मगर वहा भी तो वही गलियो की हवा पहुचती हे।

धन्ना– नही वेटा मे कोठरी मे वैठे रहने को नही कहती हू। तुझे नगर से वाहर की साफ–सुथरी ताजा हवा लेनी चाहिए।

वालक–लेकिन विना काम जगल मे कैसे फिरता रहूगा?

धन्ना–काम की क्या कमी है वेटा! तेरी इच्छा हो तो सेठो के 5–7 वछडे तेरे सुपुर्द करा दू। तू उन्हे जगल मे खेतो मे चरा लाया कर। वछडो के साथ जगल मे जाने से काम भी होगा और स्वच्छ हवा भी मिलेगी। शाम को वछडे लेकर लोट आया करना। तुझे मालूम ही हे कि हम गरीब आदमी है। अगर तू सेठो के वछडे चरा लायेगा तो अपनी मजूरी की आमदनी भी बढ जायेगी।

धन्ना का प्रस्ताव सुनकर वालक, जिसका नाम सगम था प्रसन्न हुआ। उसने कहा– तुमने अच्छा सोचा मा! मेरा मन भी ऐसा ही कहता है। में अपने गाव मे रहता था और आनन्द मे रहता था। वहा के लडके मुझे प्रेम करते थे। यहा के गहने पहनने वाले लडके मेरी अवज्ञा करते रहते हैं। मैं वछडो के साथ अपना समय व्यतीत करना अच्छा समझता हू। इन घृणा करने वाले लडको के साथ खेलना पसन्द नही करता। बछडे मुझे प्रेम करेगे और मेरी अवज्ञा नही करेगे। इन लडको की अपेक्षा मेरे लिये बछडे बडे अच्छे रहेगे।

सगम की स्वीकृति पाकर धन्ना प्रसन्न हुई। तब वहा सेठानियो के पास पहुची। उनसे उसने कहा– आपके बछडे स्वच्छ जगल की हवा न मिलने के कारण कितने दुर्बल और निर्जीव से हो रहे हैं। इन्हे साफ हवा मिले तो इनमे चेतना फूट पडेगी। आप इन्हे मुझे सौंप दीजिए। मेरा बालक इन्हे जगल मे चरा लायेगा और शाम को घर लौटा लायेगा। बाधने ओर खोलने की जिम्मेदारी मुझ पर रहेगी। मै इन्हे खोल दिया करूगी बाध जाया करूगी और समय–समय पर जगल मे भी सभाल लिया करूगी। इसके लिये आपकी जो इच्छा, मजदूरी दे दिया कीजिए। आप इतनी कृपा करेगे तो मेरे लडके के लिये भी काम हो जायेगा ओर आपके बछडे भी वढिया हो जाएगे।

धन्ना के कथन मे पसन्द न आने लायक कोई बात ही नही थी। सेठानियो ने प्रसन्नतापूर्वक उसकी बात स्वीकार कर ली।

धन्ना ने इस प्रकार कुछ बछडे इकट्ठे किये ओर सगम को सोंप । सगम उन्हे चराने ले गया। धन्ना ने पहले–पहल स्वय बछडो की सभाल

की। थोडे ही दिनो मे सगम जगल से परिचित हो गया और बछडे चराने मे अभ्यस्त हो गया।

अमीरो के लडके मदरसे मे जाकर शिक्षा लेते है मगर गरीबिनी धन्ना का बालक जगल मे भी शिक्षा पा रहा है। वह वहा क्या सीखता हे और उसके हृदय मे उस सीख का असर कितना गहरा होता हे, यह समय पर ही मालूम होगा।

बालक सगम वन के शातिदायक पाकृतिक दृश्य देख कर आनदित हो उठा। न मालूम उसके हृदय के किस अन्तरतम पदेश से यह अव्यक्त ध्वनि गूजने लगी कि मेरी मा धन्य है जिसने शहर की गन्दी और विषेली हवा से निकाल कर इस पवित्र और आनन्दपदायिनी हवा मे मुझे भेज दिया। सगम मन ही मन अपने साथी अमीरो के लडको को सबोधन करके कहने लगा– ओ मेरे साथियो! तुम लोग तो पाठशाला मे पुस्तको से शिक्षा प्राप्त कर रहे हो! तुम्हे क्या पता है कि यहा कैसी शिक्षा मिलती है?

एक समय की बात है। सूर्य तेजी से चमक रहा था। मध्यान्ह का समय था। कडी धूप पड रही थी। सगम कडी धूप से घबरा कर एक वृक्ष के नीचे आकर खडा हो गया। उसे शाति मिली। वह आखें घुमाकर पेड की ओर बडे ध्यान से देखने लगा। पेड के प्रति उसे एक विचित्र प्रकार का आकर्षण हुआ मानो पेड उसका कोई आत्मीय हो। मन ही मन कहने लगा– तरुवर! तुम कितने पवित्र और उदार हो। तुम्हे 'अजातशत्रु' का महत्वपूर्ण नाम दिया गया है। अजातशत्रु की उपाधि या तो धर्मराज की है या तुम्हे है। चाहे कोई पत्थर मारे या काटे तुम उसे भी वही फल देते हो जो पूजने वाले को देते हो। मै मनुष्य हू और यह मेरे साथी पशु हैं परन्तु तुम बिना किसी भेदभाव के जैसी छाया मुझ पर रखते हो वैसी ही इन पर भी। किसी के आने पर और बैठने पर जसी छाया रखते हो उसके चले जाने पर भी वैसी ही रखते हो। दिखावट की भावना तुम्हे छू भी नही सकी। तुम्हारे भीतर जेसा समभाव हे वैसा समभाव अगर हम मनुष्यो मे भी उत्पन्न हो जावे हम भी अगर सत्कार और तिरस्कार करने वालो पर समान भाव रखना सीख ले तो मनुष्य समाज कितना उन्नत हो जाए! सचमुच अपने उच्च गुणो के कारण ही तुम ऊचे हो। साधारण मनुष्य तुम्हारी ऊचाई तक नही पहुच सकता है और इसी प्रकार वह [illegible] वाला भी नही बनता और 'सफल' भी नही हो पाता है। हे शाखिन! तुम्हारी रूप क्रियाए मनुष्य को अद्वितीय बोध देने वाली हे।

सगम इस पकार सोच ही रहा था कि उस वृक्ष की डालियो पर बेठे हुए पक्षियो का सगीत उसके कानो मे पडा। सगम का ध्यान उस सगीत की

ओर खिंच गया। सगीत सुन कर वह पुलकित हो उठा। उसने सोचा– पक्षियो का यह गान वीणा आदि वाद्यो को लज्जित करने वाला है। इन पक्षियो के स्वर के सामने अच्छे से अच्छे गवैया का स्वर भी नाचीज हे। गवैया लोभ से या किसी को रिझाने के लिये गाता हे परन्तु पक्षीगण स्वाभाविक सरलता से अपने अन्त करण की सहज प्रेरणा से गाते हें। कोकिला! तेरे पचम स्वर को सुन कर मुझे अपनी माता की याद आ जाती है। तू भी मेरी माता की तरह मधुर स्वर सुना रही है।'

भगवान के वचन को शास्त्र मे कोयल के पचम स्वर की उपमा दी गई है। जिस प्रकार कोयल विल्कुल नि स्वार्थ भाव से अपना स्वर सुनाती हे उसी तरह भगवान ने भी नि स्वार्थ भाव से अपने वचन सुनाये हें।

धूप कुछ ढल गई तो सगम अपने साथी वछडो को चराने के लिये चल दिया। वछडे अव प्यासे हो गये थे। सगम उन्हे झरने के पास ले गया। वछडे अपनी–अपनी पूछ उठा कर पानी पीने लगे। सगम ने पानी पीया। पानी पीकर ओर मुह पर ठडा पानी फेर कर वह झरने की ओर भावभरी निगाह से देखने लगा। झरने के कलकल नाद ने उसे मुग्ध वना दिया। वह मानो झरने से कहने लगा– झरना! तेरा नाद कितना मधुर है! तू एक ही धारा से प्रवाहित हो रहा हे। मेरे आने से पहले भी तू इसी प्रकार नाद करता हुआ एक धारा से बह रहा था ओर मेरे आने के वाद भी तू वही कलकल नाद करता हुआ उसी प्रकार बह रहा है। अगर मानव–जीवन सुख–दु ख मे अनुकूल–प्रतिकूल अवस्थाओ मे सदा एक ही धारा से समान रूप से वहता रहे तो कितना उत्तम हो।

अगर मनुष्य के जीवन की धारा निर्झर की 'जीवन धारा' के समान सदा शात निरन्तर अग्रगामी मार्ग मे आने वाली चट्टानो से भी टकरा कर कभी न रुकने वाली, विश्व को सगीत के माधुर्य से पूरित कर देने वाली ओर निरपेक्षता से वहने वाली वन जाय तो क्या कहना हे।

झरना मनुष्य को अनोखा पाठ सिखलाता हे। वह अनवरत गति से अनन्त सागर मे मिल जाने के लिये वहता रहता हे। इसी प्रकार मनुष्य भी अगर अनन्त परमात्मा से मिलने के लिये निरन्तर गतिशील रहे तो कृतकृत्य हो जाए। झरना हमे सिखलाता हे कि निरन्तर प्रगति करना ही जीवन का चिह्न हे ओर जडता मृत्यु की निशानी हे।

वालक सगम को धीरे–धीरे वन–जीवन वहुत प्रिय लगने लगा। वन वृक्ष ओर लताए उसे अपने परिचित साथियो जेसे जान पडते थ। उसन

उनके साथ आत्मीयता का सबध स्थापित कर लिया था। वह वन मे पहुच कर खूब प्रसन्न था।

सगम को नगर–जीवन से घबराहट होती थी। जब वह नगर मे आता तो ऊब जाता और सोचता कब सुबह हो और मै अपने साथियो के साथ वन मे विहार करने रवाना होऊ।

वन का जीवन वास्तव मे प्रशसनीय है। भगवान महावीर को महला की अपेक्षा वन ही पिय लगा। बुद्ध ने जिस समय बुद्ध गया मे पवेश किया तब वहा के जगल को देख कर उन्होने कहा–योगियो के भाग्य अच्छे हैं जो यह जगल नही कटा है। भारतवर्ष के महान् साधको ने वन के सजीव शात स्वच्छ एव पवित्र वातावरण मे ही अपनी महान् साधनाए सम्पन्न की थी।

वन के साथ योगियो का क्या सबध है, यह बात तो योगी ही जानते हैं। दूसरो को इसका क्या पता?

इस प्रकार वन मे आनन्दपूर्वक रह कर सगम मुनि को अपने घर लाने की आकर्षण शक्ति प्राप्त कर रहा है। वे मुनि जो मासखमण के पारणा के निमित्त आने वाले है उन्हे लखपतियो के घर के बदले सगम जेसे गरीब के घर लाने मे कैसी शक्ति की आवश्यकता है इस पर जरा विचार कीजिए। आध्यात्मिक शक्ति के प्रभाव के बिना ऐसे मुनि सगम के घर नही पहुच सकते थे।

बालक सगम मे कैसी आत्मिक शक्ति होगी, यह विचारणीय है। एक गरीब मजदूरिन का बालक होकर भी सगम ऐसी शक्ति कैसे पा सका? और अपने बालको मे यह शक्ति क्यो नहीं है? आप अपने बालको को खूब खिलाते हैं पिलाते है बढिया मन–चाहा कपडा पहनाते हैं और गहनो से सजाते हैं। फिर भी उनमे सगम जैसी शक्ति नही उत्पन्न होती। कही यह सब बाते ही तो शक्ति नष्ट नही कर देती? यह आपके सामने विचारणीय प्रश्न है।

बालक सगम मे अच्छे गुण थे तभी तो वह तपस्वी मुनि को अपनी ओर आकर्षित कर सकता था। शरीर पर फोडा या घाव होने पर मक्खिया भिनभिनाती आती हे लेकिन सुगन्धित द्रव्य का लेप करने पर मक्खिया नही आती भमर भले ही आ जाते हैं। मक्खिया दुर्गन्ध पर ही आती हैं और भ्रमर सुगन्ध पर ही आते है। अगर आप सद्गुण रूपी सुगन्ध करेगे तो कभी ऐसे मुनि भी आपके पास चले आएगे। उनके आने पर उनका आदर–सत्कार करोगे तो अपना कल्याण कर लोगे।

4. खीर

वन मे जाते और बछडे चराते सगम को काफी समय हो गया। साधारणतया मनुष्य एक ही प्रकार का जीवन बिताते–बिताते ऊब जाता है। उसके हृदय मे किसी प्रकार की नवीनता की चाह उत्पन्न नहीं होती है। कहावत भी है– 'लोको हि अभिनवप्रिय' अर्थात प्रत्येक मनुष्य नूतनता चाहता है। मनुष्य की यह स्वभावसिद्ध प्रकृति है। ऐसी स्थिति मे सगम को भी अगर वन–जीवन से विरक्ति हो गई होती तो कोई आश्चर्य की बात नही थी, बल्कि ऐसा होना ही स्वाभाविक था। मगर नही उसे अपने नियमबद्ध जीवन के प्रति कोई विराग नही है, असन्तोष नही है। वह पहले की ही तरह अब भी नियत समय पर अपने साथी बछडो को लेकर वन चल देता है और वहा प्रसन्न भी रहता है। इस कारण यही जान पडता है कि उसने वन्य प्रकृति के साथ गहरी आत्मीयता स्थापित कर ली है। वन के पेड पौधे बेले झरने और टीले उसके सुहृद बन गये हैं और उनका नित्य नया सन्देश उसका जी नही ऊबने देता।

एक दिन न मालूम कौन–सा त्यौहार था। उस दिन घर–घर खीर बनाई गई थी। बालक सगम को अन्य बालको से इस बात का पता चला। सगम मे इतना धैर्य तो था कि यह किसी से खीर नही ले सकता था और न किसी के घर भोजन ही कर सकता था, लेकिन आखिर बालक ही ठहरा। घर–घर खीर बनने का समाचार सुनकर उसने सोचा– जब सभी के घर खीर बनी है तो मेरे घर भी बनी होगी। मै भी आज खीर खाऊगा।

खीर की आशा लिये सगम अपने घर आया। उसे आया देख धन्ना ने कहा–बेटा आ राबडी–रोटी खा ले। फिर बछडे ले जाने का समय हुआ जाता है।

सगम ने कहा–मा क्या आज तुमने राबडी रोटी ही बनाई हे? जिसे खीर कहते है वह नही बनाई?

सगम ने अपनी समझ मे कभी खीर नही खाई। उसे खीर का अनुभव नही है। धन्ना चाहती तो किसी और वस्तु को खीर बता कर सगम को धोखा दे सकती थी। मगर उसने ऐसा नही किया। वह जाति की गूजरी है। उसने खीर खाई है। आज मुसीबत के दिन है तो क्या हुआ? वह अपने पुत्र को खीर जैसी चीज के लिये धोखा नही दे सकती। जिसकी माता मायाविनी नही होती उसकी सन्तान भी मायाचार से मुक्त होती है। इसके विपरीत जो माता अपनी सन्तान के साथ कपट करती है झूठ बोलती है, वह अपनी सन्तान को कपट और झूठ की शिक्षा देती है।

धन्ना को सगम की बात सुनकर कितनी गहरी वेदना हुई होगी, यह तो माता का हृदय ही ठीक तरह अनुभव कर सकता है। लेकिन धन्ना धीरज वाली स्त्री थी। उसने अपनी वेदना प्रकट नही होने दी। उसके हृदय मे जो ज्वाला भडक उठी थी उसकी लपटो से वह कोमल-हृदय बालक को नही झुलसाना चाहती थी। उसने शान्त और प्यार भरे स्वर मे कहा– बेटा, तू खीर की बात कहा सुन आया है? अपने घर तो छाछ भी नही है। छाछ मागने से मिलती है और मैंने मागना सीखा ही नही। खीर तो दूध आदि से बनती है। खीर का सामान तो अपने यहा नही है। फिर कहा से आयेगी?

धन्ना पाय पतिदिन मजदूरी करती है। फिर उसने अपने पास क्या इतने पैसे भी सग्रह न किये होगे कि एक बार बेटे को खीर खिला सके? कहा जा सकता है कि पैसे तो होगे लेकिन कृपणता के कारण उसने ऐसा कहा होगा। यह समाधान सही नही मालूम होता। धन्ना कपट करना नही जानती। वह सीधी और सच्ची स्त्री है। जो सत्य होता है वह निखालिस भाव से साफ कह देती है। इसके अतिरिक्त वह कपट करती तो किससे? और किसके लिए? सगम ही उसका इकलौता बेटा है। ससार मे अपना कहने लायक दूसरा कोई नही है। भला धन्ना जैसी स्त्री उससे क्या कपट करती।

धन्ना ने सग्रह करना नही सीखा। धन का सग्रह करना उसे पाप मालूम होता है। सग्रहपरायणता दूसरे सब पापो का मूल है। वह जानती है कि जरा मैंने चार पैसे जोडे नही कि मैं निन्यानवे के फेर मे पड जाऊगी। फिर पैसे के लोभ मे पडकर मै दूसरे काम बिगाडने लगूगी और न्याय-अन्याय का विचार भी न करूगी। वास्तव मे ससार के अधिकाश पाप परिग्रह-सग्रह की वृत्ति से उत्पन्न होते है। कहा भी है–

अर्थमनर्थं भावय नित्यम्।

[illegible] सदा ध्यान रखो कि अर्थ वास्तव मे अनर्थ है।

धन्ना कहती है–बेटा, न मेरे पास खीर की सामग्री हे ओर न पैसे ही है जो तुझे खीर बना कर खिला सकू। इसलिए जो घर मे है सो खा ले ओर काम मे लग जा।

सगम–मा आज तक तो मैंने तुम से कोई चीज मागी नहीं है। आज एक खाने की चीज मागी और उसके लिये भी तुमने मना कर दिया। आज सब लडके खीर खा रहे हैं। सबकी माताओ ने उनके लिये खीर बना दी है। और तू कैसी माता है जो अपने बेटे का एक दिन खीर भी नहीं खिला सकती? मै आज या तो खीर खाऊगा या फिर भूखा ही चला जाऊगा।

अपने पुत्र का यह हठ देखकर धन्ना को अपना अतीत काल स्मरण हो आया। एक–एक करके बहुत–सी तस्वीरे उसके मस्तिष्क मे खिची और विलीन हो गई। एक समय था जब उसके यहा गाये थी भैंसे थीं। दूध–दही की कमी नही थी। उस समय मागने वाला कोई बालक नही था और आज खीर के लिये हठ करने वाला बालक है तो एक बार खीर बनाने के लिये दूध ही नही है। सरल बालक सगम का विचार कर उसका हृदय भर आया। बेचारा कभी कुछ मागता नही है। आज ही उसने खीर मागी है। अब इसे क्या दू?

बालक सगम का उदास मुख देखकर धैर्यवती धन्ना स्थिर नही रह सकती। अपनी विवशता का विचार कर उसकी आखे सजल हो गईं।

मा की आखो मे आसू देखना सगम के लिये नवीन बात थी। इससे पहले धन्ना कभी न घबराई थी न रोई थी। गाढे से गाढे समय मे भी उसने अपना कलेजा चट्टान बना कर रखा था। इसी कारण सगम अपनी मा की आखे गीली देख कर घबरा उठा। उसने सोचा–मेरे खीर मागने से ही मा रो रही है। सगम भी रो पडा। रोते–रोते उसने कहा–मा तू मत रो। मैं खीर अब नही मागूगा। जो तू देगी वही खाकर बछडे चराने चला जाऊगा।

सगम की इस सान्त्वना से धन्ना का हृदय मानो फट गया। उसे अपनी स्थिति असह्य हो उठी। मन ही मन उसने कहा–ओ धन्ना, अगर तुझमे इतनी भी शक्ति नही थी कि एक बार तू अपने लाल को खीर भी न खिला सके तो तूने बेटे को जन्म ही क्यो दिया?

धन्ना अपनी हीनता और विवशता पर रो रही थी ओर सगम अपनी माता की व्याकुलता देख कर रो रहा था। दोनो का रोना सुनकर आस–पडोस की स्त्रिया धन्ना की कोठरी की ओर झपट आई। धन्ना और सगम की सज्जनता और ईमानदारी सभी पर प्रकट थी। उनके प्रति सभी की हार्दिक

सहानुभूति थी। अतएव मा–बेटे को रोते देख उनमे से एक ने पूछा–धन्ना, क्यो रो रही हो? और इस बालक को क्यो रुला रही हो? क्या कारण है? बताओ तो सही।

धन्ना अपनी व्यथा किसी पर प्रकट नही होने देती थी। स्त्रिया इकटठी हुई कि उसने अपने आसू पौंछने की चेष्टा की, इस विचार से कि मेरी दीन–दशा इस पर पकट न होने पावे। मगर आज उसकी चेष्टा सफल नही हुई। वह पकड ली गई। तथापि उसने कहा–कोई खास बात नहीं है बहिन चिन्ता मत करो।

धन्ना वास्तव मे कितनी धैर्यवती है। तुलसीदास जी ने कहा है–

तुलसी पर घर जायके दु ख न कहिये रोय।
भरम गमावे आपनो बाटि सके न हि कोय।।

धन्ना की बात सुन कर एक ने कहा–नही कुछ तो अवश्य है। तुम बात छिपा रही हो किन्तु बिना कहे काम न चलेगा। हम मानने वाली नही। नि सकोच होकर कहो असल बात क्या है? तुम और सगम दु खी क्यो दिखाई देते है?

धन्ना ने कहा– मैं झूठ बोलना तो जानती नही इसलिये आपसे प्रार्थना करती हू कि आप कुछ न पूछिये।

झुड मे से आवाज आई–'नही कहना पडेगा कहना पडेगा।

धन्ना ने यह आग्रह देख कर कहा–तो सुन लीजिये। आज यह बालक एक ऐसी वस्तु मागता है, जो मेरे घर मे नहीं है। मै इसे वह चीज कैसे दू, इस दु ख से मुझे रोना आ गया और मुझे रोती देख सगम भी रो उठा।

एक सेठानी– तुम्हारा बालक किसी वस्तु के लिये रोवे और हम पडौसी देखा करे तो हम पडौसी किस काम के? बेचारा बालक अधिक से अधिक खाने को मागता होगा और क्या मागेगा?

धन्ना– कुछ भी मागे परन्तु वही वस्तु तो दी जा सकती है जो घर मे हो। जो वस्तु घर मे है ही नही वह कहा से दी जाय?

सेठानी–आखिर बताओ तो सही सगम क्या मागता है?

बहुत कहने–सुनने पर धन्ना कहने लगी–यह आज आप लोगो के घर पर बालको को खीर खाते देख आया है। सो यहा आकर मुझसे खीर मागने लगा है। मेरे घर छाछ भी नही है तो खीर कहा से दू?

सेठानी–बस इतनी सी बात है। जरा–सी बात के लिये तुमने बालक को रुलाया और स्वय रोई। मेरे घर अब भी बहुत सी खीर रखी है। चलो मै खीर देती दू।

धन्ना—आप सबकी दया तो मुझ पर खूब हे लेकिन में पहले ही आपसे प्रार्थना कर चुकी हू कि मे या मेरा बालक पराये घर का अन्न नही खाते। घर मे जो कुछ होता है वही खाकर सन्तोष कर लेते हैं। इसलिए में आपकी सहानुभूति के लिये तो आभारी हू, मगर खीर नही ले सकती। सगम भी अब समझ गया है ओर कहता हे कि अब में खीर नहीं मागूगा। मुझे अपने पहले समय का स्मरण हो आया इसी कारण दु ख हुआ।

धन्ना का उत्तर सुनकर दूसरी सेठानी कहने लगी— धन्ना ठीक कहती है। एक दिन दूसरे के यहा अन्न खाने मे भला नही होता। चलो धन्ना, मे तुम्हे दूध चावल आदि सामग्री देती हू सो अपने ही घर मे खीर बनालो।

धन्ना—आप मुझ पर यह बोझ मत डालिये। मागना ही होता तो खीर ही नही ले लेती?

तब तीसरी सेठानी ने कहा— धन्ना ठीक ही तो कह रही हे। वास्तव मे आपका देना, देना नही, दूसरे की इज्जत लेना है। धन्ना जाकर तुम्हारे घर पर खडी रहे ओर तुम इसे दो। लोग देखे कि सेठानी ने दिया। यह तो देना नही आबरू लेना हे। धन्ना गरीबिनी हे तो क्या हुआ? आखिर वह अपनी इज्जत समझती है और उसकी रक्षा करने का पूरा ध्यान रखती हे। यदि आपको देना ही हे तो घर से लाकर क्यो नहीं दे जाती।

ठीक हे ठीक हे— कहती हुई सेठानी दौडी गई ओर अपने—अपने घर मे से कोई दूध कोई चावल ओर कोई शक्कर लेकर धन्ना के घर आ गई। इस प्रकार खीर की सामग्री इकट्ठी हो गई।

आजकल अधिकाश दानी दानी बनने के साथ मानी भी बनते हैं। मान दान की पवित्रता को भग कर देता हे। किसी की इज्जत भी रह जाय ओर दु ख भी दूर हो जाय इस प्रकार देने वाले विरले ही मिलेगे। वास्तव मे सच्चा दाता वह है, जो देने वाले की आबरू नही लेता ओर फिर भी वह उसे दे देता हे।

सेठानियो ने खीर की साम्रगी धन्ना के सामने रख दी। धन्ना उनसे कहने लगी—आपने मेरे सिर पर बडा बोझ लाद दिया।

मित्रो! बारहवा अतिथि—सविभाग व्रत किस प्रकार पालन किया जाता हे यह देखो। बाजार के दोने चाटने वाले लोग बारहवे व्रत का पालन नही कर सकते। कई लोग समझते हे कि बाजार से सीधा लेकर खाने म नही होता मगर उन्हे पता नही हे कि बाजारू चीजे किस प्रकार भ्रष्ट ` वाली होती हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी वे त्याज्य ह ओर धर्म की दृष्टि

से भी। उन धर्म भष्ट करने वाली वस्तुओ को खाकर कोई अपनी क्रिया कैसे शुद्ध रख सकता है।

खीर की आई हुई सामग्री को स्वीकार करने के सिवाय धन्ना के पास और कोई मार्ग नही था। उसने कृतज्ञता के साथ वह सामग्री स्वीकार कर ली। फिर उसने खीर बनाई। सगम के लिये परोस कर उसे देती हुई कहने लगी– आज तेरे कारण मैने अपने जीवन की एक कठोर मर्यादा का त्याग किया है। आज सेठानियो के उपकार का बोझ मेरे सिर पर आ गया है। ले अब तू खा। मुझे अत्यन्त आवश्यक काम से बाहर जाना है। जब तक तू खाता है मै काम निपटा कर जल्दी आती हू।

सगम खाने के लिये बैठा। खीर का स्वभाव कुछ देर तक गर्म रहने का होता है। सगम खीर के ठण्डा होने की प्रतीक्षा कर रहा था और साथ ही अपनी माता के धीरज की तथा सेठानियो की सहृदयता की मन ही मन बडाई कर रहा था। खीर की थाली उसके सामने रखी थी।

5. अपूर्व दान

सगम के लिये खीर अपूर्व वस्तु है। उसे खीर के लिये रोना पडा हे मा को रुलाना पडा हे। माता ने अपनी टेक रख कर सेठानियो की कृपा से प्राप्त हुई सामग्री द्वारा खीर तैयार की हे।

धन्ना ओर सगम ने खीर के लिये आपा नहीं गवाया है। सम्मानपूर्वक सामग्री घर पर आई हे, तव उसने स्वीकार की हे। टेक पर अडे रहने वाले की टेक पूरी होती ही है, लेकिन सन्तोष रखना आवश्यक हे। धर्म ओर परमात्मा पर जिसे विश्वास हो वही अपनी टेक पर टिका रह सकता हे।

सगम को क्या पता है कि आज उसका भाग्य खुलने वाला हे? वह सोच रहा हे कि कव खीर ठण्डी हो और कब इसे पेट मे सभाल कर रख लू। वह लालचभरी निगाह से खीर की तरफ देख रहा है ओर देख–देख कर प्रसन्न हो रहा है। उसे आज अपूर्व वस्तु जो मिली है।

सगम ने खीर की ओर से दृष्टि हटाकर सामने की ओर देखा तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। उसने देखा– एक महापुरुष मुनिराज उसके घर की ओर धीरे–धीरे कदम बढाते हुए चले आ रहे हें। मुनिराज की दृष्टि नीचे की ओर है–ईर्यासमिति का पालन करते हुए चल रहे हैं। काया उनकी क्षीण है पर तप के अद्भुत तेज से उनके चेहरे पर एक अनोखी आभा विराजमान है। विस्तीर्ण ललाट हे। सोम्य वदन हे। इनके नेत्रो मे सयम की शाति है। धीमी चाल से मुनिराज सगम की ओर ही बढे चले आ रहे हें।

मन मरा माया मरी मर–मर जाय शरीर।
आशा तृष्णा ना मरी, कह गये दास कबीर।।

तृष्णा को जीत लेना आसान काम नहीं हे बहुत कठिन हे। परन्तु इन मुनि ने तृष्णा को जीत लिया हे। इनकी पहली शूरवीरता तो यही हे। राजगृह जेसे विशाल नगर ओर प्रतापशाली मगध की राजधानी मे धनवाना

की कमी नही है। और ऐसे मुनिराज का अपने प्रागण मे पदार्पण देख कर कौन कृतार्थ नही हो जाता? ऐसे–ऐसे सम्पन्न और भावनाशील धनवानो के घर को छोडकर सगम के घर आना जिसके यहा एक बार खीर बनाने की भी सामग्री नही है यह मुनि की दूसरी शूरवीरता है।

सगम वन मे रह कर जो भावना भाता था, वह भावना कितनी शक्तिशाली होगी उसमे कितना तीव्र आकर्षण होगा, इस बात पर जरा विचार कीजिये। सगम जगल मे बछडे चराता था। उसने नगर का झूठ–कपट नही सीखा और न पराये घर के अन्न पर अपना गुजर किया है। वास्तव मे धर्म स्वतन्त्र के लिये ही है परतन्त्र के लिये नही। जो जितनी मात्रा मे स्वतन्त्र है वह उतनी ही मात्रा मे धर्म का पालन कर सकता है। जो शक्ति स्वतन्त्र होने मे है परतन्त्र होने मे नही। सगम की पवित्र भावना और स्वतन्त्रता की शक्ति ही मुनि को अपनी ओर खीच कर लिये जा रही है।

सगम बैठा–बैठा खीर ठडी कर रहा था। उसे दान का अपूर्व अवसर अनायास ही मिल गया। उसने मुनि को आते देखा। देखकर वह खडा हो गया और हाथ जोड कर कहने लगा– महाराज भले पधारे। आपने अनुग्रह करके मेरे यहा पधार कर मुझे मनवाछित फल दिया। आज का दिन धन्य है कि चलता–फिरता कल्पवृक्ष मेरे घर आया। आज मेरी भाग्यदशा अनुकूल हुई है जो मेरे घर पारस प्रकट हुआ।

मुनि को देख कर सगम का हृदय प्रसन्नता से पूर्ण हो गया। उसका धनस्नेह जाग उठा। मुनि पर उसकी प्रीति उमड पडी।

सगम नगर के गन्दे वातावरण मे नही पला है। उसने वन के स्वच्छ वातावरण मे सासे ली है। पराये घर से आई हुई सामग्री से खीर बनी है आज पहली बार ही उसे खीर मिल रही है फिर भी मुनि के घर आने पर उसे हर्ष हो रहा है। यह औरो के लिये आश्चर्य की बात हो सकती है क्योकि साधारण तौर पर यह समझा जाता है कि दरिद के लिये दान देना दुष्कर है। लेकिन गरीब की आत्मा मे शुद्ध भावना की जो समृद्धि होती है वह अमीर की आत्मा मे शायद ही कही पाई जाती है। प्राय अमीर की आत्मा दरिद्र होती है और दरिद्र की आत्मा अमीर होती है।

जब कोई सुपात्र घर पर आता है तो भक्त या दातार की भावना यह नही होती कि यह रोटियो के लिये मेरे यहा आये है। वह समझता है कि ये मेरा भाग्य जगाने के लिये आये। यही कारण है कि सुपात्र को पाकर वह इसी प्रकार हर्षित होता है जैसे किसी अद्भुत वस्तु को देख कर बालक।

प्रश्न हो सकता है कि जगल मे अपना अधिक समय विताने वाले और पशुओ की सगति मे रहने वाले सगम मे यह सभ्यता कहा से आई? इस प्रश्न का उत्तर एक कथा द्वारा समझना चाहिये।

अहमदाबाद मे एक बादशाह राज्य करता था। उसके सेनापति ने बहुत-सी लडाइया जीती थी। अतएव बादशाह उस पर बहुत प्रसन्न रहता था।

एक बार वही सेनापति लडाई के लिए कच्छ की ओर गया। उसने मोरवी के आस-पास कहीं से आगे कूच किया और रेतीला प्रदेश पार किया। वह किसी हरे-भरे स्थान पर पहुचा। सेनापति का घोडा बाध दिया गया। सेनापति अपने खेमे मे सो गया। सेना का पडाव वही था। सैनिको ने जब देखा कि सेनापति सो गया है तो उन्होने अपने घोडे पास के ज्वार के खेत मे छोड दिये। भूखे घोडे ज्वार के खेत मे पिल पडे। अचानक सेनापति की नीद खुल गई। उसने घोडो को खेत मे चरते देखकर सैनिको से कहा- क्यो इस प्रकार गरीबो को सताते हो? क्या तुम नही जानते कि एक ही रात मे बेचारे गरीबो की साल भर की रोटी बर्बाद हो जाती है? तुम्हे उस परवरदिगार का जरा भी खौफ नही है?

सैनिको ने कहा- हुजूर, हम तो परवरदिगार को समझते है पर ये तीन दिन के भूखे घोडे नही समझते हैं।

सेनापति- झूठ बोलते हो। पहले तुम्हारे दिल मे बेईमानी आई होगी तभी घोडो के दिल मे आई है। अगर ऐसा नही है तो देखो मेरा घोडा क्यो नही जाता है?

यह कर सेनापति ने अपना घोडा खोल दिया। सैनिको ने उस घोडे को हरा खेत दिखाकर बहुत ललचाया परन्तु घोडा वहा से नही हटा। यह देखकर सैनिक समझ गये कि वास्तव मे हमारा ही ईमान बिगडा है। उसके बाद ही घोडो का ईमान बिगडा।

मतलब यह है कि जब तक असाधारण बने हुए व्यक्ति की नीयत अच्छी है तब तक उसके आश्रित रहने वालो की नीयत भी अच्छी रहती है। जिसकी माता धन्ना ऐसी है कि पराये खाने-पीने को हेय समझती है उसका पुत्र वन मे रहता हुआ भी अगर ऐसी ऊची सभ्यता सीख सका और उत्कृष्ट भावना वाला बन सका तो आश्चर्य की बात ही क्या है?

मुनिराज को अपने घर की ओर आते देख कर सगम खडा हो गया। सोचने लगा- किसी दूसरे दिन मुनि मेरे यहा पधारते तो ऐसी सामग्री

कहा थी जो इनको बहराता। आज कौन जाने किस पकार के अदृष्ट की पेरणा से मुझे खीर खाने की बलवती इच्छा हुई और सेठानियो ने खीर की सामग्री लाकर दे दी। मेरा बडा भाग्य है कि मैने अभी तक खीर नही खाई है। ऐसी सामग्री का होना और मुनि का आना एक अपूर्व सयोग है। वास्तव मे मेरा भाग्य बहुत सराहनीय है।

सगम के दिल मे क्षण भर के लिए भी यह विचार उत्पन्न नही हुआ कि यह अपूर्व खीर मुनि को दे दूगा तो मैं क्या खाऊगा? उसने यह भी नही सोचा कि कही माता खीर दे देने से नाराज तो नही होगी?

इसी समय मुनि उसके द्वार पर पधार गये। सगम का हृदय हर्ष से उछलने लगा। भक्तिभाव से भरा हुआ सगम थाल हाथ मे लिए मुनि के समीप आया और विनीत भाव से कहने लगा–महाराज, लीजिए। कृपा कीजिये।

सगम का उत्साह और भक्तिभाव देखकर मुनि को सतोष हुआ। वे सोचने लगे–मैं सादे भोजन के लिए यहा आया था। सोचा था कि गरीब के घर सादा आहार मिल जायेगा। लेकिन यहा भी वही खीर है। पर इस गरीब बालक की भावना इतनी ऊची है कि शायद ही किसी सेठ की भी ऐसी हो। मै अगर खीर नही लेता हू तो बालक को घोर निराशा होगी और बेचारा दान के फल से भी प्राय वचित रह जायेगा। इसे इस दान का जो फल मिलने वाला है उसमे अन्तराय पड जाएगा।

मुनि को किसी प्रकार का लालच नही था। लालच होता तो साहुकारो के घर छोडकर वे इस गरीब के घर आते ही क्यो? लेकिन दान के फल मे अन्तराय न पडे, इस उद्देश्य से मुनि ने आहार लेना अस्वीकार नही किया। उन्होने अपना पात्र बालक के सामने रख दिया।

खीर नाम की चीज बालक सगम ने अपनी जिन्दगी मे पहले कभी नही चखी थी। आज वही खीर उसे प्राप्त हुई है, बडी कठनाई से, मा–बेटे के रोने के बाद और सेठानियो की दयालुता से। फिर भी सगम को खीर खाने का लोभ नही है। वह यही सोचता हे– आज सौभाग्य से इतने अच्छे पात्र आए तो देने से चूकना नही चाहिए।

मुनि का स्वभाव और आचार होता है कि वे दातार से कहते हैं कि थोडा दे।

देता भावे भावना लेता करे सतोष।
कहे वीर सुण गोयमा! दोनो जासी मोख।।

मुनि थोडी दो थोडी दो कहते रहे लेकिन सगम ने थाली की सारी खीर उनके पात्र मे डाल दी। सगम के हाथ मे खाली थाली ही शेष रह गई।

उस समय सगम का हृदय हर्ष से विभोर हो गया। उसके चेहरे पर आनन्द का स्मित खेल रहा था मानो उसे अचानक तीन लोक की सम्पदा प्राप्त हो गई है।

खीर लेकर मुनि चलने लगे। सगम गुणगान करता हुआ सात–आठ कदम उन्हे पहुचाने गया। अन्त मे मुनि की भावभरी वन्दना करके वह लोट आया और मुनि जिस ओर से आये थे, उसी ओर मन्द गति से रवाना हुए।

सगम ने किस अपूर्व आह्लाद के साथ मुनि को आहार दिया। किस परसन्नता के साथ उन्हे पहुचाने गया। लौटने के बाद मे भी उसके हृदय मे अपूर्व प्रीति है। फिर भी खेद है कि कई लोग उसे मिथ्यातत्वी कहने से नही चूकते।

सगम लौट कर भोजन करने की जगह बैठ गया और थाली मे लगी हुई खीर चाटने लगा।

इतने मे धन्ना अपना काम समाप्त करके लौट आई। सगम को थाली चाटते देख कर उसने सोचा कि इसने खीर खा ली है। माता के स्वभाव के अनुसार धन्ना ने और खीर लेने के लिये कहा। सगम तो भूखा ही बैठा था। उसने खीर ले ली और खाकर तृप्त हुआ।

यो तो सगम छोटा बालक ही था फिर भी उसमे बडी गभीरता थी। अपनी थाली की तमाम खीर मुनि को दान करके उसने अपनी माता से भी इस घटना का जिक्र न किया। गुलिश्ता मे कहा है– अगर तू दाहिने हाथ से दे तो बाए हाथ को भी मालूम न होने दे। तात्पर्य यह है कि दान देकर ढिढोरा पीटना उचित नही है। जो लोग अपने दान का ढिढोरा पीटते है वे दान के असली फल से वचित हो जाते है। अतएव न तो दान की प्रसिद्धि चाहो और न दान देकर अभिमान करो।

सगम की यह गभीरता और उत्कृष्टता प्रत्येक दाता के लिये अनुकरणीय है। उसके यही गुण मुनि को अपनी ओर आकर्षित करने मे समर्थ हो सके थे। जिनमे ये गुण आ जाएगे उन्हे कभी महापुरुष की भेट हो जाएगी और उनके कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

सगम के पडौस मे सेठानिया रहती थी। वे सभी सम्पन्न ओर ... [illegible] थी, भक्ति वाली थी। उस समय के प्राय सभी लोग अतिथि सत्कार [illegible] बहुत अच्छा समझते थे और जब कोई अतिथि द्वार पर आ जाता तो बुरा [illegible] मानते थे वरन् अपना सौभाग्य समझते थे। उस समय अतिथि किसी के से खाली हाथ नही लौटता था। सगम की पडौस वाली सेठानिया भी [illegible] आहार दान देना चाहती थी।

सगम के घर पर मुनि का आना और सगम का उन्हे खीर दान देना सेठानियो ने देखा था। सगम को यह सुयोग मिला और हमे न मिला इस विचार से उन्हे ईर्ष्या न हुई। जिन सेठानियो ने धन्ना को खीर की सामग्री दी थी वे सब एकत्र होकर आपस मे कहने लगी–

पहली सेठानी– आज धन्ना का भाग्य धन्य हुआ कि उसके घर मुनि आये। और मुनि भी मासखमण के पारणा वाले। ऐसे मुनि के चरण मिलने कठिन है। वे मुनि दया के भडार थे जो बडी–बडी हवेलियो और बडे–बडे दातारो को छोड कर इस गरीबिनी के घर आये।'

दूसरी सेठानी– धन्ना भाग्यशालिनी है मगर मै तो उसके बालक को धन्य कहती हू। वह जगल मे बछडे चराने जाता है। वहा की पवित्र वायु से उसकी भावनाए भी न जाने कितनी पवित्र हो गई हैं। वह मुनि को आते देख उसी पकार उनके सामने लपका जैसे अपने बालक किसी अच्छी वस्तु को देख कर उसके लिए दौडते हैं। उसने भक्ति के साथ मुनि की वन्दना की नमस्कार किया और अत्यन्त भक्तिभावपूर्वक खीर बहराई।'

तीसरी सेठानी–'सगम की भावना वास्तव मे बहुत ऊची है। मैं कई बार बडी मनुहार करके उसे कोई चीज देना चाहती हू, लेकिन वह कभी नही लेता। वह हाथ फैलाने मे ही शर्माता है। उससे कारण पूछती हू तो कहने लगता है– मेरी मा की यही शिक्षा है कि कभी किसी के आगे हाथ न फैलाना। एक बार मैंने उससे कहा– तू ले ले और यहा खा ले। मा से कहने कौन जाता हे? उसे पता ही नही चलने पायेगा। तब उसने कहा–मैं अपनी मा से कपट नही करता। मैं मा से कोई बात नही छिपाता। सभी बात मा से कह देता हू।

बालक को किस प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिये यह बात सगम को देख कर विदित हो जाती है। आज के बालको को अनेक विषयो का गम्भीर और बारीक ज्ञान भले ही दिया जाता हो मगर जीवन को उन्नत बनाने वाली बाते कौन सिखाता है? जो बाते मामूली ओर छोटी समझी जाती हैं उनका जीवन–विकास मे बहुत महत्व होता है। उनकी ओर उपेक्षाभाव रखने से शिक्षा का महत्व घट जाता हे या मारा जाता हे। वास्तव मे छोटी–छोटी बातो पर भी ध्यान दिये बिना जीवन ऊचा नही होता।

मानलाल नामक एक सज्जन ने कहा है –

मेरा घर ऊचा अमीराना है। मेरे घर के समीप ही एक पुराना टूटा–फूटा मकान है। वह मकान बहुत अश मे तो गिर गया हे और कुछ अश

मे वना हुआ है। परन्तु है वह भी टूटा–फूटा। उस टूटे मकान मे एक विधवा अपने वालको सहित आकर रही। उसके चार लडके ओर दो लडकिया थीं। इन वालको मे से दस वर्ष से अधिक की उम्र किसी की न थी।

उस विधवा से मैंने उसका वृत्तान्त पूछा तो वह कहने लगी– 'मेरे पति 10 रु मासिक के नोकर थे। इन दस रुपयो मे मेरा घर का गुजर न होता था इसलिये मे भी उद्योग द्वारा कुछ कमा कर इन्हीं रुपयो मे मिलाती तव काम चलता। कुछ दिन हुए मेरे पति मर गये। वे दस रूपये भी अव नहीं मिलते। अव अपने ओर इन वालको के भरण–पोषण का भार मुझ पर ही पडा। पहले 1 रू मासिक किराये के मकान मे रहती थी परन्तु वह किराया कहा से दू? इसलिये अव तीन आना मासिक किराये पर इस मकान मे रहने आई हू।'

इस विधवा के विषय मे मगनलाल लिखते हैं कि वह बडी उद्योगिनी थी। उसने उस टूटे–फूटे मकान को भी साफ–सुथरा कर दिया। वह मेरे तथा पडोस के और घरो मे काम करने आया करती और उस मजूरी से ही अपना निर्वाह करती। वह कभी विश्राम भी लेती थी या नही यह नही कह सकता। वह प्रामाणिक ऐसी थी कि मेरे यहा से जो पीसना ले जाती उसमे एक चुटकी आटा भी कम न होता। इसके सिवाय मेरी स्त्री उससे जिस काम को जेसा करने के लिये कहती, वह वैसा ही कर देती थी। बोलने मे वह बडी मीठी थी। बाते भी बडी अच्छी तरह किया करती थी।

एक दिन मेरी स्त्री ने उससे कुछ देर तक बेठ कर बाते करने को कहा। उस विधवा ने–जिसका नाम गगा–गोदावरी था– उत्तर दिया–यदि आपका कोई काम हो, तब तो मै सहर्ष बैठने को तैयार हू लेकिन बिना काम बेठ कर बाते करने का मुझे अवकाश नहीं हे। कृपा करके अब आप बिना काम बैठने के लिये मुझे न कहा कीजिये।

गगा–गोदावरी के इस उत्तर से व उसके न बेठने से मेरी स्त्री का मुह चढ गया अर्थात् वह क्रुद्ध हो गई। मैंने अपनी स्त्री के मुह चढे होने का कारण पूछा, तव उसने गगा–गोदावरी का घमण्ड वतलाते हुए उसके न वेठने का हाल मुझसे कहा। मैने अपने स्त्री को समझाया कि उसके सिर छह बालको के पालन–पोषण का भार हे। यदि वह इसी प्रकार घर–घर बिना काम बैठती फिरे तो उसके बालक केसे पले?

मेरे समझाने पर मेरी स्त्री का क्रोध शात हुआ ओर वह गगा–गोदावरी कृपा रखने लगी।

गगा–गोदावरी को हम या दूसरे जो मजूरी देते, वह उतनी ही ले लेती। इस विषय मे उसने कभी झगडा नही किया। वह किसी के सामने न देख कर अपना ध्यान काम मे ही रखती। घर का सब काम वह हाथ से करती। बच्चो के कपडे हाथ से धोकर साफ कर देती। उसके बालक सदा साफ कपडे पहिने रहते। लडको और लडकियो से भी वह कुछ न कुछ काम लेती।

एक दिन लगभग 10 बजे रात को एकाएक मेरी स्त्री का पेट दुखने लगा। मेरी स्त्री गर्भवती थी पसव का समय अभी दूर था इससे मै घबराया। मै चिन्तित हुआ कि दाई का घर दूर है। अब इस समय मै किसे बुलाऊ? अमीर घर के पडौसी इस समय क्यो आने लगे थे? इतने मे मुझे गगा–गोदावरी की याद आई। मैं दौडा हुआ उसके घर गया। उसे मैने बाहर से ही आवाज दी। गगा–गोदावरी सोई न थी। इसलिये उसने मुझे घर मे चले आने का कहा। मैने घर मे जाकर देखा कि घर मे चिराग टिमटिमा रहा है और उसी के पकाश मे पुस्तक लिये गगा–गोदावरी अपने बालको को शिक्षा दे रही है। उसका घर मैने बडा स्वच्छ देखा।

मैने इस समय आने का कारण गगा–गोदावरी को कह सुनाया। गगा–गोदावरी उसी समय अपने बालको को सुलाकर मेरे घर आई। उसने आकर तेल आदि गरम करके मेरी स्त्री को सेक किया, जिससे वह उसी समय ठीक हो गई। मेरी स्त्री के ठीक होते ही गगा–गोदावरी अपने घर चल दी। वह मेरे घर न सोई किन्तु अपने घर ही जाकर सोई।

मे उसके बालको से प्रेम करने लगा और अपने बालको के साथ उनके भी पढने का इन्तजाम कर दिया। उसके बालक मेरे बालको के साथ पढते परन्तु मेरे बालको के पास कोई अच्छी चीज देख कर वे कभी न ललचाते। एक दिन मेरी स्त्री ने कुछ मिठाई बालको को बाटने के लिये दी। मै गगा–गोदावरी के लडको को देने लगा परन्तु उन्होने न ली। मेरे पूछने पर उन्होने कहा कि हमारी मा ने कहा है कि पराये घर जाओ तो कोई चीज न लेना। मैने कहा– तुम्हारी मा से कहने कोन जाता है? उत्तर मिला–हमारी मा हम से दिन भर का काम पूछती हे तब हमी सब बतलाते हैं। यह कहते–कहते ये सब लडके चल दिये। मेने अपने हृदय से कहा कि मैं इन्हे क्या कहू– देवपुत्र या मनुष्यपुत्र? गगा–गोदावरी की बडी लडकी ने भी यही उत्तर दिया। छोटी लडकी 2–3 वर्ष की ही थी। मे उसे मिठाई देने लगा तो वह मिठाई की तरफ देखे तो जरूर परन्तु हाथ न फेलावे। मेंने उससे पूछा– तू

क्यो नही लेती है? तब उसने उत्तर दिया कि मा लडेगी। मैंने पूछा–क्या वह मारती है? उसने कहा मारती तो कभी नही परन्तु जब और जिससे नाराज होती है, तब उससे बोलती नही है। यह न बोलना हमे बहुत दु खदायी मालूम होता है।

उन बालको का सतोष देखकर मेरा प्रेम उन पर बहुत बढ गया। धीरे धीरे इस गगा–गोदावरी ने अपने दु ख के दिन बिता दिये। बडा लडका चतुर निकला। उसे पहले ही पहल 30 रू की नोकरी लगी। परन्तु उसने नही की। थोडे दिनो मे वह 125 रू मासिक पर नौकर हो गया। उसने अपने दूसरे भाई को भी काम पर लगा लिया और शेष दो भाइयो को भी काम सिखाने लगा।

वह चिन्ता मिट ही पाई थी कि उन पर एक चिन्ता और आ खडी हुई। बडी बहिन ब्याहने लायक हो गई थी। पास पैसा न था जो ब्याह करे। मैंने उस लडकी से अपने लडके का विवाह करना विचारा। मेरे विचारो को सुन कर मेरी स्त्री इस बात का विरोध करने लगी और कहने लगी कि क्या दूसरे के घर का आटा पीसने वाली की लडकी लाओगे? मेरी स्त्री समझदार थी। मैने उसे समझाया तो वह समझ गई और उसने विरोध करना छोड दिया। वह जान गई कि रत्न देखना चाहिये न कि अगूठी।

गगा–गोदावरी को मेरी बात जच गई। मैंने सादगी के साथ अपने लडके का विवाह उसकी लडकी से कर लिया। बहू जब ब्याह कर मेरे घर आई, तब थोडे दिन तो उसे सास तथा अडौसी–पडौसी की बाते सुननी पडी परन्तु थोडे ही दिनो मे वे बन्द हो गई। ग्राम मे इस विवाह से मेरी भी निन्दा होने लगी परन्तु निन्दा करने वालो का मुख भी थोडे ही दिनो मे बन्द हो गया। उसकी कार्यदक्षता ओर पारस्परिक प्रेम से सब चकित हो गये। थोडे ही दिनो मे उस बहू ने मेरे घर को स्वर्ग सा बना दिया।

मैं जब गगा–गोदावरी को उसके दु ख की बात सुन कर उन्हे सहन करने के लिये धन्यवाद देता तो वह मुझे धन्यवाद देकर कहती–मुझ गरीबिनी की लडकी आपने लेकर मुझे दु खमुक्त किया।

अब वह विधवा मेरी सगी बहिन बन गई है। यदि भारत मे घर–घर ऐसी स्त्रिया निकले अपने दु ख के दिन इस तरह पार करे बालको को ऐसी शिक्षा दे ओर इतनी उद्योगिनी हो तो भारत का कल्याण होने मे देर न लगे।

आज के लोग अपने बालको को खाने–पहिनने का ढोग तो खूब सिखाते परन्तु सादगी नही सिखाते।

मगनलाल की लिखी हुई बात ऐतिहासिक रूप लिये हुए है। मै जो सगम की कथा कह रहा हू वह प्राचीन है। लेकिन दोनो की घटनाओ को मिलाओ तो मालूम हो कि धन्ना की शिक्षा कैसे अच्छी थी।

धन्ना की पडोसिने सगम की प्रशसा करती हुई कहती है कि यह सगम बालक नही अपना शिक्षक है। इसे देख कर हमे समझना चाहिये कि हम अपने बालको को ऐसा बनावे।

वास्तव मे पुण्यात्मापन का लक्षण सादगी मे है, लालच मे नही। जिसकी रग–रग मे सादगी का वास होगा उसी के दिल मे दया का वास होगा। सादगी सीखकर दया का पालन करते हुए पवित्र जीवन बिताने मे ही वास्तविक कल्याण है।

बालक सगम को उसकी माता ने ऐसी सुशिक्षा दी थी कि वह सतोषी सादा और गभीर था। अगर कोई कभी उसे कुछ देने लगता तो वह कभी स्वीकार नही करता था।

दु ख मे दिन निकालते हुए सादे भोजन पर सतोष करना और पराये मीठे भोजन पर न ललचाना कोई साधारण बात नही है।

इधर बालक सगम खीर खा रहा है धन्ना पास ही बैठी हुई है और उधर सेठानिया बालक की चर्चा कर रही है। धन्ना को नही मालूम कि मेरे घर क्या घटना घटी है?

सगम को खीर खाते देखकर धन्ना सोचने लगी– मेरा बालक रोज भूखा रहता जान पडता है। अगर इसे आज के समान प्रतिदिन स्वादिष्ट भोजन मिले तो यह आज के बराबर ही खाया करे। मगर रुचिकर भोजन न मिलने से यह नित्य ही भूखा रह जाता है और इसी से दुबला दिखाई देता है। हाय अभागिन धन्ना! तू अपने इकलौते बेटे को पेटभर भोजन देने मे भी समर्थ नही है।

6 . देह त्याग

कई लोग कहते है–सगम को अपनी माता की नजर लग गई थी। वास्तव मे जिन लोगो को नजर और भूत का बहम होता है उन्हे अपनी छाया मे भी भूत नजर आता है। मेरी जिन्दगी मे, मेरा बालकपन इसी बहम मे बीता। बाल्यावस्था के वह सस्कार बारीक–बारीक रूप मे आज भी मुझ मे विद्यमान है। बालको मे इसी प्रकार के सस्कार हमारे यहा डाले जाते हैं।

एक बार मैं जब अहमदनगर मे था तब मुझे बुखार आने लगा। उस समय मेरी आध्यात्मिक वृत्ति आज से कुछ अच्छी थी। यकायक मेरे शरीर मे व्याधि हो गई इस कारण आध्यात्मिक क्रिया की साधना मे कुछ कमी हो गई। अहमदनगर से मै घोडनदी गया। ज्वर ने वहा भी पीछा न छोडा। वहा एक वृद्धा कहने लगी– महाराज व्याख्यान अच्छा देते हैं इससे अहमदनगर की स्त्रियो की नजर लग गई है। मतलब यह है कि बहम के भूत बहुत चला करते हैं। ऐसी बहमी लोगो ने इस कथा मे नजर लगने की बात घुसेड दी।

मेस्मेरिज्म मे दृष्टि की साधना है। पॉवर डालने वाले की पॉवर (शक्ति) जिस पर असर कर जाती है वह उससे जैसा चाहे वैसा काम करा सकता है। लेकिन अगर कोई दृढता धारण कर ले ओर कहे कि तुम्हारी शक्ति मुझ पर नही चल सकती तो वास्तव मे ही उस पर शक्ति असर नही करेगी।

अब विचार कीजिए कि अपने ऊपर मेस्मेरिज्म की शक्ति का असर होने देना अच्छा है या न होने देना अच्छा हे?

'न होने देना।

आप यदि दृढ बन जावे कि हमारे सामने भय नही आ सकता मे निर्भय हू, कोई मेरा कुछ नही बिगाड सकता तो वास्तव मे ही कोई भूत–पिशाच आपका कुछ भी नहीं बिगाड सकेगा। खास कर श्रावक को तो अरिहन्त के वचन पर विश्वास करके ऐसे भयो को पास भी नही फटकने देना चाहिये।

राक्षस–भूत पिशाच डाकिनी, शाकिनी भय न आवे नेरो।
दृष्टि मुष्टि छल छिद्र न लागे, जो प्रभु! नाम भजे तेरो।।

राक्षस भूत डाकिनी और शाकिनी अगर है तो क्या भगवान का नाम सत्य नही है। भगवान के नाम मे कोई शक्ति है या नही? आप इस स्तुति को सच्ची समझ कर गाते है या झूठी समझ कर? अगर सच्ची समझ कर गाते है तो फिर भय क्यो खाते है। महावीर के पहले के भक्त साक्षात् यक्ष से भी नही डरे और आजकल के लोग यक्ष के नाम से ही डरते है।

सगम को नजर लग गई थी इस कथन का आधार यही है कि उसे विशूचिका की बीमारी हो गई थी। मगर ऐसा कहने वालो ने आयुर्वेद का तनिक भी अध्ययन नही किया जान पडता है। आयुर्वेद का थोडा सा ज्ञान रखने वाला भी ऐसा नही करेगा। सगम की विशूचिका बीमारी का कारण नजर लगना नही किन्तु और ही था। सगम हमेशा हल्का खाना खाने वाला ही था और इस बार उसने खीर खाई थी। कहा हल्की राबडी और कहा बडी–बडी सेठानियो के घर से आये हुए सामान की मेवा–मिष्टान्न पडी हुई खीर! वेदनीय कर्म का उदय तो उसके हुआ ही। इस कारण वह खीर सगम को हजम न हो सकी। यह तो निर्विवाद बात है कि रूखा–सूखा खाने वाले को गरिष्ठ भोजन नही पचता है।

अब तक तर्क यह किया जा सकता है कि यदि वह दान अच्छा था तो और अवसरो की तरह उस अवसर पर सोने की वर्षा क्यो न हुई? और मुनि के चरण मगलकारी कैसे हुए जबकि मुनि को दान देने के पश्चात् सगम को मरणात्मक व्याधि हो गई।

जो लोग माता पर नजर लगाने का दोषारोपण करते हैं वे मुनि पर भी दोषारोपण कर सकते है कि मुनि के आने से ही सगम को विशूचिका की व्याधि हुई और परिणाम यह हुआ कि उसे प्राण त्यागने पडे! जो लोग माता के लिए नही चूके वे मुनि के लिए क्यो चूकेगे?

दान का महत्व सुवर्ण–मुहरो की वर्षा मे नही है। देवता तीन ज्ञान के धनी होते है। सगम के भाग्य का हाल उनसे छिपा नही रह सकता था। इसके अतिरिक्त देव किसी काम को किसी जगह करते है और किसी जगह नही भी करते। उदाहरणार्थ– भगवान महावीर के उपसर्ग कही देवो ने मिटाये और कही नही भी मिटाये है। चन्दनबाला पर वेश्या ने हाथ डाला तब तो [illegible] दी परन्तु जब उसकी मा जीभ खीच कर मरी थी तब [illegible] इन सब बातो पर विचार करने से विवेकशील पुरुष

इसी परिणाम पर पहुचता है कि द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव से जैसा अवसर देखा देवो ने वैसा ही किया होगा। दोनो हाथो से ताली बजती है, एक हाथ से नही। देवो के और दाता पुरुष के उपादान–निमित्त अनुकूल रूप से मिलते है तो सुवर्ण मोहरो की वर्षा होती है, अनूकूल कारणकलाप अगर न मिले और मोहरो की वर्षा न हो तो इसी कारण से दान मे कमी नही हो जाती।

दान का फल सगम के लिए आगामी भव मे परिवर्तित हो रहा है। इस गरीबी के भव मे देवता अगर सुवर्ण मोहरो की वर्षा सगम के घर कर देते तो वही मोहरे सुख के बदले दु ख का कारण बन जाती। वह इस भव के सस्कारो मे मोहरे नही सभाल सकता था और न उनसे यथोचित काम ही ले सकता था। सगम को पूर्णरूप से सुखी होना था और शरीर बदले बिना उसे पूरा आनन्द नही मिल सकता था। इस प्रकार सुवर्ण–मोहरो की वर्षा न होने के अनेक कारण हो सकते हैं।

धर्म का आचरण करते हुए तत्काल फल न पाने के कारण निराश होना उचित नही है। गीता मे कहा है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

अर्थात् तुम्हे अपना कर्त्तव्य बजाने का अधिकार है फल मागने का अधिकार नही है। फल की कामना सत्य के पाये को डिगाने वाली है।

लोग सवेरे दान करके शाम को दान का फल प्राप्त करना चाहते हें। मगर फल के लिए अधीर हो उठना उचित नही है। फल की कामना से प्रेरित होकर किया हुआ कार्य वास्तविक फलदायी नही होता। धर्म का तात्कालिक फल शाति मैत्रीभावना आत्मा की पवित्रता आदि है और वह तत्काल प्राप्त होता ही है। रहा परम्पराफल सो वह यथासमय मिले बिना नही रहता। फिर अधीरता की आवश्यकता ही क्या है?

साराश यह है कि सगम ने सरस और गरिष्ठ भोजन पहले कभी किया नही था इस कारण खीर को वह पचा नही सका और उसे विशूचिका हो गई। इस दशा मे भी वह मुनि का ही ध्यान करता रहा। उसने सोचा–आज ही मेरी मृत्यु का दिन है और आज ही मेरे यहा मुनिराज का पदार्पण हुआ। मृत्यु के समय मुझे परलोक यात्रा के लिए पाथेय मिल गया। इस प्रकार विचार कर सगम बहुत प्रसन्न हुआ।

सगम को सब प्रकार की ऋद्धि प्राप्त होनी थी। ऋद्धि के लिए योग्यता की भी आवश्यकता होती है। बालक कितने ही बडे श्रीमत का हो उसे बडे घोडे पर नही बिठलाया जाता है। इसी प्रकार देवो ने समझ लिया

कि सगम को जो ऋद्धि मिलनी है, उसके योग्य इस भव मे वह नही है। देवता निष्काम वृत्ति वाले की सेवा करते हैं सकाम वृत्ति वाले की नही। सगम यद्यपि निष्काम है फिर भी वह इस भव मे सुवर्ण मोहरो से सुखी नही बन सकता।

बालक सगम के लिये धन्ना ने बहुत दौड–धूप की, पडौस वालो ने भी कुछ उठा न रखा मगर अन्त मे वह शरीर त्याग कर चल बसा।

7 : पुनर्जन्म

उसी राजगृह नगर मे एक सेठ रहते थे। वह श्रीमत तो थे ही मगर ऐरो श्रीगन्त थे कि अनेक लखपति उनकी छत्र–छाया मे रहते थे। सेठ के गहा लक्ष्मी का भण्डार अखूट था। उनकी सम्पदा का अन्दाज लगाना भी कठिन था।

हा वह सेठ वास्तव मे लक्ष्मीपति थे। अक्षय भण्डार होने पर भी वह लक्ष्मी के दास नही स्वामी थे। रात दिन लक्ष्मी की बेगार करने वाले उसकी पूजा करने वाले और जीवन की सुख–समृद्धि को लक्ष्मी के चरणो मे ही समर्पित कर देने वाले लक्ष्मी के पीछे आत्मविस्मरण कर देने वाले धनाढय लक्ष्मी के स्वामी नही, दास होते हैं। जो अपने जीवन के वास्तविक कल्याण के लिए धन का उपयोग नही करते बल्कि लक्ष्मी के लिए जीवन समर्पित कर देते हे उन्हे लक्ष्मी का स्वामी नही कहा जा सकता। वे लक्ष्मी के दास हें। राजगृह के वह सेठ ऐसे नही थे। उन्होने लक्ष्मी के लिए कभी आत्मा को नही वेचा। झूठ–कपट या चिन्ता–कृपणता कभी नही की।

गृहस्थ कैसा होना चाहिए इस सबध मे तुकाराम कहते हैं–

आला ऊपकार साठी आवे घर जावे कुठी
लटी के वचन नही देइ उदासीन।
मिष्ठ वचन ओठी तुका मन भावे पोटी।

वे गृहस्थ वास्तव मे धन्य हैं जिनके हृदय मे दया का वास रहता हे और दु खी को देख कर अनुकम्पा उत्पन्न होती है। ऐसे मनुष्य समझते हें कि मे इस ससार मे केवल उपकार करने के लिये ही आया हू, मेरा घर तो स्वर्ग मे है। मुझे उस घर के लिए पुण्य का सचय करना चाहिए। वे गृहस्थ धन्य है जो अपने यहा आए हुए को निराश नही करते और फिर भी अभियान से दूर रहते है। वे गृहस्थ धन्य है जो मधुरभाषी हो।

भक्त तुकाराम ने गृहस्थ के जो लक्षण बतलाये है राजगृह के गोभद सेठ मे वह सब लक्षण मौजूद थे।

गोभद सेठ की पत्नी का नाम भद्रा था। भदा भी अपने नाम के अनुसार बहुत भद स्वभाव वाली थी।

एक दिन न मालूम किस अप्रकट कारण से भदा के दिल मे उदासीनता छा गई। सेठानी कभी उदास नही होती थी। अतएव आज उसे उदास देख का सेठ गोभद को चिन्ता हुई। सेठ ने सेठानी की उदासीनता मिटाने के लिए अनेक उपाय किये। उसे सुन्दर बाग-बगीचे मे घुमाया, चित्त पसन्न करने वाले खेल-तमाशे दिखलाये सखी-सहेलियो से कह कर और मनोविनोद की बाते करके उसकी उदासीनता दूर करनी चाही, फिर भी सेठानी की चिन्ता दूर न हुई। सेठानी को चिन्तित देखकर सेठजी को बहुत चिन्ता सताने लगी। वह मन ही मन सोचने लगे-सेठानी के चिन्तित और उदास रहने से मेरा आधा अग ही बेकार हो गया है। आखिर इसकी चिन्ता का क्या कारण हो सकता है?

पत्नी की चिन्ता दूर करने के अनेक उपाय करके भी जब सेठ गोभद्र सफल न हुए तो उन्होने सेठानी से कहा- तुम्हे क्या मानसिक पीडा है, जो इतनी उदास हो? क्या अपनी उदासी का कारण मुझे नही बतला सकती? सम्भव है मै उस कारण को जानने के अयोग्य होऊ और इसीलिए मुझे न बतलाती होओ! अगर ऐसी बात हो तो जाने दो मत कहो। अगर बतलाने मे कोई खास बाधा न हो तो बतला दो।

सेठ की अन्तिम बात सुनकर सेठानी धैर्य न रख सकी। उसने कहा- आपका मेरा जीवन इतना सकलित है कि दोनो के बीच मे कोई व्यवधान नही आ सकता। हम दोनो दो नही एक ही हैं। मेरे लिए आपसे बढकर ओर कौन है जिसे अपने मन की बात कह सकू और आपसे न कह सकू? मैं अपनी चिन्ता की बात सिर्फ इसलिए नही कहती कि उससे आपकी भी चिन्ता बढ जाती। जिस रोग की दवा आपके हाथ मे नही है उस रोग को सुना कर क्या व्यर्थ आपको चिन्ता करु? मगर ऐसा न करने से आप अधिक चिन्तित [illegible] देती हू। आपसे छिपाने योग्य मेरे पास क्या रखा है पति-पत्नी दुराव-छिपाव कैसा?

हो कोई वस्तु दिखाई न देती हो ऐसी स्थिति मे उन सब वस्तुओ का होना न होना समान है। इसी प्रकार इस सम्पन्न कुल मे कुलदीपक न होने के कारण कुल का कोई भविष्यकालीन सरक्षक और आश्रय न होने से इस कुल मे अधेरा है। मे जिस ऋण मे दबी हुई हू, वह ऋण चूकते न देखकर अपने प्रति धिक्कार की भावना उत्पन्न होती है और ऐसा लगता है कि मेरा जन्म निरर्थक है।

मैं आपका दिया हुआ अन्न–वस्त्र खाती और पहनती हू और मौज मे रहती हू। मगर स्त्री का काम केवल खा–पहन कर मौज करना ही नहीं है। आपके ऋण के बदले मे मुझे एक ऐसा कुलदीपक उत्पन्न करना चाहिये था जो कुल को प्रकाशमान कर देता और जो आपकी कीर्ति का आधार होता आपका नाम उज्ज्वल कर देता। लेकिन मैंने आपका ऋण ही अपने माथे चढाया है। ऋण को उतारने का कोई उपाय नही किया। स्त्रियो को या तो अविवाहित रह कर परमात्मा की भावना मे रहना चाहिये या फिर ऐसे कुलदीपक को जन्म देना चाहिए जो कुल को यशस्वी और प्रशसा का पात्र बना दे। केवल भोग करना स्त्री का कर्त्तव्य नहीं है।

में अपने जीवन मे अपने कर्त्तव्य का पालन करने मे समर्थ नही हुई हू। यही विचार मुझे पीडा पहुचा रहा है। इसी कारण मुझ मे उदासी आ गई है। मे अपने आपको वृथा और भारभूत समझने लगी हू। सोचती हू–आपके इस समृद्ध गृह मे न आती और मेरे बदले कोई दूसरी स्त्री आई होती तो वह घर को प्रकाशित कर देती। यह घर अन्धकारपूर्ण और सुनसान न रहता। मैं आपके लिये पूरी तरह उपयोगी नही हो सकी। अतएव मैं प्रार्थना करती हू कि आप दूसरा विवाह कर लीजिये जिससे कुल की परम्परा चालू रहे आपकी कीर्ति स्थिर रहे और जीवन आनन्दमय हो सके।

सेठ गोभद्र अपनी पत्नी की आतरिक व्यथा को समझ गये। उन्होने उसकी निस्पृहता को भी समझ लिया और उसकी स्वार्थत्याग की भावना देख कर वे सन्तुष्ट भी हुए। उन्होने सोचा–सेठानी अपना कर्तव्य भलीभाति समझती है, इसी कारण दु खी है और मुझे दूसरा विवाह कर लेने के लिए कहती है। परन्तु क्या दूसरी स्त्री भी ऐसी ही मिल सकेगी जो अपना कर्तव्य इसी भाति समझे और जिसे मेरे कुल तथा यश की इतनी चिन्ता हो। यह कठिन है।

गोभद्र ने अपनी पत्नी से कहा– मेरा महत्व तुमसे ही है। तुम मेरे सिर की पगडी हो। आज मेरी जो नामवरी है वह तुम्हारा ही प्रताप है। तुम

सरीखा गुणसुन्दरी पत्नी को ऐसी चिन्ता शोभा नही देती। तुमने अपना ऋण तो कभी का चुका दिया है। मैं तुम्हारी झूठी पशसा नही करता। सच कहता हू कि तुम्हारे जैसी गुणवती और पतिव्रता नारी से ही नर की शोभा है।

सेठ ने फिर कहा—मेरी जो श्रेष्ठता है जो बडाई है जो सम्मान है वह सब तुम्हारी ही शक्ति से है। स्त्री किस प्रकार अपने पति को ऊचा चढा सकती है और किस पकार नीचे गिरा सकती है, इस सम्बन्ध मे एक कहानी सुनाता हू—

एक सेठ था—विद्वान लक्ष्मीपति और गर्वान्ध। उसकी स्त्री सुशीला और बुद्धिमती थी। सेठ का गर्व उसे अच्छा नही लगता था। वह सोचती थी—लक्ष्मी पाकर सेठ को नम्र होना चाहिये था गर्व करना तो तुच्छता का द्योतक है। वह सदा चिन्तित रहती थी कि सेठ का गर्व किसी प्रकार मिटाना चाहिए।

एक दिन की बात है कि सेठ और सेठानी बैठे बाते कर रहे थे। सेठानी ने कहा—आप आज्ञा दे तो मैं एक बात पूछूं?

सेठ—खुशी से। बाते करने तो बैठे ही हैं।

सेठानी—यह बताइये कि आदमी की शोभा किसके हाथ है?

सेठ—आदमी की शोभा आदमी के हाथ है।

सेठानी ने हस कर कहा— कौन अपने आपको हीन प्रकट करना चाहता है? मगर मैं कहती हू कि पुरुष की शोभा स्त्री के हाथ मे है। स्त्री चाहे तो एक क्षण मे पुरुष की आबरू मिट्टी मे मिला सकती है।

सेठ बिगड कर कहने लगे— स्त्री के हाथ मे क्या धरा है? मुझे तो यश और वैभव प्राप्त है वह क्या तुम्हारी कृपा से? बल्कि तुम जो सेठानी कहलाती हो सो भी मेरी ही बदौलत। मैं न होता तो तुम्हे पूछता कौन?

इस प्रकार सेठजी ने अपने पक्ष की बात कहकर सेठानी के पक्ष को गिरा देने की चेष्टा की। सेठानी अपना पक्ष सिद्ध करने के लिए बहुत कुछ कह सकती थी पर उसने उस समय हठ न करना ही ठीक समझा। उसने सिर्फ इतना कहा—अगर मैंने यह सिद्ध कर दिखाया कि पुरुष की इज्जत स्त्री के हाथ मे है तब तो आप मानेंगे?

सेठानी ने इस अवसर से लाभ उठाना उचित समझा। उसने अपने एक विश्वस्त नौकर को सेठ के पास भेजकर कहलाया–सेठानीजी स्नान कर चुकी है। चाबी दे दीजिए तो वे कुछ नाश्ता कर ले। सेठानी ने नौकर को समझा दिया कि यह बात तू धीमे से न कहना। ऐसे ऊचे स्वर मे कहना जिससे बैठक मे बैठे सभी लोग सुन ले।

नोकर गया और उसने वही कह दिया जो सेठानी ने उसे सिखाया था। नौकर की बात सुनकर सेठ के सभी मित्र आश्चर्य के साथ सोचने लगे– यह सेठ कितना कृपण है और इसके मन मे कितना मैल है कि रसोईघर की चाबी भी स्त्री को नही सौपता और अपने कब्जे मे रखता है।

सेठ नौकर की बात सुनकर जल–भुन गया लेकिन बोला कुछ नहीं। उसने नौकर की बात सुनी–अनसुनी कर दी। लेकिन नौकर कहा मानने वाला था? उसने दोबारा चिल्लाकर वही बात दोहराई। सेठ के पास रसोईघर की चाबी तो थी नही परन्तु बात टालने के लिए उसने अपने पास का चाबियो का गुच्छा नोकर की ओर फेक दिया और डरावनी आखे निकाल कर उसकी ओर देखा। नोकर गुच्छा लेकर सेठानी के पास आया।

उधर सेठानी ने एक अच्छे से थाल मे मेवा भरा। उसी थाल मे एक कटोरी मे रत्न आदि भर दिये। थाल को एक मैले–कुचैले कपडे से ढक दिया। वह थाल नोकर को देकर सेठानी ने कहा– वह थाल ले जाकर सेठजी से कहना– सेठानी ने यह चने भेजे है। आप भी खा लीजिए और मित्रो को भी खिला दीजिए।

नौकर अदब के साथ मैले कपडे से सजा हुआ थाल बैठक मे ले गया। सेठजी के सामने रख कर उसने वही कह दिया जो सेठानी ने कहलाया था।

मित्र लोग सेठ की कृपणता को धिक्कारने लगे। उधर सेठ पहले ही जला–भुना बैठा था। वह नौकर को भला–बुरा कहने लगा, परन्तु नौकर चुपचाप लौट आया।

मित्रो मे कुछ मसखरे भी थे। उनमे से एक ने कहा– नाश्ते का समय हो चुका है और सेठानीजी ने चने भी भेज दिये हैं। बडे घर के चने भी अच्छे ही होगे। सेठजी दीजिए न चने चबावे।

सेठजी टालना चाहते थे। इतने मे दूसरे ने कहा– भाई इसमे सेठजी से क्या पूछना है? भूख हो तो ले लो। अपने लिये तो आये ही है।

सेठजी बेचारे सिकुडते ही जाते थे। सोचते थे– अब तो इज्जत धूल मे मिली।

इतने ही मे उनके मित्रो ने थाल का कपडा हटा दिया। कपडा हटाते ही थाल मे रखे मेवा और कटोरी मे रखे रत्न आदि दिखाई दिये। थाल की यह सामग्री देखकर सेठजी की जान मे जान आई। सेठजी ने सबको मेवा और जवाहरात दिये।

मित्रो के चले जाने पर सेठजी भीतर गये और सेठानी से कहने लगे– आज यह क्या तमाशा किया था तुमने?

सेठानी– कैसा तमाशा?

सेठ– खाने–पीने की चीजे मैं कब ताले मे रखता हू कि तुमने चाबी लेने नौकर को मेरे पास भेजा?

सेठानी– यह तो उस दिन की बात का प्रमाण दिया है कि पुरुष की इज्जत स्त्री के हाथ मे है। स्त्री चाहे तो पुरुष की आबरु बिगाड दे, चाहे तो बचा ले।

सेठ– यह तो मैं समझ गया परन्तु तुम–सी स्त्री ही तो बिगडी बात बना भी सकती है। अगर कोई मूर्खा होगी तो बनी–बनाई बात भी बिगाड देगी।

सेठानी– मैं सब स्त्रियो के लिए नही कहती। मै तो सिर्फ यही चाहती हू कि आप यह अभिमान छोड दे कि दुनिया मे जो कुछ है हम ही है। आपके इस अभिमान को मुझ–सी साधारण स्त्री भी खण्डित कर सकती है।

सेठानी की बात सेठजी को जच गई।

गोभद्र सेठ अपनी सेठानी से कह रहे हैं–तुम मेरे ऋण से नही दबी हो किन्तु तुमने जो ऋण दिया है उसी के प्रताप से मेरा यश और वैभव है। यह तुम्हारी ही शक्ति है। रही पुत्र न होने की बात सो पुत्र के न होने मे तुम्हारा कोई अपराध नही है। फिर चिन्ता करने का क्या कारण है? मुझसे आज तक जो सत्कार्य हुए है उन सब मे तुम्हारा हाथ रहा है।

गोभद सेठ फिर कहते है– राम कृष्ण हरिश्चन्द्र आदि नारी शक्ति की सहायता से धर्म और व्यवहार के ऐसे काम कर सके थे कि ससार उन्हे आज भी आदर के साथ स्मरण करता है। प्रिये! तुमने आज तक अपने लिए मुझसे कुछ भी नही कहा। अन्य साधारण स्त्रियो की भाति वस्त्रो और आभूषणो के लिए भी तुमने मुझे कभी नही कहा। विना मेरी सम्मति के तुमने कोई काम नही किया। मै तुम से पूर्ण रूप से सन्तुष्ट हू। फिर आज पुत्र की बात को लेकर–जिसमे तुम्हारा कोई दोप नही हे– चिन्ता करना वृथा है। इस व्यर्थ की चिन्ता को त्यागो और कर्तव्य कार्य का विचार करो। जैसे पेट मे पहुचा हुआ अन्न–पानी प्रत्यक्ष मे दीखता नही है फिर भी शरीर को शक्ति प्रदान करता रहता है उसी प्रकार तुम मेरे साथ रहती नहीं हो, परन्तु मेरे प्रत्येक कार्य मे तुम्हारा हाथ रहता है। जिस देश मे सभी स्त्रिया तुम्हारी जेसी हो जाएगी, उसका मगल हुए विना नही रह सकता। तुम जैसी सुशीला और सुसकृता नारी की शक्ति का मैं एक दिन का भाडा भी नही चुका सकता। फिर तुम मेरी ऋणी केसे हो? तुमने अपनी समस्त कलाए मुझे अर्पित कर दी हैं। म इन सबका मूल्य किस प्रकार चुका सकता हू?

प्रिये! तुमने गाना गाया तो मुझे रिझाने के लिए नृत्यकला का प्रदर्शन किया तो मेरी ही प्रसन्नता के लिए। किसी दूसरे के लिए नहीं किया। मुझे भी तुम्हारे सगीत, नृत्य और शृगार के सामने किसी का सगीत नृत्य या शृगार रुचिकर नही लगता। इसलिए मेरा अनुरोध स्वीकार करो ओर उदासी छोडो।

सेठ गोभद्र की बात सुन कर भद्रा सेठानी अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। वह कहने लगी– प्राणनाथ! आप मुझे इतना अधिक गौरव ओर सम्मान देते हैं यह बात आज ही मुझे मालूम हुई। मैं आपको सन्तुष्ट करने के लिए कोई यत्र–मत्र नही जानती। पति के जीवन मे अपना जीवन मिला देना ही स्त्री–जीवन की सफलता है। यही मेने सीखा है ओर इसी सीख का अपने जीवन मे अनुसरण किया है।

पति के स्नेहपूर्ण आश्वासन से सेठानी को सतोष हुआ ओर उसकी उदासी भी कुछ कम हो गई। मगर कुछ ही क्षणो के पश्चात् उसके हृदय मे फिर एक तरग उत्पन्न हुई। वह पति के सद्व्यवहार का विचार करके मन ही मन अत्यन्त सकुचित हुई। उसने सोचा–पतिदेव का मेरे ऊपर अगाध स्नेह हे असीम कृपा हे वह मुझे इतना आदर देते हैं! मगर इस सब के बदले मेने उन्हे क्या दिया है? बिना पुत्र के यह सब मान–सम्मान ओर यश–वैभव सूना है।

मन ही मन इस पकार सोचकर सेठानी कहने लगी– आप सीता रुक्मिणी और तारा की बात कहते हैं पर क्या सीता ने लव और कुश जैसे पुत्रो का उपहार रामचन्द को नही दिया था? रुक्मिणी ने पद्युम्न जैसा श्रेष्ठ पुत्र नही पैदा किया था? क्या तारा ने रोहित–सा बेटा नही दिया था? मैने आपको क्या पतिफल दिया है? मैं अब तक आपसे लेती ही लेती रही हू, दिया कभी कुछ नही है। ऐसी स्थिति मे आप सीता आदि सतियो का नाम लेकर मुझे लज्जित क्यो करते हैं? अगर मै पुण्यवती होती तो क्या मेरी आशा पूरी न होती? क्या मै आपको एक सुयोग्य और सुन्दर उत्तराधिकारी न देती जो आपकी कीर्ति को कायम रखता और आपका नाम पसिद्ध करता? मगर मुझ मे बडी कमी है। इसी कारण यह सब नही हो सका है।

इतना कह कर सेठानी फिर चिन्ताग्रस्त हो गई। यह देख कर गोभद्र भी चिन्तित हुए। उन्होने कहा–तुम्हे मेरे वचन पर श्रद्धा तो है न?

सेठानी–आप मेरे सर्वस्व हैं। आपके वचन पर मै अश्रद्धा कैसे कर सकती हू?

सेठ–तुम्हे आज तक कभी चिन्ता नही हुई और आज हुई तो ऐसी कि अनेक उपाय करने पर भी नहीं मिटती। तुम्हारी चिन्ता दूर होने का और कोई तो उपाय है नही अलबत्ता एक उपाय मुझे सूझता है। तुम पूरी तरह धर्म कार्य मे लग जाओ। ऐसा करने से शायद तुम्हारी चिन्ता मिट जाय। यह चिन्ता जो आज अचानक ही तुम्हारे अन्त करण मे आविर्भूत हुई है सो शायद मिटने के लिए। अतएव धर्म की आराधना मे लग जाओ। मैं भी आज से परमात्मा की आराधना मे लगता हू। दीन–दुखिया दिखाई दे तो उसका दु ख दूर करना सहधर्मी के प्रति वत्सलता बढाना और किसी पर द्वेष का भाव न आने देना चाहिए। धर्म की आराधना करने से आत्मशाति तो प्राप्त होगी ही और यदि पुत्र होना होगा तो वह भी हो जाएगा। धर्म का फल तो कही जाता नही। मुझे आशा होती है कि तुम्हारी चिन्ता शीघ्र ही दूर हो जाएगी।

पत्येक मनुष्य अपने समानशील वाले को ही आकर्षित करता है। वालक से वालक बूढे से बूढा श्रीमत से श्रीमत ओर ज्ञानी से ज्ञानी जिस प्रकार मिल जाते है इसी प्रकार धर्मात्मा से धर्मात्मा मिल जाता है। इधर गोभद सेठ और उनकी पत्नी भी दातार थे और उधर सगम भी दातार था। वल्कि सगम ने जैसा उत्कृष्ट दान किया है वेसा शायद वह श्रीमत दम्पती भी न दे सके होगे। यही कारण है कि भद्रा–सिहनी के उदर रूपी कदरा मे सगम जैसा वालक पुत्र के रूप मे आया। 'योग्य योग्येन योजयेत अर्थात् जो जिसके योग्य हो उसके साथ ही उसका सवध होना चाहिए, यह उक्ति यहा चरितार्थ हुई।

सेठ और सेठानी सोये हुए थे। सेठानी को स्वप्न मे एक फल–फूलो से समृद्धशाली क्षेत्र दिखाई दिया। स्वप्न देखते ही सेठानी की निद्रा भग हो गई। वह विस्तर से उठ कर सेठ के पास पहुची। सेठ को उसने अपने स्वप्न का विवरण सुनाया। सेठ ने कहा– यह स्वप्न उत्तम है। अब दुष्काल रहने वाला नही हे। इस स्वप्न से प्रकट होता है कि तुम्हारी चिरकालीन मनोकामना पूरी होगी। तुम पुत्र रत्न की माता बनोगी।

वालक सगम सीधा–सादा और सरल हृदय का था झूठ–कपट उसके पास नहीं फटकता था। इन सब गुणो के तथा उत्तम दान के प्रताप से सगम गोभद्र सेठ के यहा भद्रा सेठानी के उदर मे आया।

साधारण लोगो की बुद्धि स्थूल और दृष्टि सकीर्ण होती है। वे मोटी बात को तो किसी प्रकार समझ भी लेते है पर उसमे जो भीतरी रहस्य होता है उसे नही समझ पाते। धर्म पर अश्रद्धा होने का भी यही कारण है। सगम का मर जाना तो दृष्टि मे आ जाता है, मगर यह बात दृष्टि मे नही आती कि मृत्यु के पश्चात् उसकी क्या स्थिति हुई? मृत्यु होने के फलस्वरूप उसकी स्थिति मे सुधार हुआ, विकास हुआ या नहीं हुआ इन सब बातो की जानकारी न होने के कारण लोग अन्धकार मे रहते है और कभी–कभी धर्म पर अविश्वास कर बैठते है। ऐसे अज्ञानी पुरुषो को यह शका हो सकती हे कि मुनि को दान देने के बाद सगम को मृत्यु के मुख मे जाना पडा तो दान देना मगलमय कैसे हुआ? लोगो ने धर्म को भी एक प्रकार का व्यापार–सा बना रखा है। इस हाथ दे उस हाथ ले की कहावत के अनुसार वे तत्काल ही धर्म का फल चाहते है। भविष्य मे फल मिलने पर उन्हे भरोसा नही है। मगर उन्हे समझना चाहिये कि सगम ने अगर दान–धर्म का पालन न किया होता तो वह भद्रा सेठानी के उदर मे कैसे पहुच सका होता? भद्रा सेठानी के घर आनन्द मगल कैसे होता?

सगम का आत्मा न सठाना भदा क गभ म पवन [illegible]

सेठानी के स्वप्न से समझ गये कि अब हमारी दरिद्रता दू [illegible]

उन्होने उत्साह और उदारता के साथ स्वप्नोत्सव मनाया [illegible] के अवसर पर इतना दान दिया कि याचक अयाचक बन गये [illegible] दुखिया सुखी हो गये।

आजकल के अधिकाश नर–नारियो को गर्भ सबधी ज्ञान नहीं [illegible] परन्तु भगवती–सूत्र मे इस विषय की चर्चा की गई है। वहा [illegible] गया है कि– हे गौतम! माता के आहार पर ही गर्भ के बालक का [illegible] निर्भर है। माता के उदर मे रसहरणी नालिका होती है। उसके द्वारा [illegible] आहर से बना रस बालक को पहुचता है और उसी से बालक के शरीर का निर्माण होता है।

बहुत–सी गर्भवती स्त्रिया भाग्य के भरोसे रहती है और गर्भ [illegible] विषय की जानकारी नही करती। इस अज्ञान के कारण कभी–कभी गर्भस्थ बालक गर्भवती स्त्री दोनो को हानि उठानी पडती है। बालक को आखो देखते काटना या मारना तो कोई सहन नही करता पर अज्ञान के कारण बालक की मौत हो जाती है और माता के प्राण सकट मे पड जाते हैं यह सहन कर लिया जाता है।

गौतम स्वामी ने प्रश्न किया है– गर्भ का बालक मल–मूत्र का त्याग भी किया करता है! भगवान का उत्तर है– गर्भ का बालक माता के भोजन मे से रसभाग को ही ग्रहण करता है। उस सार रूप रस भाग को ही वह इतनी मात्रा मे ग्रहण करता हे कि उसके शरीर के निर्माण मे ही सारा लग जाता है। गर्भस्थ बालक आहार के खलभाग को लेता ही नही है। अतएव उसे मल–मूत्र नही आता।

भगवान के कथन का सार यह है कि गर्भ के बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर है। माता यदि अत्यधिक खट्टा–मीठा या चरपरा खाएगी तो उससे बालक को हानि पहुचे बिना नहीं रहेगी। जैसे कैदी का भोजन जेलर के जिम्मे होता है जेलर के देने पर ही कैदी भोजन पा सकता है अन्यथा नही इसी प्रकार पेट रूपी कारागार मे रहे हुए बालक रूपी कैदी के भोजन की जिम्मेवारी माता पर है। गर्भस्थ बालक की दया न करने वाले मा–बाप घोर निदय ह बाल–घातक हैं। अनुकम्पा के द्वेषी कहते हैं कि [illegible] की रानी धारिणी ने अपने गर्भ की रक्षा की सो वह मोह अनुकम्पा [illegible] हुआ। लेकिन धारिणी के विषय मे शास्त्र का पाठ है कि धारिणी रानी

गर्भ की अनुकम्पा के लिये भय चिन्ता और मोह नही करती हे क्योकि क्रोध करने से वालक क्रोधी होता है, भय करने से वालक डरपोक वन जाता है और मोह करने से लोभी होता है। इसीलिए धारिणी ने इन सव दुर्गुणो का त्याग कर दिया था। आश्चर्य तो यह है कि अनुकम्पा के विराधी इन दुर्गुणो के त्याग को भी दुर्गुण कहते हैं। मोह के त्याग को भी मोह–अनुकम्पा कहने वाले समझदार(!) लोगो को कौन समझा सकता है?

जो स्त्रिया गर्भवती होकर भी भोग का त्याग नहीं करती हैं वे अपने पैरो पर आप ही कुल्हाडी मारती हे। इस नीचता से वढ कर ओर कोई नीचता नही हो सकती। नैतिक दृष्टि से ऐसा करना घोर पाप हे और वैद्यक की दृष्टि से अत्यन्त अहितकर है। पतिव्रता का अर्थ यह नही है कि वह पति की ऐसी आज्ञा का पालन करके गर्भस्थ वालक की रक्षा न करे। माता को ऐसे अवसर पर सिहनी वनना चाहिये, शक्ति वनना चाहिये और व्रह्मचर्य का पालन करके वालक की रक्षा करनी चाहिये।

भद्रा सेठानी भय, लोभ, मोह एव चिन्ता से दूर रह कर अपने गर्भ की रक्षा करने लगी।

गर्भवती स्त्री को भूखा रहने मे धर्म नही बतलाया गया है। किसी शास्त्र मे ऐसा उल्लेख नही मिलता कि किसी गर्भवती स्त्री ने अनशन–तप किया था। जब तक बालक का आहार माता के आहार पर निर्भर है तब तक माता को यह अधिकार नही कि वह उपवास करे। दया मूल गुण का घात करके उत्तर गुण क्रिया करना ठीक नही।

भद्रा का गर्भ ज्यो–ज्यो बढता गया त्यो–त्यो उसके मनोरथ अच्छे–अच्छे होते रहे। पेट मे जब कोई धर्मी जीव आता है तो माता की भावना भी धर्ममयी हो जाती है।

आखिर एक दिन, शुभ घडी और शुभ मुहूर्त मे भद्रा की कूख से पुत्ररत्न का जन्म हुआ। दासी दौडी हुई गोभद्र सेठ के पास पहुची। उसने सेठजी को पुत्र होने की बधाई दी। उसने कहा– लोग जिन शुभ मुहूर्त की राह देख रहे थे, वह आ गया है। कुल का सूर्य उदित हो गया हे।

यह हर्ष समाचार सुनकर गोभद्र सेठ को रोमाच हो आया। उन्होने अपने हाथ से दासी का सिर धोया, उसे दासीपन से मुक्त किया ओर अपने पहनने के सब आभूषण उसे पुरस्कार मे दे दिये।

8 : शालिभद्र की बाल्यावस्था

बेचारी धन्ना सहायविहीन थी। कौन था उसका, जिसे वह अपना कह सके? ले–दे कर एक सगम ही उसका आधार था। उसी के सहारे धन्ना जी रही थी। धन्ना ने न जाने कितनी बार सगम को आधार मान कर भविष्य के सुनहरे सपने देखे थे। उसने कल्पना के कई एक महल बाध लिये थे मगर यकायक एक तूफान आया और उसके कल्पना महल धूल मे मिल गये। उसके सुनहरे सपने विकराल वास्तविकता का रूप धारण करके उसके भोलेपन पर हसने लगे मानो वास्तविकता कह रही थी–अरे क्षुद्र शक्ति वाले मानवकीट! जल के बुलबुल की तरह अपने कभी भी समाप्त हो जाने वाले जीवन को लेकर तू मन्सूबो के ढेर लगा लेता है। जानता नहीं तेरी शक्ति अदृष्ट के इशारो पर नाचती है?

सगम के वियोग से धन्ना को कैसी मार्मिक चोट लगी होगी, यह तो कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। धन्ना का हृदय आहत हो गया। उसकी चेतना सो गई। स्फूर्ति जाती रही। धैर्य छूट गया। साहस बिखर गया। उत्साह विलीन हो गया।

किसी कवि ने ससार का स्वरूप चित्रित करते हुए कितना सुन्दर कहा है–

काहू घर पुत्र जायो, काहू के वियोग आयो।
काहू राग रग काहू रोआ–रोई परी है।।

राजगृह मे इसी प्रकार की घटना घट रही है। एक ओर धन्ना शोक मना रही है और दूसरी ओर गोभद्र सेठ के घर नोबत बज रही है।

धन्ना की पडोसिने उसे समझाती हुई कहने लगी– गोभद्र सेठ के घर बालक का जन्मोत्सव मनाया जा रहा है तुम भी उस उत्साह मे सम्मिलित हो जाओ।

धन्ना व्यथित हृदय से कहने लगी–पुत्र शोक की आग मे मेरा कलेजा जला जा रहा है। मैं आनन्द कैसे मनाऊ? वहिनो क्या तुम मेरा उपहास कर रही हो? इतना निर्दय उपहास तो कोई किसी का न करता होगा।

पडोसिनो ने कहा– ना धन्ना, भला तुम्हारे साथ उपहास। और वह भी इस अवस्था मे? उपहास करने का यह अवसर नहीं है। मगर हमने ठीक ही कहा है। धर्मात्मा के घर वेटा होने पर सभी को खुशी मनानी चाहिए। इसके अतिरिक्त एक वात और है। जिस दिन सगम ने शरीर त्याग किया उसके ठीक नो महीना और साढे सात दिन बीतने पर सेठ के घर बालक जन्मा है। बहुत सभव है कि सगम ने ही नया शरीर धारण करके जन्म लिया हो। अतएव उस वालक को तुम अपना ही वालक समझा करो। धर्मपुत्र तो होते हैं न? तुम उसे अपना धर्मपुत्र समझ लो। इससे तुम्हे शाति मिलेगी। शोक मनाने और आसू वहाने से तो कोई लाभ होता नहीं। ससार मे सयोग–वियोग तो अवश्यम्भावी हैं। फिर शोक करने से क्या वह रुक जाएगे?

पडोसिनो की वात धन्ना के दिल मे जम गई। उस दिन से शालिभद्र को वह अपना वेटा ही समझने लगी। वह सोचने लगी– चलो मेरा सगम मेरे यहा कष्ट पाता था, अब सुख मे पहुच गया। मैं उसे देख कर ही सन्तोष कर लिया करूगी। वह तो मुझे नही पहचानेगा पर मै किसी बहाने जाकर बिना वदले की भावना, केवल अपने हृदय के आश्वासन के लिए उसकी सेवा कर आया करूगी। मैं उसकी धर्म माता हू। मुझे अपनी सेवा के प्रतिफल की आशा ही नही रखनी चाहिये।

धन्ना गोभद्र सेठ के घर जा पहुची। वह शालिभद्र को देख कर प्रसन्न रहने लगी। शालिभद्र दिन–दिन बडा होने लगा और उसकी कान्ति चन्द्रिका की तरह बढने लगी। उसकी सुन्दरता और कोमलता वैरी का भी मन हरण करने वाली थी।

धीरे–धीरे शालिभद्र कुछ बडा हुआ। कुछ लोगो का कहना हे कि शालिभद्र ने कभी पैर नीचे नहीं रखा था और न चन्द्रमा एव सूर्य की किरणे देखी थी। लेकिन वस्तुस्थिति ऐसी नही है। पहले के लोग ऐसे नही थे कि अपने बालक को गुडिया बना रखे और कलाओ का शिक्षण न दे।

मकराने के पत्थर को आप कितना ही धोवे वह मूर्ति नही वन सकता पत्थर ही बना रहेगा। मूर्ति तो वह तभी बन सकता हे जब टाची सहन करेगा। क्या आप यह समझते हैं कि शालिभद्र को उसके पिता ने अनघडा पाषाण ही बनाये रखा था? मगर बिना गुण प्राप्त किये विवाह कर देने की

पथा इस पाचवे आरे मे ही है। शालिभद के उस स्वर्णमय युग मे ऐसी प्रथा नही थी।

शालिभद समस्त कलाओ मे कुशल हो गया। माता ने उसे जो–जो आशीर्वाद दिये थे वे सब जब सफल हो गये और शालिभद्र जब गृहस्थी का भार उठाने योग्य हो गया तब गोभद सेठ ने उसके विवाह का विचार किया।

मा–बाप के लिए पुत्र वैसा ही होता है जैसे कृषक के लिए खेत का कपास। कृषक अगर खेत के कपास को खेत मे ही रखे, उसे औटावे और धुनकावे नही तो वह कपास किसी काम का न होगा। इसी प्रकार जो माता–पिता अपने बालक को अपने घर मे घुसेडे रखते हैं, उन्हे ऊची क्रिया नही सीखने देते वे माता–पिता उस बालक के लिये वैसे ही हैं जैसे कपास को खेत मे रख छोडने वाला कृषक। जब तक शरीर श्रम करने मे समर्थ नही बनता तब तक जीवन निकम्मा ही रहता है। शास्त्र के वर्णन से ज्ञात होता है कि पहले का कोई राजकुमार या श्रेष्ठिकुमार बहत्तर कला सीखे बिना नही रहता था।

जब शालिभद समस्त कलाओ मे पारगत हो गया तो उसका विवाह कर देने का विचार किया गया।

9 : विवाह

शालिभद्र कुमार नीति, व्यवहार और विज्ञान मे कुशल हो गये। यह देखकर उनके माता–पिता ने उन्हे विवाह के योग्य समझा और किसी सुयोग्य कन्या के साथ विवाह कर देने का विचार किया।

समझदार और नासमझ के विवाह मे बडा अन्तर होता है। इसी प्रकार उचित उम्र मे होने वाले और अनुचित उम्र मे होने वाले विवाह मे भी वहुत भेद है। जो बच्चे सभी व्यवहार को समझ भी नही पाये है जिनके शरीर की कली अभी तक खिल भी नही पाई है, जिन्होने अभी धर्म को नही समझ पाया है उनके सिर पर विवाह का उत्तरदायित्व लाद देना कहा तक योग्य हे? ऐसा करना समयोचित कार्य है या असामयिक वह कहने की आवश्यकता नही। ऐसा करने वाले बहुत बार धोखा खाते हैं। फिर भी आश्चर्य है कि उन्हे देखकर दूसरो की और यहा तक कि खुद धोखा खाने वालो की भी अकल ठिकाने नही आती।

शालिभद्र की सगाई बत्तीस जगह से आई। शालिभद्र के पिता विचार मे पड गये कि किसे हा कहे किसे नही? विवाह मे पहले का सस्कार बडा काम करता है। जब पहले का सस्कार जोर मारता है तभी विवाह होता हे।

शालिभद्र का कुल प्रतिष्ठित था, सम्पन्न था। उसके माता–पिता धर्मशील और सुसस्कारी थे। उसकी सज्जनता की नगर मे ख्याति थी। इस पर भी शालिभद्र के सौन्दर्य और सत्स्वभाव एव बुद्धिमत्ता का क्या कहना है? सोने मे सुगन्ध की कहावत वहा चरितार्थ होती थी। ऐसी स्थिति मे प्रत्येक कन्या का पिता यही चाहता था कि मेरी कन्या के साथ शालिभद्र का विवाह होना चाहिये। सयोगवश सभी कन्याओ के पिता एक ही साथ विवाह का प्रस्ताव लेकर आये। सेठ गोभद्र बडे असमजस मे पडे। वह सोचने लगे किसी एक का प्रस्ताव स्वीकार करके शेष सबको मनाही करते हे तो अच्छा नही मालूम होता। ये लोग आगे–पीछे आये होते तो इतनी परेशानी न होती।

इस पकार सोच—विचार करते—करते सेठ गोभद्र को एक तरकीब सूझ गई। उन्होने सब से कहा— आप सब सज्जनो की कन्याए सुशील, कुलीन और सुसस्कारी है, लेकिन शालिभद्र के लिए सिर्फ एक कन्या की आवश्यकता है। आप बत्तीस सज्जन यहा एक साथ पधारे है। अब आप ही निर्णय कर दे कि मै किसकी कन्या के साथ शालिभद्र का विवाह करना स्वीकार करू और किसे नही करू? आप सभी बुद्धिमान है। मेरी कठिनाई समझ सकते हैं। कृपा करके मेरी कठिनाई दूर करने के लिए आप लोग ही मिलकर निर्णय कर लीजिये। मैं आपका निर्णय शिरोधार्य कर लूगा।

गोभद्र का यह विनम्रता और शिष्टता से पूर्ण उत्तर सुन कर बत्तीसो सेठ विचार मे पड गये। उन्होने सोचा— सेठ जी ने तो बाजी ही पलट दी। अब क्या करना चाहिये?

तब उनमे से एक ने कहा—बहु विवाह कहा ठीक नही होते हैं और कैसी स्थिति मे बहुविवाह से कलह हुआ करता है यह हम सबको मालूम है। सेठ गोभद्र के घर मे आकर हम लोगो की कन्याओ मे आपस मे कलह होना असम्भव है। इसके अतिरिक्त शालिभद्र जैसे अद्वितीय वर को कौन अपनी कन्या न ब्याहना स्वीकार करेगा? ऐसी स्थिति मे हम सब अपनी—अपनी कन्याओ से परामर्श करले। अगर कोई कन्या सौतो के साथ न रहना चाहे तब तो कोई प्रश्न नही है। उसके लिए दूसरा वर तलाश किया जाय। अगर कन्याओ को आपत्ति न हो तो फिर चिन्ता करने की कोई बात ही नही है। शालिभद्र के साथ सभी का सम्बन्ध निश्चित कर दिया जाय।

यह विचार सभी को पसन्द आया। सबने अपनी—अपनी कन्याओ और परिवार के साथ एक स्थान पर मिलने और निर्णय कर लेने का फैसला कर लिया। वे सब वहा से रवाना हुए और एक स्थान पर इकट्ठे हुए। सब अपनी—अपनी कन्याओ को ले आए और परिजनो को भी वहा कन्याओ से प्रश्न किया गया— शालिभद्र कुमार का सम्बन्ध किस कन्या के साथ किया जाय यह निर्णय करने का उत्तरदायित्व हमारे ऊपर आ पडा है और हमारा निर्णय तुम्हारी इच्छा पर आश्रित है। तुम सबको मिलकर यह विचार करना है कि तुम अलग—अलग वर पसन्द करती हो या सभी एक शालिभद्र को पसन्द करके साथ—साथ रहना चाहती हो?

शालिभद्र का नाम सुनते ही सब कन्याए प्रसन्न हो उठी। उनका हृदय उसी की ओर आकर्षित हुआ। शालिभद्र मे न मालूम क्या आकर्षण था [illegible] सौतिन स्वीकार करके भी कोई कन्या दूसरा वर पसन्द नही [illegible]

कर सकती थी। कन्याए सब समझदार थी। सभी ने 64 कलाओ की कुशलता पाप्त की थी। पूर्व सस्कार भी उन्हे प्रेरित कर रहे थे। अत सबने मिलकर निर्णय किया– चाहे एक घडी का सुख हो परन्तु सुख तो शालिभद्र के साथ रहने से ही है।

चन्दन की टुकडी भली, गाडा भरा न काठ।
सज्जन तो एक ही भला, मूरख भला न साठ।।

शालिभद्र के साथ ब्रह्मचर्यपूर्वक अथवा मर्यादित रहना अच्छा हे, पर दूसरा वर स्वीकार करना अच्छा नही। शालिभद्र के ससर्ग मे रहने मे और उनकी पत्नी कहलाने मे जो सुख है वह अन्य कही नही मिल सकता।

इस प्रकार विचार कर कन्याओ ने अपना निर्णय प्रकट कर दिया कि हम सब वहिनो का भाग्य एक ही सूत्र मे अगर देव ने बाध दिया तो उस दैवी विधान का उल्लघन नही किया जा सकता। हम सब एक ही वृक्ष पर चढने वाली वेले हे। हम मे कोई ऐसी नहीं जिसमे ईर्ष्या हो स्वार्थपरायणता हो ओर दूसरे के अधिकार का अपहरण करने की क्षुद्रता हो। अत आपस के कलह की हमारे वीच कोई सम्भावना नही है। हम एक–दूसरी की सहायता से अपना जीवन सम्पन्न शान्त आनन्दमय और उच्चकोटि का बनाने का प्रयत्न करेगी। एक की कमी दूसरी पूरा कर देगी। अगर हम कभी कलह करे तो आप सब हमे धिक्कार देना। अगर हम अलग अलग रहती तो हमारे एक–एक ही मा–बाप होते। शामिल रहने से हम मे से प्रत्येक के वत्तीस माताए ओर वत्तीस पिता होगे। जिसे पराया मान रखा है उसके प्रति आत्मीयता की भावना स्थापित करने की साधना को ही विवाह कहना चाहिये। विवाह के द्वारा आत्मीयता का सकीर्ण दायरा क्रमश बढता जाता हे ओर बढते–बढते वह जितना अधिक बढ जाय, उतनी ही मात्रा मे विवाह की सार्थकता हे। आत्मीयता की भावना को बढाने के लिए शास्त्र मे अनेक प्रकार के विधि विधान पाये जाते हैं, विवाह भी उन्ही मे से एक हे। यह एक कोमल विधान है जिसका अनुसरण करने मे कठिनाई अधिक नही होती। यह वात दूसरी हे कि बहुत विवाह के उस उज्ज्वल उद्देश्य को प्राप्त करने की ओर ध्यान ही न देते हो फिर भी विवाहित जीवन की सफलता इसी मे हे कि पति ओर पत्नी आत्मीयता के क्षेत्र को विशाल से विशालतर बनाते जाए ओर अन्त मे प्राणीमात्र पर उसे फेला दे–विश्वमेत्री की प्राप्ति के योग्य वन जाए।

कन्याए कहती है—हम सब एक साथ रहेगी तो इस भावना की साधना करने मे सफलता अधिक मिलेगी। अत हमने निश्चय किया है कि हम एक ही साथ रहेगी।

कन्याओ की यह सम्मति देख कर सब लोग प्रसन्न हुए। उन्होने सोचा— चलो अच्छा ही है। अब हम लोग भी एक के बदले तेतीस हो जाएगे।

बत्तीसो सेठ गोभद्र के पास पहुचे। उन्होने कहा— हम लोगो ने कन्याओ की सम्मति लेकर अन्तिम निर्णय कर लिया है। अब आपको वही करना होगा जो हम लोग कहेगे।

गोभद्र सेठ ने आगत मेहमानो का यथोचित सत्कार किया और योग्य आसन पर बैठाकर उनसे पूछा— आपने सलाह करली है? कहिए, किसकी कन्या का शालिभद्र के साथ विवाह होना निश्चित हुआ है। उत्तर मिला— बत्तीसो कन्याए कुमार शालिभद्र के साथ जुडेगी। यह तय हो चुका है।

गोभद्र— एक लडके के साथ बत्तीस कन्याए! उस सुकुमार बालक की ओर भी देखिये। इतना अधिक बोझा उस पर मत डालिये। यद्यपि बालक पराक्रमी है फिर भी है तो एक ही। एक पुरुष के लिए एक ही स्त्री का बोझ पर्याप्त होता है। वह बत्तीस का बोझ कैसे उठा सकेगा? आप जरा इस बात पर विचार कीजिये।

गोभद्र सेठ के कथन के उत्तर मे एक ने कहा— हमारी कन्याए शालिभद्र का बोझ हल्का करने आएगी। शालिभद्र पर जो बोझ है उसे उठाना एक स्त्री की शक्ति से परे है। इस कारण बत्तीसो मिलकर वह भार हल्का करेगी। शालिभद्र पर उनका बोझा बिल्कुल नही होगा। वे सब मिल—जुल कर शालिभद्र की सेवा करेगी और ऐसे रहेगी मानो बत्तीस नही एक है। हमारी कन्याए अबोध बालिकाए नही है। उन्होने समस्त कलाओ मे निपुणता प्राप्त की है। अगर आप इस निर्णय मे परिवर्तन करेगे तो अवाछनीय अनर्थ हो सकता है। कन्याए कर्त्तव्य—अकर्त्तव्य को भली—भाति समझती है। उन्होने निश्चय कर लिया है कि शालिभद्र ही हमारे पति होगे। अब हम और आप उनके निश्चय को किस प्रकार पलट सकते है?

आज का अशिक्षित स्त्री—समाज पुरुषो को बोझ स्वरूप मालूम हो रहा है [illegible] पुरुषो ने ही उन्हे ऐसा पगु बना रखा है कि अधिकाश पुरुषो को [illegible] विवाह के असली स्वरूप और उद्देश्य का पता नही है। यही [illegible] निखालिस सामाजिक कार्य भी सरकार के अधीन

हो रहा है। अगर समाज इस विषय मे सावधान रहता और अपने कर्त्तव्य का भली–भाति पालन करता तो सरकार को इस विषय मे पडने की आवश्यकता ही नही थी।

एक पुरुष के साथ बत्तीस कन्याओ का एक साथ विवाह होना आज अचभे की बात मालूम होती है। इस बात को आज का समाज नापसद करता है। दोनो बाते ठीक हैं पर हमे परिस्थितियो के तथ्य पर भी दृष्टि डालनी होगी। पहली ध्यान देने योग्य बात यह है कि बत्तीसो पिता अपनी पुत्रियो से सम्मति लेकर आये है और उन्ही की इच्छा के अनुसार विवाह हो रहा है। आज नकली बत्तीसी लगाकर और खिजाब से सफेद बालो को काला दिखाकर जवान होने का ढोग रचने वालो के साथ जब कन्या का विवाह किया जाता है तब क्या उसकी सम्मति ली जाती है? बत्तीस कन्याओ के साथ जो विवाह हुआ है वह न्याय से अर्थात् कन्याओ की इच्छा से ही हुआ हैं उन कन्याओ ने शालिभद्र के साथ ही विवाह करने का प्रण किया है और वे सब एक ही साथ रहना चाहती हैं। इसके अतिरिक्त कन्याओ की अभिलाषा भोग की नही थी। उनका कहना था कि वे भोग का नाश करने के लिए पैदा हुई हैं। अगर कोई शालिभद्र के बहुविवाह का उदाहरण उपस्थित करके अपने दो–तीन विवाहो को न्यायानुमोदित सिद्ध करना चाहे तो उसे सोचना चाहिए कि वह वास्तव मे एक विवाह के योग्य भी है या नहीं?

दानकल्पद्रुम ग्रन्थ मे एक जगह लिखा है कि दान की प्रशसा करने वाले, अनुमोदन करने वाले और उस दान के प्रति द्वेष एव रोष न करने वाले उस दान के फल मे भागीदार होते हैं। इस आधार पर यह कल्पना करना अनुचित नही कि सम्भव है वह बत्तीसो कन्याए उन्ही मे से हो जिन्होने सगम के दान की प्रशसा की थी। कुछ भी हो यह तो निश्चित समझना चाहिये कि पूर्व–सस्कार के कारण ही कन्याए वधू बनकर शालिभद्र के घर आई थी।

आखिर गोभद्र सेठ ने कहा– आपकी कन्याओ के निश्चय से में प्रभावित हुआ हू और नही चाहता कि किसी प्रकार की अवाछनीय परिस्थिति उत्पन्न हो जिसका प्रभाव कन्याओ के जीवन पर गहरा पडता हो। इसीलिए मैं आपका अनुरोध अस्वीकार नही कर सकता। फिर भी अपने उत्तरदायित्व और कर्त्तव्य का अनुरोध भी मैं टाल नही सकता। मुझे शालिभद्र की सम्मति जान लेनी है। आखिर तो विवाह का प्रत्यक्ष सम्बन्ध उसी से हे। उसका निश्चय ज्ञात होने पर मैं आपको अन्तिम उत्तर दे सकूगा। हा मुझे पूर्ण

विश्वास है कि स्थिति को देखते हुए शालिभद्र विरोध नही करेगा। मेहमान सन्तुष्ट होते हुए विदा हुए।

गोभद्र सेठ खुशी–खुशी शालिभद्र के पास पहुचे। शालिभद्र को देखकर वह और भी हर्षित हुए। शालिभद्र ने पिता को हाथ जोडकर प्रणाम किया और ऊचे आसन पर बिठला कर कहा– आज आप विशेष रूप से हर्षित दिखलाई देते है। हानि न हो तो मुझे भी इस हर्ष मे हिस्सा दीजिये।

गोभद्र ने कहा– बेटा, तुम धन्य हो। मैं आज तुम से यह जानना चाहता हू कि कुल का स्तम्भ बनने के लिए तुम्हे लग्न करना उचित है या नही।

पिता की बात सुनकर शालिभद्र कुछ शर्माया। लेकिन दोबारा पूछने पर उसने कहा–जो अखण्ड ब्रह्मचारी हैं वे धन्य हैं। उन्होने स्त्रियो मे भूले हुए लोगो को जगा कर अपनी ओर आकर्षित किया है।

भीष्म पितामह से जब कहा गया कि यदि आप विवाह करते तो आपके पुत्र भी आप ही सरीखे वीर होते तो भीष्म ने उत्तर दिया– कौन जाने विवाह करने पर सतान होती या न होती? अगर होती भी तो कुछ ही वीर होते। लेकिन ब्रह्मचारी रह कर मैने अखड ब्रह्मचर्य का जो आदर्श उपस्थित किया है उससे चिरकाल तक अनेक वीर होते रहेगे।

शालिभद्र ने कहा– वे महापुरुष धन्य हैं जो अखड ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। जिनमे ब्रह्मचर्य पालन करने का धैर्य नहीं है उन पर जबर्दस्ती यह बोझा नही लादा जाता। फिर भी विवाहित लोगो को उनका आदर्श अपने सामने रखना चाहिए और इस तत्त्व पर पहुचना चाहिए कि धीरे–धीरे वे पति–पत्नी मिल कर भाई–बहिन की तरह हो जाए।

आज लोगो मे यह भावना ही नही है। इस उच्च भावना को भी जाने दीजिए अगर आप परस्त्रियो को माता–बहिन कहा करे तो आपकी दृष्टि कभी दूषित ही न हो। आप भगवान का जप करते है सो अच्छी बात है पर उसकी सार्थकता तभी है जब 'पर–स्त्री माता' का जाप भी जपे। पर–स्त्री माता का जाप जपने से आत्मा मे बल और जागृति दोनो उत्पन्न होते है।

शालिभद्र अपने पिता से कहते है– आपने मेरी इच्छा जाननी चाही है लेकिन यह बात गूढ है। आपने मेरा अधिकार मेरे लिये सुरक्षित रखा इसके लिए मैं आभारी हू। मेरा विचार दाम्पत्य–धर्म का पालन करते हुए कल्याण–[illegible] करने का है।

शालिभद्र की बात सुनकर गोभद्र ने कहा—तुमने बहुत अच्छा कहा। मै भी यही ठीक समझता हू। अव यह भी वताओ कि तुम पत्नी कैसी चाहते हो?

शालिभद्र— यह प्रश्न भी वडा गम्भीर है। मैने एक जगह पढा था कि वही पत्नी योग्य कहलाती है, जो स्वय चाहे वीर न हो, युद्ध में लडने न जावे परन्तु वीर सतान उत्पन्न कर जो पति को देखकर सभी कुछ भूल जाए और पति जिसे देखकर सवको भूल जाए। दोनो एक—दूसरे को देख कर प्रसन्न हो पति जो कार्य करे उसके लिए यह समझे कि मेरा ही आधा अग कर रहा है और वह जो करे उसके विषय मे पति यह समझे कि मेरा आधा अग कर रहा है। यही अच्छी गृहणी है जो अपने सद्गुणो से पति को मुग्ध कर ले। वह शृगार करे या न करे सादी रहे पर जो काम करे ऐसा करे कि पति को परमात्मा का स्मरण होता रहे।

शास्त्र मे स्त्री को धर्मसहायिका कहा है। गहने—कपडे से सजी रहने वाली ही धर्मसहायिका नही होती है। सीता वन मे जाकर भी राम की धर्मसहायिका बनी थी।

शालिभद्र कहते हैं— वही पत्नी श्रेष्ठ गिनी जाती है जो पति मे अनुरक्त रहे और अपने कुटुम्बीजनो को अपने आदर्श व्यवहार से आकर्षित कर ले।

आप लोग अपनी पत्नी को तो अपने मे अनुरक्त रखना चाहते हैं लेकिन आप स्वय इस नियम का पालन करने के लिये बाध्य नहीं होते मगर जो स्वय इस नियम का पालन नही करेगा वह दूसरो से कैसे पालन करा सकेगा?

गोभद्र ने कहा— ऐसे ही पुत्र, सुपुत्र और धर्म को पालने वाले होते है। अब एक बात और बतलाओ, एक ही पत्नी चाहते हो या अनेक?

पिता के प्रश्न के उत्तर मे शालिभद्र कहते है—मै अधिक ज्ञानी तो नही हू लेकिन प्रकृति की रचना देखता हू तो मुझे दो का ही जोडा दिखाई देता है। पक्षी भी इस नियम का पालन करते है। इसलिए एक नर ओर एक नारी का जोडा ही अच्छा है। इसी से सब कार्य सिद्ध हो जाते हे। अधिक मे विघ्न की सम्भावना रहती है।

गोभद्र—होना तो ऐसा ही चाहिए मगर तुम्हे वत्तीस कन्याए व्याहनी

शालिभद्र– ब्याहनी पडेगी इस कथन मे तो जबर्दस्ती है। क्या जबर्दस्ती भी लग्न होते हैं और कन्याओ के पिता भी केसे हैं जो एक ही के साथ बत्तीस कन्याओ का विवाह करना चाहते है उन्हे दूसरा वर नही मिलता?

गोभद्र– मै सब तर्क–वितर्क कर चुका हू। यह विवाह मेरी तुम्हारी या कन्याओ के पिता की इच्छा से नही हो रहे है। यह तो कन्याओ की ही इच्छा है। उनकी प्रतिज्ञा है कि हम विवाह करेगी तो शालिभद्र के ही साथ करेगी अन्यथा कुवारी ही रहेगी। उनका कहना है कि हम भोग की लालसा से विवाह नही करना चाहती वरन् कर्त्तव्य पालन के आदर्श पर पहुचने के लिए करना चाहती हैं।

शालिभद्र– आखिर इसका आशय क्या है? मेरे साथ ही विवाह क्यो?

गोभद्र– यह तू नही समझता। जब तू गर्भ मे था तब तेरी माता की जैसी भावनाए हुआ करती थी उन्हे देखने से जान पडता है कि तू बडा सुकृती है। यही कारण है कि वे तेरे लिए ससार छोडकर आ रही हैं। अब उन्हे निराश करना उचित नही होगा। वे तेरे ऊपर बोझ डालने आती तो मैं स्वय विरोध करता। पर वे तेरा बोझ बाटने आ रही हैं। यह बनाव भवितव्य के आकर्षण से ही बन रहा है। वे सब एक रूप होकर ही आएगी। यद्यपि बहु विवाह दोष है लेकिन इस बहुविवाह मे दोष नही जान पडता बल्कि यह न करने मे ही अनर्थ की सम्भावना हो सकती है।

शालिभद्र मौन रहे। उनकी चेष्टा से गोभद्र समझ गये कि पुत्र ने मूक स्वीकृति दे दी है।

शालिभद्र की सगाई मजूर हो गई। गोभद्र सेठ के यहा और बत्तीस कन्याओ के यहा मगलाचरण होने लगा। विवाह का दिन सन्निकट आने पर बत्तीसो कन्याओ के विवाह के लिए एक ही मण्डप तैयार किया गया।

नियत समय पर बारात रवाना हुई। शालिभद्र के जन्म के समय सारे नगर वासियो ने उत्सव मनाया था तो इसी से अनुमान किया जा सकता है कि बारात कैसी रही होगी। मगल–वाद्यो के साथ, हर्ष और उत्साह के वातावरण मे बारात विदा हुई और मण्डप मे पहुची। वहा बत्तीसो कन्याए सुसज्जित वेष मे उपस्थित थी। विचार होने लगा कि विवाह का मुहूर्त एक ही है तो प्रत्येक कन्या के साथ अलग–अलग विवाह किस प्रकार हो सकता है?

अगर सबका विवाह एक ही साथ किया जाय तो वर के हाथ मे किस कन्या का हाथ दिया जाय? अन्त मे यह निर्णय हुआ कि जो कन्या उम्र मे सबसे बडी हो उसका हाथ वर के हाथ मे दिया जाय और फिर उम्र के क्रम से एक–दूसरी का हाथ पकड ले।

समधी–समधी की मिलनी ओर सास के वधाने का रहस्य भी लोगो को समझना चाहिए। सासारिक कार्यों मे धर्मभावना रखने से कल्याण होता है।

मान लीजिए, दो वेश्याए एक साथ कहीं जाने के लिए निकली। सामने आते हुए साधु उन्हे दिखाई दिये। साधु को देखकर एक वेश्या कहने लगी– यह तो बडा अपशकुन हो गया। ये साधु अपने रोजगार को बर्बाद करने के लिए लोगो को भडकाया करते है और हमारे सुख को नष्ट करने का प्रयत्न करते है। दूसरी ने कहा–ऐसा मत कहो। देखो हम पापो मे पडी हुई हैं। इस समय महाराज के दर्शन हो गए यह बडे आनन्द की बात है। मरते समय कदाचित् इनका स्मरण हो जाए तो अपना कल्याण हो जाएगा।

इन दोनो वेश्याओ ने अपना धन्धा नही छोडा है। फिर भी दोनो मे कुछ अन्तर है या नही?

'है।'

इसी प्रकार सासारिक कार्यो मे भी भावना की भिन्नता के कारण बन्ध मे अन्तर होता है। एक सासारिक कार्य धर्म को सामने रखकर किया जाता है और दूसरे मे धर्म को धत्ता बताया जाता है। इस प्रकार सासारिक कार्यो मे भी पाप की जगह पुण्य का बध किया जा सकता है। विवाह के अवसर पर होने वाले नेग–दस्तुरो मे भी अनेक अच्छे आशय छिपे हैं। उन्हे समझ लेने और अमल मे लाने से जीवन सुधरता है। उदाहरणार्थ मिलनी की ही प्रथा को लीजिए। वर और कन्या के पिता एक–दूसरे के गले मे बाहे डालकर मिलते है। इस मिलन का आशय यह है कि आज से हम और आप एक हो गये। जो काम आप करेगे उसमे हम और हमारे काम मे आप शामिल है आपकी इज्जत हमारी है और हमारी इज्जत आपकी है।

मिलनी आज भी की जाती हे मगर अब उस प्रथा का प्राण चला गया है सिर्फ कलेवर ही बाकी रहा है। अर्थात् सिर्फ रूढि रह गई है और उसमे की भावना चली गई है। यही कारण है कि पहिरावणी मे थोडी सी कसर होती है तो हो–हल्ला मच जाता है। यह सच्ची मिलनी नही है। मिलकर और वचन देकर अगर बदल गये तो फिर मिलना ओर वचन देना ही कैसा।

बाह बदल बाटी बदल वचन बदल बेशूर।
यारी कर ख्वारी करे ताके मुह मे धूर।।

मिलनी का आशय यह है कि आज से मेरा पुत्र आपका है ओर आपकी कन्या मेरी है। मैंने अपना पुत्र देकर आपकी कन्या ली हे ओर अपनी कन्या देकर आपका पुत्र लिया है।

यह भारत की सभ्यता के लग्न थे। भारत मे लग्न यूरोप की तरह नही होता था कि आज एक के साथ किया तो कल दूसरे के साथ और चार दिन बाद तीसरे–चौथे की खोज होने लगी।

मिलनी करने के बाद गोभद्र सेठ मण्डप मे आये। शालिभद्र की बत्तीस सासुए आरती लेकर बधाने आई।

इसमे भी वही तत्व है जो कन्या के घर जाकर उसे ब्याहने मे है। जैन शास्त्र के अनुसार इस अवसर्पिणी काल मे सब से पहला विवाह ऋषभदेव स्वामी का हुआ था। भगवान ऋषभदेव का समय जुगलियो का समय था। सुमगला भगवान की बहिन होती थी। और उसी के साथ उनका विवाह होना था। फिर भी भगवान ऋषभदेव ने अपने घर ही सुमगला के साथ विवाह नही किया था। इन्द्र सुमगला को अपने घर ले गये और ऋषभदेव जी सुमगला को ब्याहने वहा गये। भगवान ऋषभदेवजी ने ऐसा क्यो किया? अगर पुरुष एकान्त बडा है तो कन्या को वर के घर आना चाहिए, वर कन्या के घर क्यो जाता है?

पुरुष अपने को बडा और स्त्री को तुच्छ समझता है। मगर यह ऐसी प्रथा है जो पुरुषो के अहकार को मिटाती है। अगर स्त्री तुच्छ थी तो पुरुष उसके यहा क्यो गया था?

कदाचित् यह सोचकर कि लडके वाला हमारे यहा आया है हम उसके यहा नही गये लडकी वाले को अभिमान आ जाय तो उस अभिमान का नाश करने के लिए सामने जाने की और बधाने की प्रथा है, जिससे अगर कोई कहे कि तुम्हे गरज थी तभी तो ब्याहने के लिये हमारे यहा आये थे तो यह उत्तर दिया जा सके कि हम आये तो थे मगर तुम्हे गरज नही थी तो तुमने हमे बधाया क्यो?

शालिभद्र की सासुए शालिभद्र को हर्ष सहित बधाकर मण्डप मे ले आई। मण्डप मे बत्तीसो कन्याए और लग्न–विधि को जानने वाला तथा समझाने वाला पुरोहित मौजूद था। लग्नविधि के अनुसार पहले वर कन्या की स्वीकृति ली जाती है और उन्हे लग्न के नियम समझाए जाते हैं। इसी के अनुसार शालिभद्र का लग्न हुआ और वर के हाथ मे सबसे बडी कन्या का हाथ देकर अनुक्रम से एक कन्या का हाथ दूसरी कन्या के हाथ मे देकर अग्नि की प्रदक्षिणा होने लगी अर्थात फेरे पडने लगे।

फेरे गोल–गोल क्यो दिए जाते है? यह भी समझने की चीज है। राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस का अर्थ है–गोलमेज सभा। गोलमेज रखकर सब

लोग उसके चारो ओर बैठ जाते हैं तो छोटे–बडे का प्रश्न नही रहता। इसी प्रकार गोल चक्कर लगाने मे आगे–पीछे का भेद नही रहता। इसके सिवाय एक पैर रखने के स्थान पर दूसरे का पैर अर्थात् पेर पर पैर पडता जाता है इसमे इस बात की सूचना है कि तेरे पाव मे मेरा पाव और मेरे पाव मे तेरा है। देखना, अब इस चक्कर से बाहर पैर मत धरना। अगर पैर बाहर रखा अर्थात् नियम को भग कर दिया तो फिर लग्न करना वृथा है।

इस प्रकार शालिभद्र के साथ बत्तीसो कन्याओ के फेरे पडे। सप्तपदी के मत्र पढे गये। आखिर विवाह का कार्य आनन्द और उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। कन्याओ के पिताओ ने यथाशक्ति भेट प्रदान की और यथोचित सत्कार के बाद बारात वापस लौट गई।

भक्ति का वास्तविक स्वरूप समझ लेने पर अन्तरात्मा मे कुछ विलक्षण जागृति हो जाती है। सगम को भक्ति के कारण अपनी भूख दिखाई न दी और न उसे यही विचार आया कि खीर कितनी कठिनाई से मिली है। भक्ति के वश होकर ही उसने थाली की सारी खीर मुनि को बहरा दी और पुण्य के फलस्वरूप ही वह आज शालिभद्र बनकर बत्तीस स्त्रियो का पति बना है।

10 : सुभद्रा को सीख

भद्रा सेठानी की बत्तीसो बहुए उसके सामने खडी है। इस समय भद्रा के हृदय मे कितना हर्ष होगा यह कौन कह सकता है? मगर उस समय एक विलक्षण बात हो गई।

शालिभद्र का जन्म होने के बाद गोभद्र सेठ के मन मे एक पुत्री की कामना रह गई थी। उन्होने सोचा– मैं पुत्र–ऋण से मुक्त हो गया हू अगर पुत्री–ऋण से भी मुक्त हो जाता तो अच्छा था।

आज तो पुत्र का जन्म होने पर हर्ष और पुत्री के जन्म पर विषद अनुभव किया जाता हैं पर यह लोगो की नासमझी है। पुत्री बिना जगत् स्थिर ही कैसे रह सकता है? अगर किसी के भी घर पुत्री का जन्म न हो तो पुत्र क्या आकाश से टपकने लगेगे? सामाजिक व्यवस्था की विषमता के कारण पुत्र–पुत्रियो मे इतना कृत्रिम अन्तर पड गया है। पर यह समाज का दूषित पक्षपात है। जिस पेट से पुत्र का जन्म होता है उसी पेट से पुत्री का। फिर पुत्री को हीन क्यो समझा जाता है? सासारिक स्वार्थ के वश मे होकर औरो की तो बात क्या पुत्री को जन्म देने वाली माता भी पुत्री के जन्म से उदास हो जाती है। ऐसी बहिनो से पूछना चााहिए कि क्या तुम स्त्री नही हो? स्त्री होकर भी स्त्री जाति के प्रति अभाव रखना कितनी जघन्य मनोवृति है। कई स्त्रियो के विषय मे सुना गया है कि वे पुत्र होने पर खाने–पीने की जैसी चिन्ता रखती है वैसी पुत्री के होने पर नही रखती। जहा ऐसे तुच्छ विचार हो वहा सन्तान के अच्छे होने की क्या आशा की जा सकती है? ओर ससार का कल्याण किस प्रकार हो सकता है?

गोभद्र सेठ के अन्त करण मे इस प्रकार का तुच्छ भेदभाव नही था। इसी कारण उन्होंने पुत्री की कामना की। उनकी कामना निष्फल नही गई। उन्हे [illegible] एक पुत्री का भी जन्म हुआ जिसका नाम सुभद्रा रखा गया।

बच्चो की बाल–लीला मे क्या रहस्य है यह जानने की उत्कठा बहुत कम लोगो को होती है। अधिकाश लोग अपनी सतान को गहने पहना कर उनके नाचने–कूदने से उसी प्रकार प्रसन्न होते हैं जैसे बकरी के बच्चे के गले मे घुघरू बाधकर और उसके कूदने पर घुघरू की आवाज सुनकर मालिक प्रसन्न होता है। आज के अधिकाश माता–पिता को सतान विषयक जिम्मेवारी का ध्यान ही नहीं है। अपनी जिम्मेवारी समझकर सतान मे उच्च भावना उत्पन्न करना माता–पिता का धर्म हें। सतान को विषयी बनाना माता–पिता का धर्म नही है।

सुभद्रा बाल्यकाल व्यतीत करके सब कलाओ मे कुशल हुई। सेठ गोभद्र को सुभद्रा से बहुत आशा है। आज सुभद्रा बत्तीस भौजाइयो की ननद बनी है। अपनी भौजाइयो को देखकर सुभद्रा के अन्त करण मे एक विचित्र भावना उत्पन्न हुई वह सोचने लगी– ये भौजाइया भी अपने माता–पिता की पुत्रिया हैं, उन्हे छोडकर यहा आई है। इसी प्रकार मुझे भी एक दिन अपने माता–पिता को छोडकर चला जाना होगा। ये भौजाइया मेरी माता अर्थात् अपनी सास के प्रति जैसे विनय प्रदर्शित कर रही हैं उसी प्रकार मुझे भी अपनी सास के सामने विनय दिखलाना होगा। इनके माता–पिता ने इन्हे क्या–क्या सिखलाया है यह मुझे अभी नही मालूम है। वह तो इनके साथ रहने से मालूम हो जाएगा। भौजाइया मेरी माता के सामने इस प्रकार खडी हें जैसे परमात्मा के सामने खडी हो। अब देखे माता क्या कहती हे?

सुभद्रा और उसकी भौजाइया भद्रा के कथन की प्रतीक्षा कर रही हैं। इसी समय भद्रा ने इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया–

सौभाग्यशालिनी बहुओ! आज अत्यन्त हर्ष का दिन हे कि तुमने यह घर जो अब तक मेरा था अब तुम्हारा भी हो गया हे पवित्र किया। जिस समय से सेठजी ने तुम्हारे विषय मे बात कही उसी समय से में तुम सबको देखने के लिए उत्कठित थी। आज मेरी उत्कठा पूरी हुई। मैंने सुना था कि बत्तीस होकर भी तुम एक होकर रहोगी। तुम्हे धर्म पसन्द हे तुम्हारे माता–पिता तुम्हे अलग–अलग विवाहना चाहते थे लेकिन तुम सबने मिलकर एक शालिभद्र को ही पसन्द किया। उसी दिन से मेरी खुशी का पार नही था। मेने तुम्हारा कथन सुना था कि तुम भोग के निमित्त विवाह नही कर रही हो वरन् इस ससार से पार उतरने के लिए सहायक ढूढकर आखिरी तत्व पर पहुचना चाहती हो। यह ओर भी बडे हर्ष की बात है। वास्तव म तुम भोग

की इच्छुक होती तुम्हारे भीतर स्वार्थ की पधानता होती, तो तुम मेरे घर न आती। बहुओ तुम्हारी उच्च भावना के लिए मैं तुम्हे बधाई देती हू। अब आज से यह तुम्हारा घर है। यह कुटुम्ब तुम्हारा है और मैं भी तुम्हारी हू। इस कुल की पतिष्ठा ही तुम्हारी पतिष्ठा होगी अतएव सदा ऐसे सुकृत्य करना जो तुम्हारे पितृकुल और पतिकुल को उज्ज्वल करे। अन्त मे मै तुम सबको आशीर्वाद देती हू कि तुम चिरसुखी, चिर सौभाग्यवती, सन्तानवती और समृद्ध होओ।

सास की स्नेह और सद्भावना से पूर्ण बातो को सुनकर बत्तीसो बहुए उसके चरणो मे गिर पडी और अपने भाग्य की सराहना करने लगी कि पुण्य के योग से ही हमे ऐसी दयालु सास के यह मगलमय वाक्य सुनने को मिले है।

अपनी माता की बात सुन कर और भौजाइयो की विनम्रता देखकर सुभद्रा दग रह गई। वह मन ही मन कहने लगी—मेरी माता और भौजाइया कितनी भावनाशील हैं। एक दिन मेरे जीवन मे भी यही अवसर आयेगा। उस समय मुझे आज की बाते स्मरण रखनी होगी।

सुभद्रा के इन विचारो की छाया उसके चेहरे पर पडे बिना नहीं रही। प्रसन्न मुख को गम्भीर हुआ देख कर सेठानी भद्रा अपनी पुत्री की भावना तो ताड गई। उसने पूछा— बेटी तू क्या सोच रही है? मैं अनुमान से तो तेरे विचारो को समझ गई लेकिन स्पष्ट रूप से सुनना चाहती हू। अगर तू अपने विचार साफ तौर से कह दे तो मैं उनके विषय मे कुछ समाधान करू।

माता की बात सुनकर सुभद्रा का सिर लज्जा से नीचा हो गया। आर्य बालाओ मे लज्जा का गुण होना स्वाभाविक है। पर लज्जा का अर्थ घूघट ही नही है। लज्जा घूघट मे नही नेत्रो मे निवास करती है। घूघट करने वालियो मे ही अगर लज्जा होती तो वे ऐसे बारीक वस्त्र ही क्यो पहनती जिनमे से सारा शरीर दिखाई देता हो। महीन वस्त्र पहन कर घूघट निकालना तो एक प्रकार का छल है कि कपडे भी पहिने रहे और शरीर कुछ छिपा भी न रहे। इन महीन कपडो मे लज्जा कहा?

सुभद्रा का लज्जित होकर झुकी देखकर भद्रा कहने लगी— बेटी, तेरी यह नम्रता भी सराहनीय है। नम्र रहने वाले को लाभ ही होता है। मॆं तेरी बात समझ तो गई हू। पर तू स्वय कह देती तो और भी अच्छा होता। मेरे अनुमान से तू यह सोच रही है कि एक दिन मुझे इन भौजाइयो की स्थिति का

अनुकरण करना पडेगा। मुझे भी अपनी सास के सामने इसी प्रकार खडा होना पडेगा। कौन जाने मुझे कैसा पति और कैसी सास मिलेगी? परन्तु बेटी। मेरे उदर से जन्म लेकर तुझे यह चिन्ता करना उचित नही है।

माता की इस बात से सुभद्रा सहम उठी। उसके रोम-रोम खडे हो गये। वह विचारने लगी क्या मुझें ऐसी चिन्ता करनी चाहिये? मैने यह चिन्ता करके भूल की है।

सुभद्रा माता की बात का मर्म न समझ सकी। उसने माता से कहा- मैं आपकी इस गम्भीर बात को नही समझ सकी। कृपा करके इसे स्पष्ट कीजिये।

भद्रा ने कहा- शालिभद्र जब मेरे गर्भ मे था उस समय की अपनी भावनाओ को मैं किस प्रकार तुझे समझाऊँ? उस समय मेरे और तेरे पिताजी के भावों मे तनिक भी स्वार्थ नही था। मैं परलोक के हित को सम्मुख रखकर पतिप्रेम मे तल्लीन रही और इसी भावना मे शालिभद्र का जन्म हुआ। शालिभद्र के जन्म के समय मेरे अन्त करण मे जेसी भावनाए थी वैसी ही तेरे जन्म के समय भी थी- कम नही थी। मेरे पास धन है अत मैं अपनी बेटी को कष्ट न होने दूगी। धन देकर जामाता को अपने घर रख लूगी इत्यादि गन्दी भावनाए मुझमे कभी नही हुई। मैंने सदा यही सोचा कि बेटी पराये घर की है और गरीब के घर जाकर भी वह मुझे लजावे नही बल्कि उसके कारण मेरी प्रशसा ही हो। बेटी, इस भावना से मैंने तुझे जन्म दिया हे।

कदाचित् तू अपनी भौजाइयो के गहने कपडे देखकर सोचती हो कि मुझे ऐसा सुख मिलेगा या नही तो यह भी तेरी भूल है। खाने को मिले या न मिले, भूखी रहना पडे गहने-कपडे मिले या न मिले इन बातो से सौभाग्य मे न्यूनाधिकता नही होती। सौभाग्य की प्रशसा इस बात मे हे कि दु ख मे और सुख मे समान भाव से धीरज का अवलम्बन लिया जाय। हीरा जब सोने मे जडा जाता हे तब भी चमक देता हे ओर जब घनो से कूटा जाता है तब भी चमक देता हे। इसी प्रकार सुख-दु ख मे समान भाव रखने वाला व्यक्ति ही वास्तव मे भाग्यशाली हे। लडकी की वडाई इस वात मे हे कि वह मा-बाप के घर से निकल कर सास-ससुर को अपना मा-वाप माने उसी प्रकार उनकी सेवा करे ओर माने कि इनकी सेवा के लिये ही मेरा जन्म हुआ हे। मौज-शौक वाला जीवन जल्दी खत्म हो जाता हे जिसके टूटने मे देर

नही लगती और सादा जीवन हीरे के समान है जो घनो की चोट सहने पर भी अखण्ड रहता है। काच की अपेक्षा हीरा—मोती अधिक मूल्यवान इसीलिये समझे जाते हैं कि वे सकट के समय काम आते हैं। सिर्फ मौज के लिये उनकी कीमत नही है। मौज तो काच से भी हो सकती है परन्तु काच सकट के समय काम नही आता इसी से उसका वह मूल्य नही है मतलब यह है कि विपत्ति की बेला पर काम आना ही हीरापन है।

भद्रा की बात सुनकर सुभद्रा प्रसन्न हुई वह सोचने लगी— अब मै यह बात समझ गई भौजाइयो के आभूषणो मे जो हीरे जडे हैं मैं उन्ही की तरह बनूगी। आज माता ने मेरी आखे खोल दी। मैं सकट की कसौटी पर खरी उतरने योग्य जीवन बनाऊगी और जब ऐसी बन जाऊगी तभी यह समझुगी कि मैने अपनी माता को सुशोभित किया है।

सुभद्रा जब अवसर पाती तो अपनी माता से ऐसी बात छेड देती थी कि जिससे उसके भावी जीवन के काम की बाते उसे जानने को मिल सके। भद्रा ने अपनी पुत्री को ऐसी शिक्षा दी कि वह वास्तव मे सच्ची सुभद्रा बन गई। एक बार भद्रा ने कहा— बेटी विवाह भोग—विलास के लिये नही किया जाता। विवाह करना सग्राम मे उतरना है। वैवाहिक—जीवन मे बडे—बडे विघ्न होते है। पति—पत्नी—धर्म के पालन मे कई बार दु ख बहुत बाधा डालते है। उन दु खो को जीतकर अपने धर्म को बचाना ही विवाह का सच्चा उद्देश्य है। जो स्त्री गहने—कपडे के पीछे पडी रहती है वह गहनो—कपडो के लिये अपने स्त्रीत्व को बेच देती है। सोचो न सीता कलावती और मदनरेखा आदि स्त्रिया कितनी सुकुमारी होगी? तुम तो एक सेठ के घर जन्मी हो और सेठ के घर ब्याही जाओगी पर ये सतिया तो राजघराने मे जन्मी थीं और राजाओ के घर ही ब्याही थी। लेकिन वे सच्ची मा की बेटिया स्त्रियो मे रत्न थी और ससार का कल्याण करने वाली थी।

वह शक्ति न आती जो राम के साथ वन जाने के कारण आ सकी। रावण को राम ने नही वरन् सीता ने ही हरा कर स्त्री जाति का मुख उज्ज्वल किया है। फिर भी बेटी, तू भौजाइयो को देखकर अपने भाग्य के विचार से घबराई यह आश्चर्य की बात है। जैसे सोने की कीमत आग मे तपाने से बढ जाती है उसी प्रकार स्त्री की कीमत कष्ट सहकर धर्म को निभाने मे है, भोग–विलास मे पडी रहने मे नही।

सुभद्रा की रग–रग मे भद्रा ने यह भावना भर दी। माता की सीख का प्रभाव पुत्री के जीवन पर कितना गहरा हुआ यह आगे चलकर मालूम होगा।

11 : सुभद्रा का विवाह

धन्ना अपने ढग का एक ही था। उसमे सुन्दरता थी सज्जनता थी पामाणिकता थी मगर इन सब गुणो के अतिरिक्त उसमे सबसे बडा गुण था–निरीहता। उसने अपने भाइयो के लिये कई बार सासारिक सम्पत्ति को इस प्रकार ठुकरा दिया था जैसे कोई बीच रास्ते मे पडे पत्थर के टुकडे को ठुकरा देता है। वह धन को धूल से अधिक नही समझता था। लेकिन धन–सम्पत्ति उसका पीछा नहीं छोडती थी। लक्ष्मी परछाई की भाति उसका पीछा करती थी और वह सदैव उसके विमुख ही रहता था। धन्ना फक्कडपन मे आनन्द मानता था। मगर सौभाग्य उसके साथ ही रहने मे आनन्द मानता था। धन्ना लक्ष्मी को ज्यो–ज्यो तजना चाहता, लक्ष्मी त्यो–त्यो उसके गले पडती।

एक बार धन्ना सेठ अपनी सम्पत्ति त्याग कर राजगृह आ पहुचा। राजगृह के बाहर कुसुम बाग मे वह ठहर गया। कुसुम बाग सूख गया था पर धन्ना के आते ही फिर हरा हो गया। धन्ना का यह अपूर्व प्रभाव देखकर कुसुम सेठ ने अपनी कन्या कुसुमश्री का उसके साथ विवाह कर दिया। इसके कुछ दिनो बाद राजा श्रेणिक ने भी अपनी सोमश्री नामक कन्या ब्याह दी।

गोभद्र सेठ ने एक दिन विचार किया– मैं पुत्र की चिन्ता से मुक्त हो गया हू। अब सिर्फ सुभद्रा का विवाह करना शेष है। इसके बाद मैं गृहस्थावस्था मे नही रहना चाहता। गृहस्थी के प्रपचो मे सारा जीवन व्यतीत कर देना उचित नही है। अपने अन्तिम जीवन को निवृत्ति के साथ शुद्ध न बनाना अपने आपको चक्कर मे डालना है।

साथ त्याग का भी वर्णन किया गया है। जैन परम्परा के अनुसार इसी आदर्श मे जीवन की सम्पूर्णता है। केवल भोग जीवन की मलिनता है। जैन परम्परा जीवन को भोग की इसी मलिनता मे से निकाल कर त्याग और समय की उज्ज्वलता मे प्रतिष्ठित करना ही उचित मानती है और इसी उद्देश्य से जैनागमो मे कथा-भाग आया है।

सुभद्रा के विवाह से निवृत्त होने के पश्चात् ससार त्याग कर देने की प्रबल भावना गोभद्र सेठ के अन्त करण मे बलवती हो उठी। उन्होने सुभद्रा के विवाह के सबध मे पत्नी से परामर्श लिया। पत्नी से कहा– सुभद्रा के लिए वर चाहे धनवान् हो या गरीब हो, पर सुभद्रा के जीवन को दिव्य बना देने वाला अवश्य हो। वह ऐसा हो जो सुभद्रा की कला को शिखर पर चढाकर उसे ससार मे प्रकाशित कर दे।

गोभद्र कहने लगे– धनवान् वर मिल जाना कठिन नहीं है पर जैसा तुम कहती हो वैसा वर खोज लेने का भार तो बडा बोझा है।

आज पुरुष के साथ विवाह नही होता बल्कि धन के साथ किया जाता है। यही कारण है कि वर कितना ही मूर्ख, दुर्बल और रोगी क्यो न हो उसका विवाह अवश्य हो जाता है और सुयोग्य निर्धन नवयुवक कुवारे फिरते है।

गोभद्र सेठ ने कभी सोचा ही नही था कि सुभद्रा का विवाह धन्ना के साथ किया जायेगा। लेकिन एक धूर्त ने गोभद्र को ऐसा सकट मे डाल दिया कि जिस बात का विचार भी नही किया था वही आगे आई।

बात यो थी–एक धूर्त ने गोभद्र सेठ के विरुद्ध एक मामला चलाया। राजा श्रेणिक के दरबार मे जाकर उसने कहा–मेरी एक आख गोभद्र सेठ के पास गिरवी रखी है। मे रुपया देने के लिए तेयार हू। मेरी आख मुझे दिलाई जाय।

मामला अजीब था। धूर्त ने ऐसे प्रमाण दिये कि राजा श्रेणिक ओर उनके अत्यन्त बुद्धिशाली मत्री दग रह गये। मामला महाराज श्रेणिक के पास विचाराधीन था। उस समय अभयकुमार उज्जयिनी गये हुए थे ओर उनके कार्य का भार धन्ना को सोंपा गया था। धन्ना ने यह मामला अपने हाथ म लिया।

मामले का फेसला किस प्रकार हो सकता हे यह समझने मे धन्ना को देर नही लगी। उसने सारी रूपरेखा सोच ली। इसके पश्चात धन्ना गोभद्र

सेठ के घर मुनीम बन कर बैठ गया और सेठजी से धूर्तवादी को बुलवाने के लिए कहा। वादी के आने पर धन्ना ने उससे कहा–मै पुराना मुनीम हू मेरे ही जमाने मे तुम्हारी आख बधक रखी गई थी। सेठजी सीधे आदमी हैं। इसलिए इन्हे मालूम नही है। तुम रुपये लाओ मैं तुम्हारी आख तुम्हे लौटा दूगा।

धूर्त पसन्न हुआ। उसने कहा– ये लो अपने रुपये और मेरी आख मुझे दो।

धन्ना बोला–यह बडे सेठ का घर है। यहा हजारो आखे बधक होगी। ऐसी हालत मे बिना पहचान के नही जाना जा सकता है कि तुम्हारी आख कौन–सी है? अत तुम अपनी दूसरी आख निकाल कर मुझे दे दो। मै उससे मिलान करके और तोल करके तुम्हारी आख ला दूगा।

धन्ना की बात सुनकर धूर्त के देवता कूच कर गये। उसने भागने का विचार किया पर धन्ना ने उसे पकडवा लिया। वह राजा के सामने पेश किया गया और अन्त मे उसने अपने किए का फल पाया।

इस मामले से गोभद सेठ धन्ना की बुद्धिमत्ता से बहुत प्रभावित हुए। कृतज्ञता की भावना भी उनके हृदय मे उत्पन्न हुई। उन्होने सोचा जिसने हमारी इज्जत बचाई है उसे ही सुभदा देना ठीक है। वह बुद्धिमान भी है, प्रतिष्ठित भी है और राजपरिवार से उसका घनिष्ठ सबध भी है। इस प्रकार विचार कर सेठ धन्ना से मिलने गये। धन्ना की प्रशसा करते हुए उन्होने कृतज्ञता प्रकट की और कहा कि आपने ही मेरी इज्जत बचाई है।

धन्ना– आप तो सच्चे ही थे। इसमे मैंने किया क्या है? निरपराध होते हुए अगर आप मेरे शासनकाल मे दु खी होते तो मुझे कलक लगता। इस प्रकार मैंने जो कुछ किया है अपने को कलक से बचाने के लिए और अपना कर्त्तव्य पालन के लिये ही किया है।

इसी प्रकार करना चाहते हैं। मगर आप बुद्धिमान हैं, इसलिए विचार कीजिए सौतो पर कन्या को देना कहा तक ठीक होगा?

गोभद्र– आपका कथन यथार्थ है। सौत पर कोई अपनी कन्या नही देना चाहता, मगर हमने इस सबध मे विचार कर लिया हे। वहु–नारी दोष कहा होता है, इस बात की अभी मीमासा करने की आवश्यकता नहीं है। यह उचित ही है कि पुरुष का सर्वप्रथम कर्तव्य वह होना चाहिए कि वह ब्रह्मचर्य का पालन करे और यदि ब्रह्मचर्य का पालन न कर सके तो एक पत्नीव्रत का पालन करे। यही सोचकर आपको यह विवाह करने मे असमजस होता होगा। मगर मेरी कन्या विलास नहीं चाहती। उसे आधा अग पाकर अपने जीवन को पूर्ण बनाना है। विश्वास रखिये वह आपके सौतो से झगडा नहीं करेगी। आपका जैसा स्वरूप है जैसा कुल का सस्कार है वैसा ही सुभद्रा का भी है। वह आपके स्वभाव और सस्कार को दैदीप्यमान कर देगी। अतएव आप मेरी प्रार्थना को अस्वीकार न कीजिये।

गोभद्र सेठ के आग्रह के सामने धन्ना को झुकना पडा। आखिर सुभद्रा के साथ धन्ना सेठ का विवाह हो गया। इस विवाह मे सुभद्रा की भावना क्या होती है यह देखने की आवश्यकता है। वैवाहिक जीवन को स्वीकार करने के पश्चात् दम्पती नये तत्व की खोज करते हैं तदनुसार सुभद्रा भी नवीन तत्व की खोज मे लगी है। उस समय उसकी माता ने कहा–सुभद्रा! वीर पुरुष के साथ तेरा विवाह हुआ है। मै आशा करती हू कि तू कायर न बनेगी। तुम्हारे पिताजी से मैंने तुम्हारे पति का हाल सुना हे। उनका जीवन दिव्य है। उन्होने भातृकलह से बचने के लिये कई बार भरे भण्डार छोड दिये हैं फिर भी लक्ष्मी ने उसका साथ नही छोडा। सकट के समय तुम्हारे पति कभी घबराये नही हैं अगर तू अपना जीवन पतिमय बनना चाहती हे तो धर्मपरायण होना ओर सुख–दु ख को समान भाव से ग्रहण करना।

अपनी माता की शिक्षा का सुभद्रा पर क्या प्रभाव पडा यह बात सुभद्रा की स्वतत्र कथा से मालूम होगी। उसने अपने सास–ससुर की सेवा के लिए मिट्टी की टोकरिया ढोईं। सास ने सकट के समय पितृगृह जाने को कहा लेकिन सुभद्रा पीहर न गई। यह शिक्षा सिर्फ सुभद्रा के लिए नही हे सभी के लिए है जो कपडा पहनता है उसी की वह लज्जा निवारण करता है।इसी प्रकार जो शिक्षा को धारण करेगा उसी की इज्जत रहेगी ओर प्रतिष्ठा वढेगी। सुभद्रा ने इस शिक्षा के प्रभाव से कभी साहस नही छोडा। अपने

सास–ससुर को कभी दु खी नही होने दिया। जेठानियो के हलके शब्द सुनकर भी उसकी भौंहे कभी ऊची नही चढी। उसने प्राण दे देना स्वीकार किया पर शील देना स्वीकार नही किया। यह सब माता की शिक्षा का ही प्रभाव था। माता ने जो दहेज दिया था। उस सब की अपेक्षा इस शिक्षा का मूल्य बहुत अधिक है। इस शिक्षा पर अमल करने के कारण ही अन्त मे वह पटरानी बनी और राजा श्रेणिक की पुत्री उससे छोटी रही। उसने अन्त तक यहा तक कि पति के दीक्षा लेने पर भी पति का साथ दिया। इस प्रकार की शिक्षा लेकर सुभद्रा अपने पति के घर चली गई।

12 : गोभद्र की दीक्षा

शालिभद्र और सुभद्रा के विवाह से निवृत्त होकर सेठ गोभद्र ने सतोष की सास ली। उन्होने विचार किया– में अब सासारिक कर्त्तव्य कर चुका हू और अनेक वर्ष गृहस्थ अवस्था मे व्यतीत कर चुका हू। हाय–हाय करते हुए मृत्यु का आलिगन करना उचित नहीं हे। मैंने ससार की सब क्रियाए की हैं तो उच्च से उच्च सयम की क्रियाए भी मुझे करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त–महाजनो येन गत स पन्था।

इस सिद्धान्त के अनुसार मैं ससार मे रहता हुआ ही अगर मरा तो मेरी देखा–देखी और लोग भी यही कहेगे कि बेटा–बेटी ओर सम्पति हुई तो बस, चौथापन मौज करने के लिए है। अगर में गृहस्थी का सारा भार पुत्र के सिर पर थोप दू और बेठा–बेठा खाया करू तो यह अकर्मण्यता होगी। में ऐसी अकर्मण्यता पसन्द नही करता।

आजकल के कुछ लोग खाना तो पुण्य समझते हे पर कमाना पाप मानते हैं। स्त्रिया रोटी तो खाती हैं पर चक्की चलाने मे पाप समझ कर दूसरे से पिसवाती हैं। जिस वस्तु को खाना पाप नही माना उसके बनाने मे पाप मान लेना और दूसरे से बनवाना आलस्यमय जीवन की निशानी हे। खावे तो आप ओर बनवावे किसी दूसरे से कि हमे पाप नही होगा बनाने वाले को पाप होगा, फिर बनाने वाला चाहे हमारे लिए ही क्यो न बनाता हो। यह बडी विचित्र बात है। जो मनुष्य पाप को समझता हे वह पाप से बचने का विवेक रख सकता हे मगर अनभिज्ञ नोकर किस–किस प्रकार की अयतना करता हे ओर अयतना के फलस्वरूप कितना पाप हो जाता हे यह किसे मालूम ह? सेठ से कमाया नहीं जाता इसलिए उसने मुनीम रख लिया। वह मुनीम मालिक के लिए कितना अन्याय करके धन कमाता हे यह किसको मालूम हे?

टॉलस्टाय के पास छह लाख रूबेल (रूस के सिक्के) थे। फिर उसने कहा—आयु के चोथे चरण मे मुझे सन्यास लेना ही उचित है। भारतवर्ष धन्य है जहा अन्तिम जीवन मे दीक्षा लेने की नीति ही बनी हुई है।

गोभद्र को शालिभद्र सरीखा पुत्र और भद्रशीला भद्रा जैसी पत्नी पाकर मौज करनी चाहिए थी या दीक्षा लेनी चाहिए थी? आज के सेठ पुत्र पौत्र और धन के होने पर जब शरीर काम नही देता तो ताश खेलने मे ही समय बिताते है। भोगो के कारण उनका शरीर निकम्मा हो जाता है और चौथेपन मे तो प्राय बिल्कुल गिर जाता है। पहले के लोग ऐसे नही थे। उनका जीवन सयम और नीतियुक्त होता था और इस कारण चतुर्थपन मे भी उनका शरीर सशक्त बना रहता था। गाधीजी कहते है कि जिसका जीवन पूर्ण नीतिमय होगा। वह काम करते—करते ही मरेगा। अर्थात् मृत्यु के समय भी उसके शरीर मे कार्य करने की शक्ति बनी रहेगी। ऐसा नीतिमय जीवन होने पर ही मनुष्य दीक्षा ले सकता है।

भारत मे उस समय जीवन की कला अपनी चरम सीमा पर पहुची थी। तब गोभद्र जैसे सम्पत्तिशाली भी अपनी सम्पत्ति को त्याग कर भिक्षुक और अनगार का जीवन व्यतीत करते थे एव शुद्ध आत्मकल्याण के ध्येय मे लग जाते थे। तभी तो ससार त्याग का महत्व समझ पाता था।

गोभद्र ने अपनी पत्नी और पुत्र को बुलाकर कहा— अब इस घर—ससार का भार तुम्हारे सुपुर्द है।

शालिभद्र यह सुनकर आश्चर्य मे पड गये। उन्होने कहा— पिताजी। इसका क्या मतलब है? मै आपका आशय नही समझ सका।

गोभद्र—अब मैं इस घर-ससार की देख—रेख से निवृत्त हो रहा हू और सिर्फ अपनी आत्मा की देख—रेख करूगा। अर्थात् लोकोत्तर कल्याण साधने के लिये ससार छोडकर मुनि बनूगा।

पिता के वियोग से पुत्र को उदासी होना स्वाभाविक है। लेकिन क्या पुत्र का यह कर्त्तव्य हैं कि वह आजीवन पिता को बैल की तरह गृहस्थी की गाडी से जुता रखे? भद्रा और शालिभद्र समझदार थे। फिर भी इष्ट वियोग के समय वज्र सी कठिन छाती भी फटने लगती ह। अतएव दु खी हृदय से शालिभद्र ने कहा— पिताजी क्या यह समय हमे छोडकर जाने का हे।

[illegible] ने आज कुछ अनोखी शान्ति और गम्भीरता हैं। उन्होने [illegible] द्वारा देना उत्तर देना चाहता हू।

थोडी देर के लिये कल्पना करो मैं बहुत कगाल आदमी था। इतना दरिद्र था कि मेरे घर खाने को अन्न और पहनने को वस्त्र कपडा नही था। कगाली के कारण स्त्री भी आदर नही करती थी। किसी पुरुष ने आकर मेरे सिर पर हाथ रखा और आशीर्वाद दिया। उसके आशीर्वाद से मैं सम्पत्तिशाली हो गया। अब वह सिद्ध पुरुष मुझसे कहता हैं– तुम्हारे पास सब कुछ हो गया है, अब आ जाओ। अब उस देने वाले को जो उसने दिया है उसमे फस कर भूल जाना क्या उचित है? अगर ऐसा उचित हुआ तो सम्पत्ति और सतति नरक का कारण ठहरेगी। क्या मुझे नरक मे पडना चाहिए? जब मैने देने वाले की शक्ति देख ली तो उसमे मिल जाना उचित है या यहा पडे रहना उचित है?

इसी राजगृह नगर मे मेरा जन्म हुआ था। मेरे साथ बहुत से जन्मे थे। उनमे कई मर गये, कई मारे गये और कई दुर्भागी निकले। मतलब यह है कि मेरे सरीखा कोई न रहा। तू मुझे पिता मानता है तो मेरा भी कोई पिता होगा या नही? मैं उसी पिता को देख रहा हू। उसने आपति मे मेरी रक्षा की मुझे सासारिक दृष्टि से पूर्ण सुखी बनाया और आज मेरा नाम सारे राजगृह मे आदर के साथ लिया जाता है। मुझे भद्रा जैसी पत्नी मिली। उसके साथ मेरा जीवन पवित्र बीता। यह कभी विलास मे तन्मय नहीं हुई। भद्रा ने अपनी धर्मभावना से मुझे जो सुख दिया वह स्वर्ग मे भी नही मिल सकता। लेकिन यह सब उसी अदृष्य महापुरुष का प्रताप है। तुम्हारी माता को कभी चिन्ता नही हुई। सिर्फ एक बार पुत्र के लिये चिन्ता हुई थी। वह भी अपने सुख के लिए नहीं किन्तु पति ऋण से मुक्त होने के लिए। उसने अपने सुख की अपेक्षा धर्म को ही अधिक समझा है। उसी धर्म भावना से उसकी चिन्ता मिट गई और तुम्हारा जन्म हुआ। तुम्ही सोचो कि उस धर्मरूपी सिद्ध पुरुष को कितनी शक्ति है। उसी की कृपा से तुम्हारा और तुम्हारी बहिन का जन्म हुआ। साराश यह है कि जो जो इच्छा की धर्म के प्रताप से पूरी हो गई। मैं एक ही पुत्रवधु चाहता था पर मिली बत्तीस। अगर धर्म सहायक न होता तो गोभद्र को कौन पूछता? जिसकी कृपा से यह सब मुझे प्राप्त हुआ हे उसी को भेटने के लिए मैं जाता हू तो क्या तुम्हारा रोकना उचित है? जिसकी कृपा से सब प्रकार का गार्हस्थिक सुख भोगा है उसे भूल जाना कृतघ्नता होगी।

उस सुख माथे सिल पडे, नही आवे हरि याद।
बलिहारी उस दु ख की हरि से मिलावे हाथ।।

गोभद्र कहते हैं– शालिभद्र! तुम्हारा बाप गडढे मे नही गिर रहा हे। सयम लेना दु ख नही है किन्तु ईश्वर से मुलाकात करना हे।

पिता के हृदय मे त्याग भावना आने से पुत्र और पुत्र के हृदय मे त्याग भाव आने पर पिता घबरा जाता है। स्वार्थ भावना ही इसका मूल है।

गोभद्र के समझाने से शालिभद्र, भद्रा, सुभद्रा और पुत्र–वधुओ के नेत्रो मे दिव्यज्योति प्रकट हो गई। अभी तक उनका रोक रखने का जो विचार था वह शिथिल हो गया। सभी ने नजर नीची कर ली मानो स्वीकृति तो नही दे सकते पर अस्वीकृति भी नही दे सकते।

गोभद्र कहने लगे– ईश्वर की जो कृपा अभी नही दिखी थी वह भी आज दिखाई दे गई। कुटुम्ब एक जाल है। कुछ भी हो ऐसे अवसर पर कुटुम्बीजन आसू बहाते ही हैं। लेकिन परमात्मा की अपरिमित अनुकम्पा से मुझे ऐसा कुटुम्ब मिला है कि सहज ही सब अनुकूल बन गये।

तत्पश्चात् गोभद्र ने अपनी पत्नी से कहा–भद्रा, यह पुत्र तुम्हारी गोद है। इसे अपना पुत्र न मानना ईश्वर का पुत्र समझना।

पुत्रवधुओ से उन्होने कहा– बहुओ! तुम भी ध्यान रखना। अपने इस पति को भोग का कीडा मत समझना। यह तुम्हारा नहीं, परमपिता परमात्मा का है। तुम इसके पैरो की बेडी मत बनना। इसके मगलमय महामार्ग मे सहायक बनना पोषक बनना।

और सुभद्रा! शालिभद्र तेरा वीर है। तू इसे सच्चा वीर बनाना। तुम्हारा पिता घर नही रहा है। धर्म तुम्हारा सच्चा पिता है। सावधान होकर उसकी सेवा करना।

इस प्रकार सब कुटुम्बी जनो को समझा–बुझा कर और नौकरो चाकरो को यथा योग्य सान्त्वना देकर गोभद्र सेठ सयम ग्रहण करने के लिये तैयार हुए। गोभद्र सेठ सभी नगर निवासियो को प्रिय थे। अत नगरवासी और कुटुम्बीजन उनके साथ रवाना हुए।

गोभद्र सेठ ने अपनी सासारिक यात्रा का अन्तिम सन्देश इस प्रकार सुनाया– आप सोचते होगे कि मे आज आप सबको त्याग रहा हू लेकिन मेरी अन्तरात्मा ने ससार के निस्सार स्वरूप को समझ लिया। विषय भोग मुझ विष से प्रतीत होते है। ऐसी स्थिति मे मुझे एक–एक क्षण भारी पड रहा है। सोचता हू– कब ससार का भार त्याग कर लघता धारण करू?

दु ख है अधिकाश पारस्परिक द्वेष—कलह आदि से ही हे। इन्ही दोषो का उपशमन करने के लिये राजा की स्थापना की जाती है। प्रजा आपस मे लडती है तभी तो न्यायाधीश की ओर दूसरे अधिकारियो की आवश्यकता पडती है। प्रजा न लडे तो हाकिम की आवश्यकता ही न पडे। में आपके आपसी विवाद ओर कलह को दबाने का यथाशक्ति प्रयत्न करता था और इसी कारण आपको प्रिय था। आप लोग मुझे लक्ष्मी का स्वामी समझते थे लेकिन आज तक में आप सवके ऊपर ऐसी सत्ता नही चला सकता था जैसी आज लक्ष्मी और परिवार को त्याग कर अकिचिन बन कर चला सकूगा। कुटुम्ब और सम्पत्ति आदि को मैं त्याग रहा हू समर्पण कर रहा हू। कैसे ओर किसे समर्पण कर रहा हू—

आज म्हारा समव जिनजी का, हित चित से गुण गास्या—राज।
दीन दयाल दीन बन्धव के, खानाजाद कहास्या राज।।आज।।
तन धन प्राण समर्पी प्रभु ने, इन पर वेग रिझास्या राज।।आज।।
मैं प्रभु के चरणो में तन धन और प्राण समर्पण कर रहा हूँ।

शालिभद्र! मेरे इस निष्क्रमण और समर्पण को याद करके समझना कि हमारा रक्षक और पिता कौन है? मैं तुम सबको छोडता नही हू बल्कि हिफाजत मे रख जाता हू। मैं जिसकी शरण मे जा रहा हू। वह सब शरणो का शरण है। उसी की शरण सच्ची शरण है। तुम भी उसी की शरण मे रहना।

भद्रा! तुम भी उसी त्याग की शरण मे रहना जिस त्याग की शरण मे तुम्हारा पति जा रहा है। जिन स्त्रियो के पति बुरे आचरण करके मरे हैं वे स्त्रिया रोवे तो भला रोवे, तुम्हे रोने की आवश्यकता नही है। मे उस शरण को प्राप्त कर रहा हू जिसका मिलना साधारण बात नही है।

पुत्रवधुओ, मै अव तुम्हे छोटे श्वसुर की शरण मे न रख कर बडे श्वसुर की शरण मे रखता हू ओर उससे तुम्हारी पहचान कराता हू। उस श्वसुर का ध्यान करने से तुम्हारा मगल होगा।

राजगृही के सन्नागरिको, अब तक में यथासम्भव आपको परामर्श देता रहा हू। अब इस त्यागवृत्ति को अपना कर भी आपका पथ प्रदर्शन कर रहा हू। आप अधिक न कर सकते हो तो तो कम से कम इतना अवश्य करना कि धन—सम्पत्ति के लिए अन्याय मत करना। गरीबो पर दया भाव रखना। जड सम्पत्ति ही सब कुछ नही हे। मनुष्य की असली सम्पत्ति तो सयम सहानुभूति अनुकम्पा परोपकार आदि दिव्य गुण हैं। इनकी उपेक्षा मत करना। इनका त्याग करके जड सम्पत्ति को ग्रहण मत करना। आप इतना

करेगे तो सम्पत्ति के स्वामी बनेगे। अगर आपको मै प्रिय रहा हू तो आप उसे मत भूलना जो मुझे पिय है–मै जिसकी शरण ग्रहण कर रहा हू।

गोभद्र की हृदय से निकली हुई भावभरी वाणी सुन–कर सब लोग हर्षित हुए। सब उनकी पशसा करने लगे और अपनी दुर्बलताओ के लिए अपने को धिक्कारने लगे। एक ने कहा–गोभद्र सेठ तो अपनी अखूट सम्पत्ति और सुशील परिवार को भी त्याग कर अनगार बन रहे हैं और एक हम है जिनसे रात्रि भोजन का भी त्याग नही हो सका है। हम लोग अभी तक झूठ–कपट आदि मोटे–मोटे दुर्गुण को भी छोड नही सकते।

सब लोगो के साथ–साथ सेठ गोभद्र भगवान महावीर के पास मे पहुचे। भगवान के निकट पहुचकर सेठजी भगवान के चरणो मे गिर पडे। यह देखकर साथ के लोग गद्‌गद्‌ हो गए। भावो की तीव्रता के कारण सबको रोमाच हो आया। गोभद्र सेठ का आत्मसमर्पण देख कर सब विहल हो गये। सबने एक स्वर से कहा–गोभद्र सेठ धन्य है। इनका जीवन सफल है, सुफल है।

शालिभद्र भद्रा सुभद्रा धन्ना सेठ और पुत्रवधुओ की दृष्टि गोभद्र सेठ पर ही जमी हुई थी। देखते–देखते सेठजी ने सब वस्त्राभूषण उतार दिये ओर अपने ही हाथो अपने सिर के बालो का लोच करने लगे। इसके बाद उन्होने मुनि का परम पवित्र वेश धारण करके भगवान महावीर की शरण मे जाकर भगवान से प्रार्थना की– प्रभो मुझे तारो। आपके सिवाय कोई दूसरा तारनहार दिखाई नही देता।

इस प्रकार कहकर गोभद्र ने सयम अगीकार किया। बहुत समय तक व्रत ओर सयम का निरतिचार पालन करके अन्त में सलेखना करके शरीर का त्याग किया। शरीर त्याग कर वह देव हुए।

है नही पड सकता। सयमी साधु मानव जीवन की उच्चतम अवस्था का वास्तविक चित्र उपस्थित करते हैं तप त्याग की महिमा प्रदर्शित करते हैं और उन पवित्र भावनाओ का प्रतिनिधित्व करते हें जिनके सहारे जगत टिका हुआ है और जिनके अभाव मे मनुष्य मिट कर राक्षस बन जाता हे। साधुओ द्वारा हाने वाला ससार का यह लाभ कुछ कम नहीं है—बहुत अधिक है। विवेकशील पुरुष ही इस लाभ के मूल्य को भली भाति आक सकते हैं।

गोभद्र सेठ का व्यापार व्यवहार मामूली नहीं था। वह राजगृह के प्रतिष्ठित पुरुष थे। अपने पारिवारिक उत्तरदायित्व के साथ ही साथ उन पर अन्य कुटुम्बो का भी उत्तरदायित्व था। दीक्षा लेने के बाद वह सारा उत्तरदायित्व शालिभद्र के कन्धे पर आ गया। विशाल उत्तरदायित्व आ जाने पर शालिभद्र ने क्या—क्या विचार किये होगे और किस प्रकार जीवन का परिवर्तन किया होगा यह बात अपने ही अनुभव से समझी जा सकती है। फिर भी विनीत शालिभद्र ने कभी अपने पिता को मन से भी उलाहना नहीं दिया। उन्होने कभी नही कहा कि मेरी यह अवस्था तो भोग के योग्य थी किन्तु इस अवस्था मे ही मुझ पर इतना भारी बोझा डाल दिया गया।

इस प्रकार झुझलाहट भरे विचार आने से व्यवहारिक जीवन मे भी त्रुटि होती है और आध्यात्मिक जीवन मे भी। लक्ष्मी के लिए पुत्र से झगडने वाले और पुत्र पर दबाव डालने वाले पिता ससार मे बहुत मिल सकते हैं परन्तु ऐसे पिता विरले ही मिलेगे जो अपना सर्वस्व त्याग कर पिता होने के साथ ही गुरु भी बन जाते हैं। शालिभद्र सुसस्कारी और समझदार थे। उन्होने यही सोचा— मेरे पिता धन्य हैं। उन्होने मेरे सामने बडे त्याग का आदर्श उपस्थित किया है। उनके साथ मेरा पिता—पुत्र का अमिट सम्बन्ध तो है ही गुरु—शिष्य का नवीन सम्बन्ध भी हो गया है। वह सदैव मेरे हृदय मे वास करते रहे। हृदय मे उनका वास होने से पाप आने के सब द्वार बन्द हो जाएगे।

पापो का आना कैसे बन्द हो जायगा?

पाच सात मिल सहेलिया रे हिल मिल पानी लाए।
ताली दे खडखड हसे, वा को चित्त गगरिया माए।।
मना ऐसे जिन चरणो चित्त लाय अरिहन्त के गुण गाय।।मन ।।

पाच—सात पनिहारिने साथ मिलकर पानी भरने जाती हें। वे आपस मे एक—दूसरी के हाथ पर हाथ भी मारती हे हसी—ठट्ठा भी करती हे मगर उनको ध्यान यही रहता है कि कही हमारा घडा नीचे न गिर जाये। इसी प्रकार शालिभद्र अपने घर मे रहकर खाता है पीता हे व्यापार—व्यवसाय भी

करता है फिर भी उसका ध्यान अपने पिता मे ही रहता है जैसे चित्तवृत्ति अरिहत भगवान मे लग जाने पर दूसरी ओर नही जाती उस प्रकार शालिभद्र को अपने पिता का ध्यान होने से दूसरा ध्यान नही होता और जब दूसरा ध्यान ही नही होता तो पाप कैसे हो?

इस प्रकार खाते–पीते, उठते–बैठते या कोई भी क्रिया करते समय शालिभद्र के हृदय मे गुरु के रूप मे पिता का निवास था। वह यही कहा करते थे कि पिताजी! आप धन्य है। आपने मेरे सामने जो आदर्श उपस्थित कर दिया है उसके कारण ससार की यह वस्तुए मुझे कभी दबा नही सकती।

गुरु के रूप मे पिता का ध्यान रखने से क्या लाभ होता है यह शालिभद्र के चरित से सीखा जा सकता है।

13 : ऋद्धि की वृद्धि

गोभद्र मुनि तपस्या के फलस्वरूप देवलोक मे उत्पन्न हुए। उनके वहा जन्मते ही सामानिक देवो ने खमा–खमा की ध्वनि करके उनका अभिवादन किया। उन्होने पूछा–आपने क्या दान दिया था क्या तप किया था, क्या सुकार्य किया था, जिससे कि आप हमारे यहा पधारे है? देवलोक पहुच कर शालिभद्र के पिता ने अवधिज्ञान से जाना कि मेरे पुत्र के हृदय मे मै ही बस रहा हू। ऐसे विनीत पुत्र को किसी दूसरे का आश्रित नहीं बनने देना चाहिए। ससार मे बहुतो के गले घोटने से किसी एक का भला होता है। मेरा पुत्र भी कही इस प्रकार के पाप मे प्रवृत्त न हो जाय। जो पुत्र त्याग की इतनी सराहना करता है उसे मैं ऐसी शक्ति क्यो न दू कि वह ससार का सुख भी भोग सके और ससार से उसी प्रकार निकल भी जाय जिस प्रकार मक्खी मिश्री का स्वाद लेकर उड जाती है।

मित्रो! देवो को प्रसन्न करने का तरीका यही है। धर्म मे मन लीन रहने से ही देव आपके वश मे हो सकते हें। मन पाप मे डूबा रहे ओर देवा की सहायता की इच्छा की जाय तो देव आख उठा कर भी नही देखेगे।

कवि कहता हे– देखो सुपात्रदान का मगल केसा होता हे। सगम मे केसी धीरता ओर गभीरता थी कि उस स्थिति मे भी उसने खीर का दान दिया ओर फिर किसी से यहा तक कि अपनी माता से भी उसका जिक्र नही किया। इस प्रकार की धीरता और गम्भीरता से देव प्रसन्न होते हे। इसी का फल हे कि शालिभद्र होकर भी उसने ऋद्धि ओर सम्पदा को विकार समझ रखा हे। वास्तव मे चाह करने से धन नही आता। हृदय मे त्याग की भावना हो तो लक्ष्मी दोडकर चली आती हे।

शालिभद्र पर आज देव की कृपा हे। यह देव कृपा से सुपात्रदान का फल ही हे। उसका फल तो अनन्त अक्षय अव्याबाध सुखो से सम्पन्न मुक्ति

है। देवरूप गोभद्र परोक्ष रूप से शालिभद्र के सुखो की पूर्ति करने लगा मगर शालिभद्र को इस बात का पता नही था।

शालिभद्र के यहा खेतीबाडी की जो सम्पदा थी वह दैवी कृपा से अनेक गुणा फल देने लगी। शालिभद्र की लक्ष्मी भी पहिले से कई गुणा बढ गई।

अब देखना चाहिए कि लक्ष्मी किसे कहते हैं? साधारण जन समझते है कि लक्ष्मी कलदार को अर्थात सिक्के को कहते हैं। लेकिन वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो सिक्का लक्ष्मी नही लक्ष्मी का नाशक है। लक्ष्मी वह है जिसे पाकर मनुष्य स्वतन्त्र बनता है। लक्ष्मी की पाप्ति होने पर मनुष्य कर्तव्य का स्वामी बनता है और उसके भी तर ऐसी क्रिया जागती है कि लक्ष्मीपति कहलाता है और सम्मान का भागी होता है। मगर सिक्के का प्रचलन आपको स्वतन्त्र बनाने के लिए नही वरन् परतन्त्र बनाने के लिए है। बहुत प्राचीन काल मे वस्तुओ का परस्पर मे विनिमय होता था। लोग अपने पास की एक चीज देकर दूसरे के पास की दूसरी चीज ले लेते थे। उस समय सिक्का नहीं था। सिक्के के अभाव मे लोगो मे सग्रहशीलता नही थी। उतना ही सग्रह किया जाता था। जितने की आवश्यकता होती थी। सग्रह होता था सिर्फ अनाज का। कदाचित आवश्यकता से अधिक कोई रखता भी तो एक साल दो साल या बहुत हुआ तो चार साल। लेकिन आजकल लोग अनाज का कितना सग्रह करते है और सिक्के का कितना? अनाज का सग्रह नही के बराबर है और सिक्के का कोई हिसाब ही नही। सिक्का सग्रह की लोलुपता आज बेहद बढ गई है और इसी लोलुपता की बदौलत समाज मे विषमता का विष व्याप्त हो गया है। इस विषमता के विष के कारण आज सर्वत्र अशाति की ज्वालाए लपलपा रही हैं और वर्गयुद्ध छिडा हुआ है। इस प्रकार जिस सिक्के ने मनुष्य समाज को मुसीबत मे डाल दिया है उसे लक्ष्मी का पद कैसे दिया जा सकता है?

शास्त्र मे लक्ष्मी की व्याख्या इस प्रकार की गई है–

खित्त वत्थु हिरण्ण य, पसवो दास पोरुस।
चत्तारि कामखधाणि तत्थ से उववज्जई।।

उत्त /3/गा 17

आज आप जिसे लक्ष्मी मान रहे हें उस लक्ष्मी की कृपा से कितने परतन्त्र हुए है इस बात का जरा विचार कीजिए।

भगवान महावीर कहते हैं कि पहली लक्ष्मी खेत हे। कहा जा सकता है कि खेत लक्ष्मी कैसे है? लक्ष्मी तो रुपया हे। मगर लोगो ने जिस दिन से यह उलटा हिसाब लगाना सीखा हे उसी दिन से वे निराधार बन गये हें कल्दारो को उडते देर नही लगती पर खेत कही नही जा सकते। कदाचित चोर चोरी कर ले या दुष्काल पड जाय तो एक या दो फसल की हानि हो सकती है मगर खेत तो आखिर फल देगा ही।

आज यह माना जाता है कि खेत का मालिक राजा हे और शास्त्र कहता है कि खेत का मालिक कृषक है। में पूछना चाहता हू कि खेत मे खेती करता कौन है–राजा या किसान? किसान बेचारा खेत जोतता ओर बोता हे और उत्तम परिश्रम करता है। चोटी से एडी तक पसीना बहाता है। सर्दी गर्मी और धूप–वर्षा की परवाह न करके रात दिन खेती के काम मे जुटा रहता है। उसका तो खेत नहीं, जो मसनद के सहारे गद्दो पर लेटा रहता है गुलछर्रे उडाता है, कभी खेत की सूरत भी नही देखता उस का खेत माना जाता है। यह कैसा विचित्र न्याय है। शास्त्र कहता है कि खेत उसी का हे जो खेती करता है। कर्म–भूमि उसी की है जो स्वय उसमे कार्य करता हे।

दूसरी लक्ष्मी वत्थु (वस्तु) है। वस्तु का अर्थ हे मकान आदि। तीसरी लक्ष्मी हिरण्य अर्थात् सोना है। यह ध्यान मे रखना चाहिये कि सोने को लक्ष्मी माना है मगर सिक्के को नहीं। पशु और दास भी सम्पति मे माने गये हें।

शालिभद्र के घर यही लक्ष्मी थी जो देव कृपा से लाख गुणा हो गई। जो पुरुष जिस कार्य मे नियुक्त थे। उनमे ऐसी शक्ति आ गई कि उनके प्रयत्न से मन की जगह मनो भर चीज पेदा होने लगी।

यहा यह प्रश्न उठ सकता हे कि शालिभद्र की ऋद्धि शालिभद्र के पास रही या कुटुम्बियो के काम मे भी आई। यह पहले ही कहा जा चुका हे कि शालिभद्र की ऋद्धि ऐसी नही थी कि भण्डार मे भर दी जाती। यह तो ऐसी ऋद्धि थी कि निपजे तो सव खावे। अन्न निपजे तो मनुष्य खाव ओर घास निपजे तो पशु खावे।

जब सेठ गोभद्र ने दीक्षा ली तो लोग कहते थे कि शालिभद्र अभी बालक है और भोला है। इसलिए यह तो खाता-पीता है और मौज ही करता रहेगा। पत्निया भी इसके एक नही बत्तीस हैं। एक पत्नी वाले को ही अपने आपकी खबर नही रहती तो इससे हमारा प्रतिपालन क्या होगा? लेकिन शालिभद्र की बढी हुई ऋद्धि देखकर लोग चकित हो गये। कहने लगे-शालिभद्र भाग्यशाली है इसे देव सहायता करते हैं। शालिभद्र से कदाचित कोई चर्चा कर ता तो वह उत्तर देता-यह सब पिताजी का प्रताप है। धर्म मे कमी न हो तो किसी बात की कमी नही हो सकती।

इस प्रकार सुपात्रदान के प्रभाव से शालिभद्र की ऋद्धि बढ गई और देव उसका सहायक हुआ। देव की वैक्रिय लब्धि ऐसी होती है कि वह अपनी एक भुजा से कई जम्बुद्वीप बना सकता है। उसकी एक भौह पर बत्तीस नाटक हो ऐसी उसकी शक्ति होती है। जितने समय मे हम एक कदम चलते हैं उतने समय मे देव सिर काटकर उस सिर का चूरा करके और फिर उसके पुद्गलो को बिखेर कर पीछे एकत्र करके फिर सिर बना सकता है। आजकल के डॉक्टर भी सिर उतार कर ऑपरेशन करके सिर जोड सकते हैं स्त्री के गर्भ को बकरी के पेट मे रख सकते हैं तो देव की शक्ति तो लोकोत्तर शक्ति है। उसके आश्चर्यजनक कामो का क्या कहना है?

शालिभद्र को उसके पिता रूपी देव की जो शक्ति प्राप्त हो रही है वह कवि के कथनानुसार सुपात्र दान की ही शक्ति है। इस शक्ति को आप भी प्राप्त कर सकते हैं मगर चाहिए बिनाकामना के सुपात्रदान देने की आन्तरिक भावना। सब देव आपके ही भीतर मौजूद हैं लेकिन पर्दा खुले तब पता चले।

देव ने शालिभद्र की ऋद्धि का विस्तार लाख गुना कर दिया। लाख गुना कहना तो आलकारिक भाषा है। आशय यह है कि उसकी ऋद्धि पहले से बहुत बढ गई थी। तात्पर्य यह है कि शालिभद्र की खेती मे पहले जो दोष थे उन्हे देव ने दूर कर दिया। लोग तो रूपया-पैसा बढाना चाहते है। उन्हे मालूम नही कि रुपये-पैसो का बढना गुलामी का बढना है और अन्न का बढना स्वतन्त्रता का बढना है।

शालिभद्र के खेतो मे बहुत उन्नति हो गई और खेतो मे उन्नति होने से उसकी शारीरिक शक्ति भी बढ गई। उसकी यह ऋद्धि पुण्यानुबन्धी पुण्य की ऋद्धि है। इसलिये उसके द्वारा शालिभद्र स्वय आनन्द मे रहता है और दूसरो को भी आनन्द पहुचाता है। अपन जिस खाने से दूसरो को कष्ट पहुचे

उसे पापानुबन्धी पुण्य समझना चाहिये। दूसरो का भोजन छीन कर आप खा जाना वस्तुत पुण्य नही कहा जा सकता। दूसरो को रूखी रोटिया भी न मिले और आप बादामपाक उडावे यह कैसे उचित हो सकता है? मित्रो ! भगवान महावीर का आपके उपर जो ऋण चढा है उसे चुकाइये और पुण्य की पूजी से पाप मत कमाइए।

इतनी ऋद्धि बढ जाने पर भी कभी शालिभद्र ने अभिमान नही किया बल्कि वह यही सोचता रहा कि मैने पूर्वभव मे सुपात्रदान नही दिया और सुकृत नही किया है। लेकिन लोग जरा सी गुलामी की सम्पदा पाकर अपने को पुण्यात्मा समझ बैठते हैं ओर अभिमान के पुतले बन जाते हैं। शालिभद्र के विचारो को देखते हुए आपको कितना पश्चात्ताप करना चाहिये?

शालिभद्र के घर अन्न रस बढने से कितनो ही को लाभ पहुचा। यह सब सुख शाति एक व्यक्ति के सुपात्रदान का फल था। एक कामधेनु के दूध का उपयोग सिर्फ एक ही मनुष्य नही करता उससे न जाने कितने लाभ उठाते हैं।

लोग गहनो और कपडो के लिये दूसरो को सताते हैं। पर शालिभद्र की बात न्यारी थी। शालिभद्र ओर उसकी बत्तीस पत्निया जैसे ही नही चुकती कि उसी समय 33 पेटिया गहनो और कपडो से भरी हुई उसके यहा उतर आतीं और प्रत्येक मे नौ नौ आभूषण निकलते थे। एक पेटी पर शालिभद्र का और बत्तीस पेटियो पर उसकी बत्तीस पत्नियो के नाम अकित रहते थे। यह सब देव कृपा थी। जो शालिभद्र को सुपात्रदान के फलस्वरूप प्राप्त हुई थी।

सचमुच वे पुरुष धन्य हैं जिन्होने पूरी तरह पुण्य का आचरण किया है और सुपात्र को दान दिया। ऐसे पुरुष अपने प्रत्येक कार्य से दूसरो को सुख पहुचाते है। अपने लाभ के लिए स्वार्थ के लिए दूसरो को कष्ट पहुचाने वाले पुण्यात्मा नही कहलाते। शालिभद्र को पुण्यशाली इस कारण कहा गया कि उसकी बदौलत दूसरो को सुख--शाति प्राप्त होती थी।

कवि का कथन है कि आप इन पेटियो का विचार करके ललचाओ मत वरन् पात्रविशेष का ज्ञान करो और उसका पोषण करो। दान के लिए पाच प्रकार के पात्र बतलाए गए है– उत्तम मध्यम जघन्य पात्रापात्र करो और कुपात्र। इनका अर्थ समझ कर उत्तम पात्र का पोषण करो। उत्तम पात्र मुनि है मध्यम पात्र श्रावक हे जघन्य पात्र सम्यग्दृष्टि हे पात्रापात्र मे लगडे लूले आदि आते हे ओर कुपात्र वे जो खाकर मस्ती करते है। अगर उत्तमपात्र

का सयोग मिल जाय तो कहना ही क्या है! कल्पना कीजिये आपके यहा जवाहरात की दूकान है। उसमे छोटे हीरे भी हैं। और बडे हीरे भी है। अगर छोटे हीरे का ग्राहक आ जाए तो आप उसे देगे या नहीं? अवश्य देगे। लेकिन भावना तो यही रहेगी कि बडे हीरे का ग्राहक आ जाता तो अच्छा रहता। इसी कारण उत्तम पात्र मुनि आवे तब तो अच्छा ही है, मगर खाने-पीने मे दुखी और दान की भावना होना भी कम बात नही है।

कि शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा।
युष्मन्मुकेन्दुदलितेषु तम सु नाथ।।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके।
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रै ।।

अर्थात हे नाथ! रात को प्रकाश देने वाले चन्द्रमा की और दिन मे प्रकाश करने वाले सूर्य की आवश्यकता नही। मुझे तो केवल तुम्हारे मुख कमल की ही जरूरत है। चन्द्र और सूर्य अधकार का नाश करते हैं और तुम्हारा मुख कमल भी अधकार का नाश करता है फिर तुम्हे छोड कर मैं उन्हे क्यो चाहू? खेती निपजाना हो तो पानी की माग की जाय पर जब खेती निपज गई हो तो पानी मागने से क्या लाभ है? इसी प्रकार तुम मिल गये तो दूसरे को क्यो पुकारू?

भक्ति का यह उदाहरण इसलिए दिया गया है कि सुपात्र मिल जाने पर दूसरे को पुकारने की आवश्यकता नही रहती। जिसे भगवान मिल जावे वह सूर्य चन्द्र को अधिक क्यो माने? इसलिये भक्त जन कहते हैं-त्रिलोकी नाथ के सिवाय मुझे और कुछ नही चाहिये। त्रिलोकीनाथ मिल जाए तो दूसरो को दु खी करके मुझे जो सम्पत्ति लेनी पडती है सो मेरा पाप कट जाय। सूर्य ओर चन्द्रमा का उदय होने से किसी को सुख भी होता है ओर किसी को दु ख भी होता है। लेकिन भगवान के मुखकमल से किसी को दु ख नही होता। इसी प्रकार सुपात्र का पोषण करने से किसी को दु ख नहीं होता सुख ही सुख होता है।

यहा बहिने प्रश्न कर सकती है कि जब शालिभद्र की स्त्रिया गहने पहनती थी तो हमारे गहनो की टिका–टिप्पणी क्यो की जाती है? उन्हे सोचना चाहिए कि शालिभद्र की स्त्रियो के गहनो के लिये किसी गरीब की गर्दन नही मरोडी जाती थी। आप अपनी बगडी से पूछो कि वह कैसे आई है?

एक व्यापारी देश की दरिद्रता बढाने वाला व्यापार करता है और दूसरा दरिद्रता को दूर करता है। इन दोनो मे कौन अच्छा है?

'दरिद्रता दूर करने वाला।

भारतवर्ष आपकी जन्मभूमि है। आप यही के अन्न–जल से पले हैं। फिर भी आप देश के हित–अहित का विचार नही करते और देश–हित की उपेक्षा करके अपने व्यक्तिगत हित की चिन्ता मे डूबे रहते हैं। आप समझते हैं कि हम तो मौज करने के लिये ही पैदा हुए हैं। मगर जन्म तो शालिभद्र का है, जो स्वर्ग की सम्पत्ति को अपने घर खीच लाया है।

शालिभद्र के लिए प्रतिदिन ऐसा सेहरा आता है जो करोडो की कीमत मे भी यहा कही नही मिल सकता। उसमे जुडी हुई मणिया आपस मे होड करके चमकती हैं।

आप दीपक को देखकर सोचते होगे कि यह प्रकाश उसकी लौ का है। परन्तु वह लौ तेल से पैदा हुई है या बिना तेल के ही?

'तेल से ही पैदा हुई है।

प्रकाश तो अग्निकाय के जीवो का है मगर उन्हे सहायता किसकी है?

'तेल की।

यहा शालिभद्र के सेहरे पर जो मणिया चमकती हैं सो वास्तव मे मणिया नही वरन् सुपात्र–दान चमक रहा है। उन मणियो को देखकर लोग कहते हैं कि यह तो हजारो गरीबो का गला काटने पर भी नही मिल सकती लेकिन शालिभद्र को सुपात्रदान के प्रभाव से अनायास ही मिल रही है।

शालिभद्र प्रतिदिन सवेरे उसे उसी प्रकार उतार देता है जैसे फूलमाला उतार दी जाती है। जैसे उतारी हुई फूलमाला फिर नही पहनी जाती, उसी प्रकार शालिभद्र उस अनमोल सेहरे को प्रतिदिन दूसरो को दे देता है। जब कोई नही लेता तो वह भडार मे डाल दिया जाता है। इस प्रकार शालिभद्र का भडार ऐसा भरा हुआ है जेसा चक्रवर्ती का भी नही होगा।

यह सब सुपात्रदान की महिमा है। लक्ष्मी उसी का आश्रय लेती हे जो स्वामी बनकर उसका पालन करे। दास बनने वालो पर लक्ष्मी पूरी तरह

नही रीझती। और लक्ष्मी का स्वामी बनने का अर्थ यही है कि उससे दूसरो की सेवा की जाय। सुपात्रदान देना परोपकार मे उसका व्यय करना, आसक्ति न रखना यह लक्ष्मीपति के लक्षण हैं।

शालिभद्र का चरित्र उच्च आदर्श उपस्थित करता है। बडी कठिनाई से रो–धो कर उसने जो खीर पाई थी उसे निष्पृह भाव से, हृदय मे तनिक भी सकोच न रखते हुए, मुनि को अर्पित कर दी। एक बालक के लिये ऐसा करना कठिन है। लेकिन सगम असाधारण बालक था। यही कारण है कि वह शालिभद्र के रूप मे अवतरित हुआ और वहा उसने वह सब पाया जो बडे से बडे सम्राट के लिये दुर्लभ है। इस चरित पर विचार करके जो भव्य पुरुष सुपात्रदान देगा और अपनी वस्तुओ को परहित मे लगाएगा, उसका कल्याण होगा।

14. शालिभद्र का विवेक

रजोगुण और तमोगुण की शक्ति का फल चर्मचक्षुओ से दिखाई देता है। अतएव आत्मा यह समझ लेता है कि इससे आगे कोई शक्ति नहीं है। लेकिन उससे भी परे की, तीसरी सतोगुण की शक्ति की ओर लक्ष्य दोगे तो मालूम होगा कि वह कितनी जबर्दस्त और अद्भुत है। ससार के सब झगडे रजोगुण और तमोगुण तक ही पहुच पाते हैं–सतोगुण तक नहीं पहुचते। किन्तु जो उस अव्यक्त शक्ति के दर्शन कर पाता है उस शक्ति तक जिसकी पहुच हो जाती है, उसे आनन्द ही आनन्द प्राप्त होता है।

ससार शालिभद्र को रजोगुण और सम्पत्ति वैभव मे डूबा देखता है। कथा सुनते समय भी यही जान पडता है कि यह सब भोगलीला है। शालिभद्र और उसकी पत्नियो के शृगार का वर्णन सुनकर सासारिक और शृगार–प्रिय लोग प्रसन्न होकर अभिलाषा करते हैं कि हमे भी वैसे ही शृगार की सामग्री मिले। लेकिन क्या यह भावना धर्मयुक्त है? इस प्रकार की भावना उत्पन्न करने वाली कथा धर्म–कथा न होकर तृष्णा बढाने वाली कथा क्यो न ठहरी? लेकिन शालिभद्र अगर भोगो मे डूबा हुआ ही अपना जीवन व्यतीत कर देता तो उसे बडी जोखिम उठानी पडती। जेन साहित्य की कथाए भोग का तिरस्कार करके उस वैराग्य तक पहुचती हैं जिसकी ससार को बडी जरूरत है।

शालिभद्र के पिता ने दीक्षा लेकर ओर अन्त मे समाधि तक पहुच कर शालिभद्र को असाधारण रूप से सम्पन्न बना दिया। उनमे वीतराग समाधि तो नही आई लेकिन सराग समाधि मे स्वर्ग तक गये ओर वहा प्रतिदिन तेंतीस पेटिया शालिभद्र के घर भेजने लगे।

यहा प्रश्न उठ सकता है कि क्या यह मोह नही हे? मेरे विचार से यह मोह नही वरन् मोह जीतने का मार्ग हे। 'मेरा वेटा सुकुमार है 'मेरा वेटा

भोला है यह सोचते-सोचते गोभद सेठ अगर आजीवन गृहस्थी मे पडे सडते रहते तो वह ससार को यह दिखा जाते कि ससार मे बेटा-पोता ही सब कुछ है। मगर गोभद ने विशाल ऋद्धि त्यागकर ससार को त्याग का महत्व दिखाया और सयम पाप्त किया। इससे वह महान् बलिष्ठ हो गये। उस बल से पेम की जागृति होने पर शालिभद को गहने-कपडे दिये। अगर यह मोह माना जाय तो इसका अर्थ यह हुआ कि दूसरी योनि मे जाते तो मोह न होता। देवयोनियो मे जाने से मोह हुआ। अतएव देवयोनि अच्छी नही है।

वस्तुत पेम और मोह मे उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव जितना अन्तर है। अगर गोभद को शालिभद्र पर मोह होता तो वे शालिभद्र को गृहस्थी मे ही रखने का पयास करते। मगर उन्होने शालिभद्र को त्याग करा कर ऊची स्थिति पर पहुचा दिया। यह पुण्यानुबन्धी पुण्य का परिणाम है। यह पुण्य मनुष्य को दिन-दिन अभ्युदय की ओर जाता और ऐसी ऋद्धि दिलाता है कि उससे ऋद्धिमान भी सुखी होता है और दूसरे भी सुखी होते हैं। इस पुण्य के उदय से मनुष्य अद्भुत ऋद्धि पा करके भी उसमे फस नही जाता किन्तु जैसे मक्खी मिश्र का रस लेकर उड जाती है उसी प्रकार ऋद्धि को भोग कर मनुष्य उससे विरक्त हो जाता है और तब उसका त्याग करके आगे के उच्चतर चरित्र का निर्माण करता है। अतएव इसे मोह का रग देना ठीक नही है। जैसे गन्दगी के कीडे को गन्दगी ही प्रिय लगती है उसी प्रकार ससार ही प्रिय लगना मोह है।

शालिभद को गहने और कपडे देव-कृपा से मिले फिर भी यह कहता है कि जो चीज जिसकी कृपा से मिली है उसे समर्पित किये बिना ही उस चीज का भोग करना चोरी है और भोग करने वाला चोर है। मुझे देव-कृपा से जो ऋद्धि प्राप्त हुई है उससे चिपट कर बैठे रहना चोरवृत्ति है।

शालिभद ने अपनी स्त्रियो से कहा-जिन गहनो-कपडो के लिये जग मच जाता है लोग नीति-अनीति का विचार ताक मे रख देते हे गरीबो को सताते हैं और पाप मे प्रवृत्ति करते नही हिचकते उन गहनो ओर कपडो को लेकर उनका बदला न चुकाना अपने लिए नरक बनाना है।

पहने जाते हैं, उनके सबध मे एक पुस्तक मे पढा था–इस चमडे के लिए पशु को बुरी तरह घात किया जाता हे। भारत मे पहले जूतो के लिए एक भी पशु का घात नही किया जाता था किन्तु मुर्दा पशुओ का चमडा ही जूते बनाने के काम आता था। मगर विदेशियो ने जीते पशुओ का चमडा पसन्द किया है। इस कारण लाखो पशु मारे जाते हैं और दयाधर्मी कहलाने वाले लोग भी ऐसे चमडे को काम मे लाते हैं। गृहस्थी लोग चमडे का उपयोग करना सर्वथा न त्याग सके, यह बात दूसरी है किन्तु विदेशी चमडे का त्याग तो उन्हे भी करना चाहिए। ऐसे चमडे के लिए विशेषत गाय का कत्ल किया जाता हे। ऐसा होते हुए भी घडी के पट्टे, सन्दूक और बूट आदि उसी चमडे के बने हुए काम मे लाना कितनी निर्दयता हे? जरा विचार तो करो कि इन वस्तुओ के निमित्त कितने पशुओ का चमडा क्रूरता के साथ उतारा जाता है।

शालिभद्र कहता है–जो आभूषण चक्रवर्ती के लिये भी दुर्लभ हैं, उन्हे हम प्रतिदिन निर्माल्य करके फेक देते हैं और हमारे यहा मोरी मे कस्तूरी बहती है। यह सब पिताजी की धर्माराधना का प्रताप है। इस प्रकार की दिव्य वस्तुए देने वाले का ऋण न चुकाना चोरी होगी।

कुछ लोग कहते हैं–सबका बदला किस प्रकार चुकाया जा सकता है? पानी, पेड पृथ्वी आदि के उपकार का बदला उन्हे केसे दिया जाय? वे कुछ लेते तो हैं नहीं, मगर आपको जिनसे सहायता मिलती है वे सहायता देने वाले पदार्थ दाता हैं और आप सहायता लेने वाले हैं। ऐसी हालत मे जब सहायता का बदला देने का अवसर उपस्थित हो तो सहायता देनी चाहिए अथवा छिपकर बैठे रहना चाहिए?

बदला देने का अभिप्राय यह नही कि आप पानी से सहायता लेते हैं, इस कारण पानी को ही उसका बदला चुकाये। जैसे एक सेठ की एक दुकान से लिया हुआ रुपया उसकी दूसरी दुकान पर जमा करा देने से कर्ज चुक जाता है, उसी प्रकार एक से सहायता लेकर दूसरे को सहायता देने से भी बदला चुक जाता है। अगर कोई आदमी यह कहता है कि मैंने जिस दुकान से रुपया लिया है उसी दुकान पर रुपया दूगा दूसरी पर नही तो ऐसा कहने वाला क्या बहानेबाज नही कहलाएगा? इसी प्रकार स्थावर जीवो से सहायता लेकर त्रस जीवो को उतना बदला चुका देते हो तो आपकी आत्मा निर्मल बनेगी।

त्रस जीवो के भी भेद करके जो आपके ज्यादा नजदीक हैं उन पर पहले ध्यान दे सकते हो और वहीं से बदला देना आरम्भ कर सकते हो। इस प्रकार अन्तिम श्वास तक कर्ज चुकाते रहना चाहिए। अधिक न कर सको तो

पाच बातो के त्याग से भी कर्ज चुका सकते हो। वे पाच बाते यह है–बन्ध, वध छेद अतिभारारोपण और अन्न–पानी समय पर न देना। किसी पशु को कष्टकर बन्धन से बाध देना उसे मारना–पीटना उसकी चमडी का छेदन करना शक्ति से अधिक बोझा लादना और समय पर उसे खाना–पानी न देना यह पाच बाते त्यागकर आप अपना कर्ज चुका सकते हैं।

गाडे बन्धन मे बाधने से तो अहिसा–व्रत टूटता हैं, परन्तु खोलने से भी क्या व्रत का भग हो जाता है?

'नही।

लेकिन तेरहपथियो का कथन है कि दया करके कोई साधु किसी पशु को अगर छोड देता है तो उस साधु को चौमासी प्रायश्चित्त आता है तो श्रावक को पाप क्यो नही लगेगा? यह निर्दयता सिखलाने का मार्ग है।

शालिभद्र कहते हैं–ससार बधन को ढीला करके कर्ज चुकाना ही ठीक है। भोग–विलास मे पडे रहना ठीक नहीं।

शालिभद्र को आप भोगी ही न समझे। शालिभद्र की कथा भी भोग की कथा नही है। भोग मे डूबा रहने वाला तो वर्तमान जीवन मे ही नरक का निर्माण कर लेता है वह किसी काम का नहीं रहता। अतएव यह देखो कि वास्तव मे शालिभद्र ने किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत किया है।

शालिभद ने अपनी स्त्रियो से कहा–ससार के इन भोगो मे न फसे रह कर ससार के कल्याण के साथ अपना कल्याण करना चाहिये। यह जीवन की सार्थकता है। यह सुख हमे मार न डाले इस बात की सावधानी रखना बहुत आवश्यक है। जिसने दिया है उसकी भेट किये बिना हडप कर जाना चोरी है। यह सुख–सम्पत्ति धर्म–पिता की दी हुई है। धर्म का अर्पण किये बिना इस चोरी से कैसे बच सकेगे।

15 : रत्न –कबलों की खरीद

जिस समय की यह कथा है, उस समय भारतवर्ष मे राजगृह की बडी प्रतिष्ठा थी। वह भारत का सम्पन्न नगर माना जाता था। वहा के सम्राट श्रेणिक का वर्चस्व तो सर्वत्र था ही, मगर सम्पत्तिशाली नागरिको की प्रसिद्धि से प्रेरित होकर कुछ व्यापारी वहा रत्न–कम्बल बेचने के लिये आये। उन रत्न–कम्बलो का कपडा रत्नो के समान था। कम्बलो की बनावट मे अद्भुत कौशल से काम लिया गया था। उस कम्बल को ओढ लिया जाय तो कैसी ही सर्दी या गर्मी क्यो न हो, असर नही करती थी। उस समय भारत की कला बहुत उच्च श्रेणी पर पहुच चुकी थी। अतएव इस प्रकार के कम्बलो का बनना आश्चर्य की बात नही है। उस कम्बल मे एक विशेष गुण ओर भी था। वह यह कि अगर वह मैला हो जाय तो अग्नि मे डाल देने से स्वच्छ हो जाता था–जलता नही था।

सभव है यह बात किसी को असभव प्रतीत हो। मगर जो लोग पुद्गलो की विचित्र भक्ति को समझते हैं उन्हे इसमे असभव जेसी बात मालूम न होगी। हम भारतीयो मे ऐसी दैन्य भावना आ गई हे कि हम अपने देश के प्राचीन विज्ञान के विकास पर पहले अश्रद्धा ही प्रकट करते हैं। जब वही बात कोई पाश्चात्य वैज्ञानिक यन्त्रो द्वारा प्रत्यक्ष दिखला देता हे तो फिर कहने लगते हैं– यह बात तो हमारे शास्त्रो मे भी लिखी हे । मेरा विश्वास हे कि अगर भारतीय लोग इस अश्रद्धा से बचकर और ऐसी बातो को सभव मानकर दृढ विश्वास के साथ उनकी खोज मे लग जाए तो वे विज्ञान के विकास मे सर्वश्रेष्ठ भाग अदा कर सकते है। हमारे दर्शन शास्त्रो मे बहुत–सी बाते सिद्धातरूप मे वर्णित हें ओर उन्हे सिर्फ प्रयोग द्वारा यन्त्रो की सहायता स व्यक्त करने की ही आवश्यकता हे। मगर ऐसा करने के लिये धेर्य चाहिये श्रद्धा चाहिये ओर उद्योगशीलता चाहिये। जहा इनका अभाव हे वहा किसी

बात को असभव कह कर सहज ही छुटकारा पा लेने के सिवाय और क्या चारा है? पुद्गलो की भक्ति अपरिमित है। वैज्ञानिक नई–नई भाक्तियो की खोज करते रहते है फिर भी उनकी खोज का कभी अन्त नही आएगा। नवीन–नवीन भाक्तिया उन्हे विदित होती ही जाएगी।

हवाई जहाज का आविष्कार होने से पहले लोग हमारे यहा के विमानो के वर्णन को गप्प मान लेते थे। लेकिन यह नही सोचते थे कि इस प्रकार की कल्पना एकदम निराधार नही हो सकती। जब वायुयानो का अविष्कार हो गया तो हमारे वर्णन की सत्यता प्रकट हुई। यही बात इन रत्न–कबलो के विषय मे कही जा सकती है।

व्यापारी रत्न–कम्बल लेकर राजगृह मे आये और उनकी विशेषताओ का बखान करने लगे। बडे–बडे अमीर सुखी और छैले कम्बल लेने दौडे। उस समय मगध और बगाल मे राजगृह जैसा कोई नगर नही था। अतएव सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि वहा कैसे–कैसे लोग बसते होगे। बहुत से लोग दौडे–दौडे आये और सभी को कम्बल पसन्द भी आ गये। नापसन्द होने के योग्य तो वह थे ही नही।

पहले सिक्के के द्वारा लेन–देन नही होता था, वरन् एक चीज के बदले दूसरी चीज खरीदी जाती थी। अतएव कबल पसन्द करने वालो ने उसका बदला पूछा मगर उनके घर मे कोई ऐसी चीज ही नही निकली जो बदले मे देने योग्य होती। खरीददार कम्बल की तोल का सोना देने को कहते मगर व्यापारी इसके लिए तैयार न हुए। उन्हे ऐसा करने मे नुकसान मालूम होता था।

कम्बल का बदला सुन–सुन कर खरीददारो ने कम्बलो को वैसा ही छोड दिया जैसे मखमल–सा कोमल और नरम जान कर धोखे मे आकर पकड़ा हुआ साप छोड दिया जाता है। सब लोग कहने लगे–बराबरी का सोना दे रहे है फिर भी अगर कम्बल नही बेचते तो चाहते क्या हो? ऐसा कपड़ा भी किस काम का जो सोने के तोल मे भी न मिल सकता हो। रहने दो। रखे रहो। जिसके घर आकाश से धन बरसता होगा वही तुम्हारे कम्बल खरीदेगा।

व्यापारियो को राजा श्रेणिक के पास ले गए। राजा श्रेणिक ने तथा चेलना नन्दा आदि रानियो ने कबलो को बहुत पसन्द किया। राजा ने सोचा– किसी के लिये ले और किसी के लिये न ले तो ठीक नही होगा। यह विचार कर उसने सोलहो कम्बल खरीद लेने का निश्चय किया और उसका बदला पूछा।

बदले मे सोना देने को तैयार होने पर भी जब व्यापारियो ने कम्बल देना स्वीकार न किया, तब राजा बहाना बना कर दूसरे काम मे लग गया। व्यापारियो ने थोडी प्रतीक्षा के पश्चात उत्तर मागा। राजा ने कहा–बस इससे ज्यादा नहीं दिया जा सकता। हमारे पास जो धन है वह प्रजा के खून की कमाई है। इसे इस प्रकार नही उडाया जा सकता।

राजा श्रेणिक का यह उत्तर सुन कर व्यापारी बहुत निराश हो गये। जब राजगृह मे ही कबल न बिक सके तो अन्यत्र कहा बिक सकते हैं। और इन्ही मे सारी पूजी लग गई है तो दूसरा व्यापार किस प्रकार किया जाय। सब अपनी–अपनी मेहनत को देखते हैं हमारी मेहनत को कोई नही देखता। हमारी कला का कोई मूल्य ही नहीं है।

व्यापारी श्रेणिक के दरबार से लौट कर राजगृह के बाहरी हिस्से मे किसी वृक्ष के नीचे आकर रोटी–पानी की तजवीज मे लगे। पनघट वहा से पास मे ही था। व्यापारियो का मन ऐसा उदास था जैसे दाहसस्कार मे साथ गए हुए लोगो का होता है। वह यही सोच रहे थे कि इन कम्बलो के पीछे हम बर्बाद हो गये। सारा जीवन इनके तैयार करने मे खपा दिया, पूजी सब लगा दी फिर इनकी कद्र करने वाला कोई न मिला। जब राजा श्रेणिक ही इन्हे न ले सके तो किसी दूसरे से क्या उम्मीद की जा सकती है।

व्यापारी इस प्रकार की चिन्ता मे डूबे उदास चित्त बैठे। उसी समय शालिभद्र की दासिया पानी भरने के लिए उधर से निकली।

प्राचीन काल मे स्त्रिया या तो स्वय अपने घर के लिए पानी लाया करती थी या फिर उनकी दासिया लाती थीं। वह दासिया आजकल की तरह नौकरानी नही होती थी वरन् एक प्रकार से उस कुटुम्ब की ही सदस्या होती थी। वह अपनी स्वामिनी के घर को ही अपना घर समझती थी ओर उनकी सन्तान का विवाह आदि काज भी उसी घर से होते थे। शालिभद्र की दासियो ने व्यापारियो को चिन्तित देखा तो वे आपस मे कहने लगी–

पहली– अपने नगर मे जो लोग आते हैं वे सब प्रसन्न ओर आनन्दित होते हैं। परन्तु ये व्यापारी दु खी क्यो दिखाई देते हैं।

दूसरी– जहा तुम वहा मैं। मुझे दु ख का पता केसे हो सकता हे? उन्ही से पूछना चाहिए।

तीसरी– ये लोग दिखाई तो बाहर के ही देते है।

आपस मे इस पकार बात–चीत करके एक दासी ने व्यापारियो से पूछा– तुम लोग कोई व्यापारी जान पडते हो परन्तु उदास क्यो हो?

व्यापारियो मे से एक ने अपने साथियो से कहा– राजगृह से सेठो से और राजा से कह–कह कर थक गये फिर भी अपना दु ख दूर नही हुआ। अब इन पानी भरने वाली दासियो से कहने पर क्या होगा? ये क्या दु ख दूर कर देगी?

दूसरे ने कहा– अहकार क्यो करते हो? देखो न कितनी नम्रता के साथ वह पूछ रही है। उसकी वाणी मे सहानूभूति है और चेहरे पर भी सरलता है और तुम अहकार मे ही मरे जाते हो ! इनका पुण्य तो देखो, ये कैसे घर की दासिया है। इनके हाथ मे कितने बहुमूल्य घडे हैं। दासिया होकर भी रानिया–सी जान पडती हैं। जिस परिवार की यह दासिया हैं, उस परिवार की स्थिति का अन्दाज इन्ही से कर लो।

इसके बाद उस व्यापारी ने प्रश्न करने वाली दासी की तरफ उन्मुख होकर कहा– बाई तुम दयावाली हो इसी कारण हमारा दु ख पूछती हो, तो फिर हमे बतलाने मे हर्ज ही क्या है? हम लोग सोलह रत्न–कम्बल लाये हैं। इनके ओढ लेने पर न सर्दी लग सकती है, न गर्मी लग सकती है। इनकी खास विशेषता यह है कि मैले हो जाने पर इन्हे आग मे डाला जा सकता है। कम्बल जलेगे नही साफ हो जाएगे। हमने अपना सारा जीवन इनके बनाने मे लगाया है। इन्हे बेचने की इच्छा से राजगृह मे आये थे। मगर कम्बल का उचित बदला देकर खरीदने वाला यहा कोई न मिला। महाराज श्रेणिक तक ने एक भी कम्बल नही लिया। अब हम इस चिन्ता मे हैं कि इन्हे बेचने के लिए कहा ले जाये।

व्यापारी की व्यथा सुन कर दासिया आपस मे मुस्करा कर कहने लगी–

इसके बाद एक दासी ने व्यापारी से कहा– बस यही तुम्हारी चिन्ता है। तुम लोग हमारी हवेली चलो। हमारी भद्रा माता तुम्हारे सब कम्बल खरीद लेगी और तुम्हे मुह–मागे दाम मिलेगे। तुम मागने मे भले ही कसर रखो इनके कहने से ही वृथा चक्कर लगाने से क्या लाभ?

दूसरे ने कहा– हम लोग व्यापारी है। हमे चक्कर का हिसाब नही देखना चाहिए। अब तक तो सारे नगर मे घूमते फिरे, क्या किसी ने इतना भी आश्वासन दिया था? इनसे आश्वासन तो मिल रहा है। अगर हम लोग इनके साथ न चले तो पछतावा ही बाकी रह जायगा। इसलिए चक्कर खाना पडे तो खाना पडे, परन्तु पछतावे के लिए गुजाइश नही रहने देना चाहिए। आप लोग चले या न चले मैं तो अवश्य जाऊगा।

इतना कह कर एक व्यापारी जाने को उद्यत हुआ। उसे जाते देख शेष उसके साथी भी तैयार हो गये। दासिया उन्हे साथ लेकर शालिभद्र के घर आई। व्यापारियो को बाहरी बैठक मे बिठला कर कहा– तुम सब यहीं ठहरो। हम भद्रा माता की आज्ञा लेकर तुम्हे भीतर बुलवा लेगे।

दासिया भीतर चली गई और व्यापारी बाहर ठहरे रहे। शालिभद्र की हवेली को देखकर व्यापारी चकित रह गए। आपस मे कहने लगे–सारे राजगृह मे ऐसा महल कही नजर नही आया। कबल चाहे बिके या न बिके यह महल देखने को मिल जाय तो यही बहुत है।

सेठानी भद्रा भीतर ऊचे आसन पर बेठी हुई थी। दासिया हसती हुई उनके पास पहुची। सेठानी समझ गई कि ये किसी काम से मेरे पास आई हैं, वृथा समय खोने वाला हमारे यहा कोई नही हे।

रुपयो का खयाल आप करते होगे ओर सभी करते हे मगर समय का विचार करने वाले विरले ही होते हैं। समय का विचार रखने वाला उसे वृथा नष्ट न करने वाला कभी दु खी नहीं होता। उसे प्रत्येक आवश्यक कार्य के लिये समय मिल जाता है।

भद्रा ने दासियो से पूछा– आज इस समय यहा आने का क्या प्रयोजन हे? तब दासियो ने कहा– एक ऐसी बात हे मा जी जिससे राजगृह की नाक जा रही है।

प्रश्न होता है– राजगृह की इज्जत न जाने की फिक्र इन दासियो को क्यो हे? क्या नगर की प्रतिष्ठा न जाने देने की किसी को चिन्ता करनी चाहिए?

"अवश्य।"

दूसरो के विषय मे आप ठीक फैसला दे सकते है। मगर अपनी सोचिये। आपमे इतना आलस्य घुस गया है कि अगर आपके उठने मात्र से किसी का काम होता होगा तब भी शायद आप मुश्किल से ही उठेगे। अगर राजगृह की नाक जाती थी तो इससे शालिभद्र का क्या बिगडता था? उसके घर किस बात की कमी आ जाती? क्या स्वर्ग से पेटिया आना बन्द हो जाता था? नही। मगर अपने नगर की पतिष्ठा रखने का महत्व जानने वाले ही जानते है। दासिया जानती थी कि भद्रा माता अपने देखते-देखते नगर की आबरू नही जाने देगी।

दासियो ने भद्रा से कहा-मा जी राजगृह नगर मे कुछ व्यापारी रत्नकम्बल लेकर आये है। कम्बल ऐसे है कि पानी के बदले आग से साफ होते है। उनके ओढ लेने पर वर्षा गर्मी, सर्दी आदि का तनिक भी असर नही होता। मगर कीमती बहुत है। इस कारण किसी ने नही खरीदे, यहा तक कि महाराज श्रेणिक ने भी नही खरीदे। व्यापारी निराश होकर जा रहे थे। यह हमे बुरा मालूम हुआ।

भद्रा ने गम्भीरता से कहा- वे राजा है अवसर नही होगा तो नही लिये हमे उनकी निन्दा करने की आवश्यकता नही। रहा गया उनका निराश होकर जाना सो तुम उन्हे यहा लेती क्यो नही आई?

एक दासी- ले तो आई है।

भद्रा- तो ठीक किया। उन्हे भीतर बुला लो। बेचारे बाहर खडे प्रतीक्षा कर रहे होगे।

दासिया प्रसन्न होकर आपस मे कहने लगी- माजी कितनी दयालु है? हम बडी पुण्यवती है कि इनकी सेवा करने का हमे सौभाग्य मिला है। व्यापारियो को साथ न ले आती तो पश्चात्ताप रहता या फिर दौड कर जाना पड़ता।

वडे–वडे राजाओ के महलो मे गये हैं, सेठ–साहूकारो की हवेलिया भी हमने देखी हैं, परन्तु इस ऋद्धि के सामने उनकी क्या विसात है?

तीसरा व्यापारी बोला– अच्छा ही हुआ कि यहा राजा श्रेणिक ने कम्वल नही खरीदे। वह खरीद लेते तो यहा आने का सोभाग्य ही न मिलता ओर न यह अपूर्व वैभव देखने को मिलता ।

चौथे ने कहा– अगर हमने पुण्य को सच्चा समझ लिया हे तो चलो प्रतिज्ञा करो कि भविष्य मे पाप से बचने का निरन्तर प्रयत्न करते रहेगे।

मित्रो! जरा इन व्यापारियो की भावना पर विचार करो। ऋद्धि देखने मात्र से उनके हृदय के पट खुल गये हैं।

इतने मे व्यापारी भद्रा के पास जा पहुचे। दासियो ने उनसे कम्वल लेकर भद्रा को वतलाए। देवलोक के वस्त्र पहनने वाली भद्रा को यह कम्वल कब पसन्द आने लगे। लेकिन भद्रा विचार करती हे–वे कपडे देवलोक के हैं और ये मनुष्य लोक के हैं। देवलोक के वस्त्रो के साथ इनकी तुलनाकरके इनहे तुच्छ समझ लेना ओर व्यापारियो को निराश करना उचित नही है। मनुष्य की शक्ति का ध्यान रखते हुए ही इन कम्वलो के महत्त्व को देखना चाहिये।

कम्बल देखकर भद्रा ने कहा– कम्वल बहुत अच्छे हैं। रूप–रग अच्छा है और पोत भी अच्छा है। गुण भी जो बताया गया है अच्छा हे। अब इनका मूल्य बतादो।

व्यापारियो ने शालिभद्र के घर को देखकर उसकी सम्पत्ति का मोटा अनुमान लगा लिया था। दासियो ने भी उनसे मुह–मागे दाम की बात कही थी मगर व्यापारियो ने सोचा– अभी–अभी हम लोग पुण्य–पाप की बात सोच रहे थे, अतएव ईमान छोडना ठीक नही है।

व्यापारियो ने दूसरो को तथा राजा श्रेणिक को एक–एक कम्वल का मोल सवा–सवा लाख स्वर्ण–मोहर बतलाया था। वही उन्होने भद्रा माता को बतला दिया।

भद्रा–सोलह कम्बलो की कीमत वीस लाख स्वर्ण–मोहरे तो कही, मगर एक बडी अडचन हे। कम्बल तुम्हारे पास सोलह हे ओर वहुए मेरे यहा बत्तीस हैं। में किसे कम्वल दू? और किसे न दू? मुझे न कोई वहू खारी हे न अधिक प्यारी है। बत्तीसो को समान दृष्टि से देखती हू।

घर मे सबको समान दृष्टि से न देखने के कारण वडी हानि होती हे। घर–घर मे आज जो कलह हे उसका मुख्य कारण यही विषम व्यवहार ओर पक्षपात हे। जहा कपट ने प्रवेश किया वहीं गडवड हुई ओर घर मे फूट पडी । फूट सम्पत्ति के विनाश की अग्रिम चेतावनी हे।

पतापी पूज्य श्री चौथमल जी महाराज साधुओ के आहार–वितरण के सम्बन्ध मे अत्यन्त सावधान रहते थे। कदाचित गोचरी मे दो लोग आ जाते तो उनके टुकडे–टुकडे करके सब साधुओ को बराबर–बराबर बाट देते थे। कोई न लेना चाहता तो बात दूसरी थी मगर वे अपनी ओर से समान वितरण ही करना चाहते थे। उनका कथन था कि बिना इन्कार किये किसी की वस्तु खा लो सह–धर्मी की चोरी है।

तात्पर्य यह है कि जहा वस्तु का समान रूप से विभाग नही होता, वहा क्लेश होने की सम्भावना रहती है और जहा क्लेश हुआ वहा परिवार छिन्न–छिन्न हो जाता है।

इसी बात को ध्यान मे रखकर भद्रा कहने लगी– मै सब बहुओ को समान समझती हू। अब यह कम्बल किसे दू और किसे न दू मै और कम्बल नही खरीदती हू तो तुम्हे निराश होती है अतएव इन सोलह कम्बलो के बत्तीस टुकडे कर दो ताकि सबको एक–एक आ जावे। तुम व्यापारी हो। फाडने का काम अच्छी तरह कर दोगे।

भद्रा की बात बडी गम्भीर है। कुटुम्ब मे सुख–शाति रखने के लिए इस प्रकार का निष्पक्ष व्यवहार होना अतीव आवश्यक है। यह एक आदर्श है जो पत्येक कुटुम्ब के बडे–बूढे को अपनाना चाहिए। इसके विरुद्ध जो लोग विषम व्यवहार करते है कोई चीज लाकर अपने लडके को देते हैं और भाई के लडके को नही देते उन्हे क्या कहना चाहिये?

तो इस नीचता के कारण कभी–कभी कितना अनर्थ होता है यह बात मेरी अपेक्षा भी आप ज्यादा समझ सकते हैं। भद्रा की बात स्त्रीवर्ग के लिए विशेष रूप से विचारणीय है। वह कहती है कि मेरे लिए सभी बहुए समान है। ऐसी दशा मे कभी कलह हो सकता है?

नही।

व्यापारी लोग भद्रा की आज्ञा सुनकर आश्चर्य मे डूब गये। वे सोचने लगे– यह कैसा घर है जहा ऐसे बहुमूल्य कम्बलो के टुकडे करवाए जाते हैं। फिर उन्हे ध्यान आया कही ऐसा न हो टुकडे करवा कर कम्बल लेने से इन्कार कर दे। यह सोच कर व्यापारियो ने कहा– पहले कम्बलो का मूल्य बीस लाख स्वर्ण–मोहरे आप दिला दीजिए। उसके बाद जैसी आपकी इच्छा होगी, वैसा किया जाएगा।

भद्रा मन ही मन कहने लगी इनका कहना अनुचित नही। बेचारो विश्वास कैसे हो। अगर कम्बलो के टुकडे हो जावे और फिर लेने से इन्कार कर दिया जाय तो ये कितनी मुसीबत मे फस जाएगे।

आज के लोग होते तो चिढ जाते और कहते–'हमारा इतना भी विश्वास नही।' ऐसे लोग अपनी स्थिति जबर्दस्ती दूसरो के सिर मढते हैं। उचित तो यही है कि ऐसे अवसर पर सामने वाले की स्थिति पर विचार किया जाय।

भद्रा ने भण्डारी को बुलाकर कह दिया– यह कम्बल पसन्द आ गये हैं। इनकी कीमत बीस लाख सोनैया चुका दो। उनके बदले कोई और चीज लेना चाहे तो वह दे दो और उनकी परीक्षा करवा दो जिससे उन्हे कसर न पडे। इसके बाद इन्हे सुरक्षित रूप से इनके घर पहुचा दो। इनके पास जोखिम रहेगी। बिना रक्षा के कही सकट मे न पड जावे।

भण्डारी व्यापारियो को भण्डार मे ले गया। व्यापारियो ने शालिभद्र का भण्डार देखा तो उनके आश्चर्य का पार न रहा। हीरे वहा पैरो तले कुचले जाते हैं। माणिको को कोई सम्भालता ही नही है। मूगो का कोई पार ही नही है और दूसरे रत्न काच की तरह ढेरो पडे हैं। व्यापारी सोचने लगे–कुबेर का भण्डार भी क्या इससे बढकर होगा?

आप इस वर्णन मे अत्युक्ति न समझे। इतिहास के अनुसार दोलताबाद के एक नवाब ने जब देवगिरी का किला तोडा था तब वहा के राजा ने उसे डेढ मन हीरे सधि मे दिये थे। जब एक मनुष्य के पास इतना हीरा हो सकता हे तो वह सम्पत्ति तो देवलोक की थी उसमे असभव जेसी कोन–सी बात हे?

कम्बलो के व्यापारी इस ऋद्धि को देखकर चकित हो गये ओर कहने लगे– इतनी ऋद्धि आई कहा से होगी? अवर दूजे भूत कमावे और आकाश मे हल चले तव भी इतनी ऋद्धि नही हो सकती। फिर यह कहा से और केसे आई?

लोग समझते है कि हमारे पुरुषार्थ से लक्ष्मी आती है। हम कमाते है इसीलिए हमारे पास ऋद्धि आती है। मगर विचारणी यह है कि दो व्यापारी समान रूप से पुरुषार्थ करते हैं और एक को लाभ तथा दूसरे को हानि होती है। इसका कारण क्या है? इसके अतिरिक्त ऋद्धि तो जीवन के सहारे ही है और जीवन किसने कमाया है? इस बात पर विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि ऋद्धि वास्तव मे पुण्य से मिलती है। अतएव धन के लोभ मे पडकर पाप मत करो। पाप से धन का विनाश होगा धन का लाभ नही हो सकता पाप से पवृत्ति करने से ऋद्धि नष्ट हो जाएगी और नरक का मेहमान बनना पडेगा।

व्यापारियो के अन्त करण मे इसी प्रकार का विवेक जागृत हुआ।

भद्रा की आज्ञा के अनुसार भण्डारी ने बीस लाख सोनैयो का बदला चुका दिया। भद्रा के बुलाने पर व्यापारी फिर उसके पास गये। भद्रा ने उनसे पूछा—कम्बलो का मूल्य तुम्हे मिल गया?

व्यापारियो ने कहा—माजी मूल्य मिल गया है और आपके घर से हम लोगो को जो विवेक मिला है वह ओर भी बडी चीज है। आपका घर देखकर हमे सुकृत्य का फल याद आया है।

भद्रा—यह ऋद्धि मेरी नही मेरे पति की दी हुई है। उन्होने दीक्षा ली थी। जब वे दीक्षा लेने के लिये जाने लगे तो हमे अच्छा नहीं लगा था। हमने सोचा कि हमे छोडकर न जाते तो अच्छा था। मगर वे नही माने। उन्होने तपस्या की ओर सयम का पालन किया। उनके ऊपर हमारा भी उत्कृष्ट भाव रहा। वे अब किसी स्वर्ग मे उत्पन्न हुए हे और वहा से ये ऋद्धि भेज रहे हैं। इस ऋद्धि मे हमारा कुछ भी नही है। तटस्थ रूप से देख—रेख करना ही हमारा कार्य है।

मे हमारे तो हाथ कापते हैं। क्या यह नही हो सकता कि इनमे से एक कम्बल को एक दिन एक वहू ओढ ले और दूसरे दिन दूसरी बहू ओढ ले।

भद्रा–यही तो कठिनाई है भाई ! एक दिन काम मे लाया हुआ कपडा हमारे यहा दूसरे दिन काम मे नही आता।

व्यापारी हैरान थे। चकित होकर कहने लगे–तो क्या ये केवल एक ही दिन ओढे जाएगे?

भद्रा–यह मेरी मनुहार से। नही तो ऐसा कपडा यहा ओढता ही कोन है ! तुम्हे भाका हो तो जब तक तुम कवलो के टुकडे करते हो तब तक मैं अपनी बहुओ को बुलवाए लेती हू। तव देख लेना वे केसे कपडे पहिनती हैं। वास्तव मे यह कम्बल बहुओ के ओढने के लिए नही खरीदे हैं खरीदे इसलिए हैं कि नगर की इज्जत न चली जावे। तुम्हारी सारी पूजी इन्हीं मे रुक रही है और मेरे घर मे सहज रूप मे धन की कमी नही है। इसलिए मैने इन्हे ले लिया है और कोई कारण नहीं है।

इतना कह कर भद्रा ने दासी को आज्ञा दी कि जरा बहुओ को बुला लाओ। दासी बुलाने गई। सास का बुलौआ पाते ही सब बहुए एकदम खडी हुईं। वे सासू की आज्ञा के पालन को अपने जीवन का धन ओर प्राणनाथ का दान समझती थी।

बहुत–सी बहुओ को अपना बालम तो प्रिय लगता है परन्तु सास–ससुर काटे से लगते है। वे समझती है कि पति तो सासारिक मनोरथ पूरा करता है पर यह सास–ससुर किस काम के? अज्ञान के कारण ऐसी खोटी समझ तो हो ही रही है, जिस पर यह उपदेश मिल जाता हे कि सास–ससुर की सेवा करना एकान्त पाप है। फिर तो कहना ही क्या हे ! यह तो जलती आग मे घी होमने के समान हे।

राग तीन प्रकार का है– कामराग दृष्टिराग ओर स्नेहराग ! भोग की आशा से होने वाला राग काम–राग कहलाता हे। स्नेहराग दशवे गुणस्थान की स्थिति मे पहुचने पर छूटता हे। गुरु से और धर्म से राग होना भी प्रशस्त स्नेह राग हे। लेकिन तेरापथी भाई राग को एकात पाप बतलाते हैं। उनके कथनानुसार अपने धर्मगुरू के प्रति राग होना भी एकान्त पाप ठहरता हे। यह कहा तक उचित हे, इस पर शाति ओर निष्पक्ष भाव से विचार करने की म प्रेरणा करता हू।

शालिभद्र की स्त्रिया कामराग की चेरी नही थी। उन्हे विपयभोग का ही मोह होता तो वे सास का हुक्म पाते ही खडी न हो जाती। वे सास के

आदेश को अपने सिर का आभूषण समझती थी। उन्हे विदित था कि यह सब सुख और वैभव इन्ही की कृपा का फल है। यही हमारे प्राणनाथ की जननी है। इनका हुक्म न मानने से हमारी अधोगति होगी।

बत्तीसो बहुए उठ खडी हुई। प्रथम तो वे देव सम्बन्धी वस्त्र और आभूषण पहिने थी दूसरे उनका भाग्य भी कुछ कम नहीं था। इसलिये उनकी सुन्दरता का कहना ही क्या है?

बत्तीसो बहुए रुमझुम करती हुई अपने महल से ऐसी उतरी जैसे स्वर्ग से अप्सराए उतर रही हो। सब के आभूषणो का सम्मिलित स्वर सुन कर व्यापारी चौक उठे। वह मन ही मन सोचने लगे यह क्या चमत्कार है। इसी समय सब बहुए भद्रा के सामने आकर खडी हो गई। व्यापारी उनके दिव्य वस्त्र देख कर सोचने लगे– यह इन कबलियो को कब पसन्द करेगी?

व्यापारियो को उनके वस्त्र और आभूषण देखकर आश्चर्य हुआ मगर बहुओ की आज्ञाकारिता देखकर कि इन सबने किस फुर्ती के साथ सास के हुक्म का पालन किया है और कितनी नम्रता के साथ सास के सामने खडी है व्यापारियो को बडा ही आश्चर्य हुआ। उन्होने सोचा–इनके व्यवहार से यही परिणाम निकलता है कि बडो की आज्ञा मानोगे तो फलोगे–फूलोगे और अगर केवल वस्त्रो और आभूषण पर ही फूल गये तो वही दशा होगी जैसे चना फूल कर दाल हो जाता है। अर्थात् जैसे चना पहले पुरुष था परन्तु फूलने के कारण उसे स्त्री (दाल–दर) होना पडा। फूलने से पहले वह उग सकता था फूलने पर अपनी वह शक्ति भी खो बैठता है।

देवलोक की सम्पत्ति का भोग करते हुए भी जो अपने बडे–बूढो की आज्ञा विनय–पूर्वक स्वीकार करते हैं उन्ही की कथा पुण्य कथा है। ऐसे महापुरुषो की कथा ही लोकोपकारी होती है।

अज्ञान के कारण आज अधिकाश स्त्रियो को बारीक ओर मुलायम वस्त्र प्रिय लगते है पति का हुक्म प्रिय नही लगता?

आखिर भद्रा के कहने पर व्यापारियो ने कम्बलो के बत्तीस टुकडे कर दिये। भद्रा व्यापारियो से एक–एक टुकडा लेती जाती है और एक–एक बहु को देती जाती है। वहुए अपनी सास द्वारा दिए उपहार को हर्ष पूर्वक दोनो हाथो से ले रही है।

बडे को वस्तु देने और उससे लेने मे भी विनय की आवश्यकता होती है। मनुष्य मे जितनी ज्यादा विनयशीलता होगी उसकी पुण्याई उतनी ही ज्यादा बढेगी।

सास से कम्बल लेकर बहुओ ने कहा– हम सब पर आपकी बडी कृपा है। हम सदा इसके लिए लालायित थी कि अपनी सास का दिया कपडा पहिने। आज आपने अनुग्रहपूर्वक प्रेम के साथ यह वस्त्र दिया है, हमे अत्यन्त प्रसन्नता है। हम सद्भागिनी हैं कि आपके हाथ से हमे वस्त्र मिला। आज की घडी धन्य है कि हमे आप–सी कृपालु सास की प्रसादी प्राप्त हुई है।

मालवा प्रान्त मे एक त्यौहार मनाया जाता है। उसे गाज का त्यौहार कहते है। स्त्रिया खूब गहने–कपडे पहिने होती हैं फिर भी उस त्यौहार के दिन का बटा हुआ एक सफेद धागा अपनी चूडियो मे बाध लेती हैं। उस दिन आपस मे स्त्रिया एक कथा कहती हैं। सक्षेप मे वह इस प्रकार है–

'एक रानी थी। वस्त्र– आभूषण आदि ऋद्धि उसके पास थी। इस कारण उसकी समस्त ऋद्धि गायब हो गई। जब उस रानी ने धागा बाधा तब कही ऋद्धि वापस लौट कर आई। इस कथा मे कौन जाने क्या रहस्य छिपा हुआ है?

सिर मे राख लगाना कोई अच्छा नही समझता। तेल सिन्दूर का टीका लगाना भी अच्छी बात नही मानी जाती। लेकिन भैरव ओर करणीजी के मन्दिर मे जाकर वही राख और टीका लगाने मे कोई बुराई नही समझी जाती। इसका मर्म इतना ही है कि वस्तु तो वही हे जो साधारण अवस्था मे अच्छी नही समझी जाती थी किन्तु बडो के सस्कार से उसी वस्तु के विशय मे भावना बदल गई है। भावना बदलने से उसके प्रति प्रेम हो गया हे। आज आप न मालूम किन–किन देवी–देवताओ को मानते हें– पूजते ओर उनकी जूठन खाने को तैयार हो जाते हें किन्तु अपने बुजुर्ग–देव को भूल जाते हे घर के बुजुर्ग–देवो का आदर न करके वाहर वालो का आदर करना वेसा ही है जैसे गोद के बालक को छोडकर पेट के बालक की आशा करना।

जैसे रेशम और मलमल के वस्त्र पहिनने वाली स्त्री अगर अचानक खादी को अपना ले तो आश्चर्य होता है उसी प्रकार पसन्नतापूर्वक कबल के टुकडे अपनाए जाने पर व्यापारियो को आश्चर्य हुआ।

बहुओ ने सास के प्रति जो कृतज्ञता प्रकट की थी उसके उत्तर मे भद्रा ने कहा– तुम भाग्य शालिनी हो। तुम सबने आकर मेरा घर पवित्र किया है।

इस प्रकार परस्पर सद्भावना प्रकट करने के बाद सब बहुए अपनी–अपनी जगह लौट गई और व्यापारी अपने घर लौट गये। भद्रा अपनी जगह पर ही बैठी रही। कई दासिया भद्रा के पास बैठी थी उनमे से एक ने कहा– माजी हमने आज जैसा चमत्कार पहले कभी नहीं देखा था।

भद्रा–क्या चमत्कार देखा आज?

दासी– हमे मालूम ही नही था कि देवलोक के कपडे पहिनने वाली बहुओ मे सास के प्रति इतना आदरभाव होगा। उन कपडो के सामने यह कम्बल ऐसे ही हैं जैसे कपडो के सामने छाल के वस्त्र। मगर इन्होने आज सीता का स्मरण दिला दिया। इन कम्बलो को वे इतने प्रेम से ग्रहण करेगी, यह कौन समझ सकता था? वास्तव मे आप राम की माता कौशल्या से भी ज्यादा पुण्य शालिनी है। उनके यहा एक ही सीता थी आपके यहा बत्तीस सीताए बसती है।

भद्रा–इन कम्बलो को खरीदने का रहस्य तुम्हारी समझ मे आया?

दासी– समझ मे आया भी होगा तो न मालूम क्या समझ मे आया होगा? आप ही अपने मुख से समझाइये तो कृपा होगी।

भद्रा– तुमने खबर दी थी कि व्यापारी निराश और उदास होकर जा रहे हैं और नगर की नाक जा रही है। इसीलिए मैंने यह कम्बल खरीद लिये। लेकिन कम्बल लेकर नगर की प्रतिष्ठा कायम रखना ही मेरा उद्देश्य नहीं था। मगर बहुओ की कसौटी करना भी मेरा उद्देश्य था। मेरे यहा किसी चीज की कमी नही है। मै चाहती तो कम्बल खरीद कर तुम्हे दे सकती थी

रिश्तेदारो के यहा भेजती तो उनके घर तकरार होती। इसके अतिरिक्त उनके यहा भेजना उनका सम्मान नही वल्कि अपमान करना होता क्योकि वे इन्हे खरीद नही सके थे। कदाचित् उन्हे अपमान न मालूम होता और मुझे भी अहकार न होता तो भी उनके घर कलह तो मच ही जाता। इसलिए मैंने विचार किया कि ये कम्वल मेरे घर मे रहे तो ठीक हे। मेरे यहा देव कृपा से सम्पत्ति आती हे ओर दूसरो के घर कमाई से आती है। इसलिए इन भौतानी कपडो का जिनका ये वदला नही दे सकते, उनके घर भेजना उनकी लज्जा हरण करना एव उनके घर मे कलह के वीज वोना हे।

क्या आप भी इतनी दूर की सोचते हैं? क्या आप यह सोचते हैं कि हम जो वस्त्र किसी को भेट देते है उससे उसकी लाज लुटेगी या बचेगी? सोचिये, लाज कैसे वस्त्रो से रहती हे?

'मोटे वस्त्रो से।'

और आप अपने सम्बन्धियो को कैसे वस्त्र भेट देते हैं?

'बारीक।

तो उनकी लज्जा लूटने के लिए भेट देते हैं या लज्जा रखने के लिए?

एक सज्जन कहते थे– स्त्रिया बारीक कपडे पहिनती है। उन्हे उपदेश दीजिये। पर मैं पूछता हू कि उन्हे बारीक वस्त्र पहिनाता कौन है? जो कपडा हम दे रहे हैं उससे लाज रहेगी या नही प्रतिष्ठा बढेगी या घटेगी इत्यादि विचार किये बिना ही वारीक से बारीक वस्त्र खरीद कर लाना कहा तक उचित है? भेड की तरह एक को देखकर दूसरा भी उसके पीछे–पीछे चलने लगता है। क्या अपनी बुद्धि से काम न लेना मानवीय बुद्धि और विवेक का अपमान करना नहीं हे।

बहिने यह न समझे कि मारवाड मे कभी खादी आएगी ही नही। सूर्य निकलने पर तो जागना ही पडता है मगर पो–फटने पर जागने वाला होशियार समझा जाता है।

भद्रा कहती है– इसी विचार से मने यह कवल अपने सबधियो के घर नही भेजे। सबधियो के घर वेसी ही वस्तु भेजना चाहिए जेसी वे बदले मे भेज सकते हो। ऐसा न करने पर उनका अपमान होता हे। राजा श्रेणिक के यहा न भेजने का भी कारण हे। महाराज के भण्डार मे कमी तो कुछ हे नही फिर भी न मालूम क्या सोचकर उन्होने कम्बल नही खरीदे। उनके यहा कम्बल भेजना उनक ऋद्धि ओर वुद्धि का अपमान करना हे ओर कदाचित्

कम्बल न लेती तो देश का और नगर का गौरव घट जाता। इस प्रकार का विचार करके मैने कम्बल ले तो लिये मगर सम्बन्धियो के घर और महाराज के घर नही भेजे।

हा एक बात और रह गई। मैने तुम्हे वह कम्बल क्यो नही दे दिये। तुम मुझे बहुओ से कम प्यारी हो इसलिए तुम्हे नही दिए यह बात नही है। बात यह है कि तुम्हे कम्बल दे देती तो तुम्हारे पैर बन्धन मे आ जाते। तुम आलस्य से घिर जाते और तुम्हारी कार्यशक्ति कम हो जाती। इसके अतिरिक्त उन्हे ओढ कर जहा तुम जाती, सेठानिया लज्जित हो जाती और टीका करती–दासी होकर भी इतनी शौकीन? इस प्रकार सेठानियो को लज्जित होना पडता और तुम्हे टीका सुननी पडती।

मैने सोचा– बहुए देवलोक के वस्त्र पहिनते–पहिनते कही मृत्युलोक को–अपने देश को तो नही भूल गई है? दिव्य ऐश्वर्य को पाकर वे मेरी भक्ति को विस्मरण तो नही कर बैठी? यह जानने के लिए ही मैंने कम्बल दिये हैं। कम्बल क्या फटे उनका और मेरा भ्रम फटा है। कबलो को फडवा कर मैने उनकी भावना की परीक्षा कर ली है। मैने ऐसा न किया होता तो उनके प्रेम की परीक्षा कैसे होती? और तुम्हे जो आश्चर्य हुआ था सो कैसे होता?

16 : चेलना की चाह

शालिभद्र की सभी पत्नियो ने आज वही कम्वल के टुकडे ओढे हैं। आज उनके हृदय मे कुतूहल है, प्रीति है और अपूर्वता का आभास है। मनुष्य मिठाई खाते–खाते उकता जाता है तो चने खाने की इच्छा करता है और चने पाकर वह इतना प्रसन्न होता है कि मिठाई उसके सामने तुच्छ है। यही स्थिति आज शालिभद्र की पत्नियो की है।

कम्बल के टुकडे ओढ कर वे सब शालिभद्र के सामने गई। अपनी पत्नियो को सदा से विपरीत वस्त्र ओढे देख कर शालिभद्र ने हसते हुए कहा– आज यह नवीनता कहा से आई। कम्बल क्यो ओढ रखे है? क्या पिताजी के स्वर्ग मे कपडो की कमी हो गई है? मेरी पेटी तो नित्य की भाति ही मेरे पास आई है। क्या तुम्हारी पेटी आने मे कोई गडबड हो गई है। अगर गडबड थी तो कल वाले कपडे ही क्यो न पहिन लिये? लेकिन देवलोक से पेटिया आने मे भूल नही हो सकती। जब मेरे पास आई है तो तुम्हारे पास क्यो न आई होगी? पिताजी कभी भेदभाव नही कर सकते। तुम्हारे और मेरे बीच किसी प्रकार का मतभेद भी नही हुआ कि पिताजी तुम्हारे ऊपर रुष्ट हो जाए ओर पेटिया भेजना बन्द कर दे। फिर क्या कारण कि आज तुम सब यह कम्वल के टुकडे ओढ–ओढ कर आई हो?

शालिभद्र की पत्निया उसका प्रश्न सुन कर हसने लगी। उनमे जो सबसे बडी थी, वह कहने लगी– आप देवलोक के वस्त्रो को बहुत अच्छे ओर सुन्दर समझते है, पर यह वस्त्र बहुत प्रेम के है। इनमे बडा रहस्य छिपा हे। देवलोक के वस्त्र तो न मालूम किस भाक्ति से उतरते हे ससुरजी अपने हाथ से देने नही आते लेकिन यह वस्त्र सासूजी ने स्वय अपने हाथ से दिये हे। यह उनकी प्रसादी है। इन्हे पहिन कर हमे जो आनन्द मिला हे वह स्वर्गीय वस्त्रो से नही मिला।

शालिभद्र ने आश्चर्य के साथ कहा—क्या यह कपडे माताजी ने दिये है? उन्होने खरीदे है? बिना आवश्यकता खरीदने की क्या बात थी?

पत्नी ने कहा— इन कपडो के कारण देश की प्रतिष्ठा नष्ट होती थी और नगर की नाक कट रही थी। व्यापारी उदास होकर लौट रहे थे। कोई खरीददार नही मिलता था। सासूजी ने खरीद कर देश की और नगर की लाज रख ली है और व्यापारियो की चिन्ता मिटा दी है।

इतना कह कर शालिभद्र को पिछली घटना सुनाई गई। शालिभद्र को विस्मय हुआ कि माताजी कितनी दूरदर्शिनी है और उनका मातृभूमि के प्रति कितना गाढा प्रेम है।

सचमुच मातृभूमि की बडी महिमा है। 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी। अर्थात मातृभूमि स्वर्ग से भी बढकर है। मित्रो! भारत आपकी मातृभूमि है। राणा प्रताप ने अपनी मातृभूमि की महिमा समझी थी। वह अपनी मातृभूमि का दुलारा लाल था। माता की भक्ति के लिए वह 19–20 वर्ष तक अरावली की बीहड पहाडियो मे भटकता रहा और कष्ट पाता रहा, मगर जीते जी उसने मातृभूमि का अपमान नही होने दिया। मगर आज के अधिकाश लोगो मे यहा भावना दिखाई नही देती। वह समझते हैं— जिसने जन्म दिया वह हमारी माता है। भूमि माता कैसे हो सकती है? उन्हे नहीं मालूम कि जन्म देने वाली तो सिर्फ माता ही है मगर जन्म–भूमि बडी माता है, जिसके अन्न–पानी से उनकी माता के शरीर का निर्माण हुआ है।

भारत आपकी मातृभूमि है। जो मातृभूमि की शक्ति के महत्त्व को समझेगा वह देवलोक के वस्त्रो को भी धिक्कार देगा।

अपनी स्त्री की बात सुनकर शालिभद्र लज्जित–सा हुआ। वह सोचने लगा— मेरी पत्नियो ने मेरी माता के प्रेम के महत्त्व को समझ लिया मगर मै कब जागूगा? मै कब उस महत्त्व को समझूगा? साथ ही उसे यह जान कर प्रसन्नता भी हुई कि मेरी पत्निया मेरी माता पर गहरी आस्था और दृढ–भक्ति रखती है। यह सब धर्म का ही प्रताप है।

आज की स्त्रिया होती तो कम्वल के टुकडे पाकर नाक-भॉह सिकोडती और शायद जली-कटी सुनाने से भी न चूकती। मगर धन्य हें उस शालिभद्र की स्नेहशीला पत्निया जो स्वर्गीय वस्त्रो को भी तुच्छ समझ कर सास के दिये साधारण उपहार को अनमोल समझती हें ओर उसे पाकर अपूर्व आनन्द अनुभव कर रही हें।

शालिभद्र विचारने लगा- मेरी पत्निया तो माता के प्रति प्रेम की परीक्षा देकर उत्तीर्ण हो चुकीं में कव उत्तीर्ण होऊगा? तॅतीस परीक्षार्थियो मे से वत्तीस परीक्षा देकर उत्तीर्ण हो जावे ओर एक कारणवश परीक्षा न दे पावे तो उसके हृदय मे जेसी ग्लानि होती हे, वेसी ही ग्लानि का अनुभव शालिभद्र करने लगा।

शालिभद्र की पत्नियो ने उस दिन वही कम्वल ओढे। दूसरा दिन हुआ। नित्य की भाति आकाश से फिर वस्त्रो ओर आभूषणो की पेटिया उतर आई।

शालिभद्र की पत्निया आपस मे विचार करने लगीं- स्वर्ग के कपडे पहिनते-पहिनते हमे इतने दिन हो गए, मगर उनसे हमने अपना ही तन ढका है। किसी को दान नही दिया। देवलोक के कपडे ठहरे किसी को दे दे तो उसे पहनने मे लज्जा होगी, क्योकि ऐसे कपडे पहिनना उसकी हेसियत के वाहर है। सभी लोग उसकी ओर उगली उठाएगे।

मेन्चैस्टर का मलमल आप शोक से पहनते हें। अगर आप किसी श्रमजीवी को वह दे दे तो वह बेचारा क्या करेगा। ऐसे कपडे गरीवो को देना उन्हे गडहे मे गिराना है। उन्हे तो मोटी खादी चाहिए। वही उनके काम आ सकती हे।

शालिभद्र की पत्निया सोचने लगीं- अब तक तो कपडा को दने की अनुकूलता ही नहीं थी। आज अनुकूलता हे। यह कम्वल किसी को दिये जाए तो अच्छा होगा। फेंक देने से क्या लाभ हे? यह मर्त्यलोक के वस्त्र हे दे देन मे कोई हानि भी नही हे।

इस विचार से सवको प्रसन्नता हुई। उन्होने कहा- सासू के हाथ का प्रेम का कपडा दूसरो से भी प्रेम उत्पन्न करेगा यह वड आनन्द की वात हे। मगर प्रश्न यह है कि दिये किसे जाए? घर मे दास-दासियो की सख्या इतनी हे कि एक-एक टुकडा भी उनके पल्ले न पडेगा। फिर भी किसे द आर किस न दे? तो जिस प्रकार इन कम्वलो से सासू ने अपनी परीक्षा की हे उसी प्रकार हम लोग किसी की परीक्षा करे। ऐसा करने स दान भी हो जाएगा आर यह

परीक्षा भी हो जाएगी कि अपने घर मे किसी की नीयत तो खराब नही हो जाएगी क्योकि जब तक अपनी नीयत खराब न होगी तब तक नौकरो की भी नीयत खराब नही होगी। अगर हम मे धर्म है, हमारा धर्म छूटा नही है तो अपने घर मे रहने वालो मे और घर आने वालो मे भी धर्म रहेगा। उनका धर्म नही छूटेगा। उनकी नीयत मे तब तक खराबी नही आ सकती, जब तक अपनी नीयत मे खराबी नही आई है। अगर अपने घर मे रहने वालो की नीयत खराब हो जाय तो उसक प्रायश्चित्त हमे करना चाहिए।

इस विचार से वे पसन्न हो उठी। उन्हे अपने धर्म की परीक्षा करने मे किसी प्रकार की हिचकिचाहट नही हुई। सब कहने लगी—मै अपने धर्म की परीक्षा करूगी।

निर्णय हुआ कि कम्बलो को चौक मे उतार कर डाल दिया जाय, अगर बिना पूछे कोई ले जाय तो समझना चाहिये कि हमारे भी धर्म मे कमी है।

सब ने स्नान किया और देवलोक के कपडे पहन लिये। उतरे हुए कम्बल चौक मे डाल दिये गये। सब से पहले रास्ते मे झाडू लगाने के लिए भगिन चौक मे गई। कम्बल के बत्तीसो टुकडे एक जगह पडे हुए अदभूत पकाश कर रहे थे। भगिन उस प्रकाश को देखकर चौकी कि कही आग तो नही लग रही है। डरती—डरती वह नजदीक गई। नजदीक जाने पर मालूम हुआ कि यह कम्बल है। उसने सोचा—किसी महारानी के कपडे गिर गये दीख पडते है।

उसने पुकार कर कहा—जरा देखिए तो सही यह क्या है? भगिन की आवाज सुनकर उन्होने बाहर की ओर देखा। भगिन ने अपने भाग्य की सराहना करते हुए कहा—भला हो इन कपडो का जिनकी बदोलत आज इन देवियो के दर्शन हुए। उसने प्रकट मे कहा—जरा नजर तो कीजिये ये कपडे केसे पडे हैं?

शालिभद्र की पत्नियो ने कहा—चलो अपनी परीक्षा हो गई। हममे धर्म है, इसी से इस भगिन की नीयत नहीं बिगडी। नहीं तो यह उठाकर चम्पत हो सकती थी।

शालिभद्र की पत्नियो मे से एक ने कहा—ले जाओ ले जाओ ये तुम्हारे लिये पडे हैं।

मेहतरानी सोचने लगी में चुपचाप उठा ले जाती तो चोरी के पाप मे डूबती। मेरा धर्म चला जाता।

लेकिन मेहतरानी को सहसा विश्वास न हुआ कि वास्तव मे ये कीमती वस्त्र मेरे लिए डाल दिये गये हैं। उसने सोचा— शायद मजाक किया गया है। यह सोचकर वह सेठानियो के चेहरे का भाव ताडने के लिये उनकी ओर देखने लगी। पर उनके चेहरे पर हास्य का कोई लक्षण उसे दिखाई न दिया। तब उसने कहा— सचमुच ये मेरे लिए है? सेठानियो ने कहा—हा हा तुम्हारे लिये तो हे ही। ले जाओ ओर कोई पूछे तो हमारा नाम ले लेना।

मेहतरानी के प्रमोद का पार न रहा। उसे जेसे कुवेर का कोष मिल गया हो। उसने सोचा— पहले अपना काम निपटा लू ओर तब ये वस्त्र ले जाऊगी। पुरस्कार पाकर काम मे ढील देना उचित नही है। यह सोचकर उसने चोक बुहार डाला।

छोटी समझी जाने वाली कोमो मे आज भी जितनी ईमानदारी देखी जाती है, उतनी बडी समझी जाने वाली कोमो म हे या नही यह कहना कठिन हे। एक गृहस्थ एक बार शोच जाने के इरादे से स्टेशन से बाहर निकल। स्टेशन के बाहर की पाखाना बना हुआ था। मगर वह पाखाने मे शौच नही जाना चाहते थे। उन्होने भगी से पूछा—कही बाहर टट्टी जाने की जगह भी हे? भगी ने एक मेदान बतलाते हुए कहा—आप वहा टट्टी हो आइए। में बुहार लूगा। वह चले गये ओर जब लोटकर आये तो भगी को एक—दो आने पेसे देने लगे। भगी ने कहा—पाखाने मे टट्टी जाने वालो से एक पसा ओर मेदान मे जाने वालो से दो पसा लेन का नियम ह। म नियमानुसार आपस दो पस ले सकता हू न कम और न ज्यादा। उन गृहस्थ ने कहा— अच्छी बात ह। म तुझे पुरस्कार के रूप मे ज्यादा देता हू, ले ले। तब भगी बाला—आज आपस

पुरस्कार ले लूगा तो मेरी नीयत ठिकाने नही रहेगी और फिर मै सभी से पुरस्कार की आशा रखने लगूगा। इस कारण मै नियत रकम से ज्यादा नही ले सकता।

यह वृत्तान्त पैसे देने वाले भडारी जोरावरमलजी ने स्वय ही मुझे सुनाया था। जब एक गरीब भगी की भी यह नीयत है तो उन बहिनो और भाइयो से क्या कहा जाय जो मोटरो और घोडागाडियो के निमित्त तो सैकडो ही नही हजारो रुपये उडा देते है किन्तु धर्म के नाम पर खरीदने की शक्ति होते हुए भी दो पैसे की चीज के लिये हाथ फैला कर कहते है–हमे दो हमे दो। तात्पर्य यह है कि कई एक मालदारो की भी निष्ठा वैसी नही रहती जैसी उस गरीब मेहतर की थी। यह क्या उचित कहा जा सकता है? कोई वात्सल्य भाव से भेट दे यह बात दूसरी है लेकिन मुह से माग कर लेना कितनी बेहूदी बात है। जिसकी निष्ठा ही ठिकाने नही है वह धर्म की सेवा कैसे करेगा?

जो व्यक्ति धर्म मे निष्ठा स्थापित करना चाहता है उसे आकाक्षा पर विजय प्राप्त करनी चाहिए। एक भगिन ने भी, जिसे आप नीच जाति समझते है लाखो सोनेयो की कीमत के माल पर नीयत नही बिगाडी और न मुह से याचना की तो जो लोग उच्च कुल मे जन्मे हैं उन्हे विशेष रूप से इस ओर ध्यान देना चाहिए।

आज के लोग तो इनाम–इकराम पाकर काम खराब कर देने की भी परवाह नही करते परन्तु उस भगिन ने आज बहुत प्रेम से बुहारा।

भारत ने भगी को सफाई का काम किस तत्त्व की प्रेरणा से सौपा होगा यह कहना कठिन है। विनीता नगरी जव बसी थी तब भगवान ऋषभदेव ने भगियो का वर्ग किसलिए बनाया? उस वर्ग को यह नीच काम क्यो सौंपा? और सबसे बडी बात तो यह है कि उस वर्ग ने यह स्वीकार ही क्यो किया? अगर आज स्त्रियो को समझाया जाय कि बालक की अशुचि उठाना बुरा है—घृणित है तो उन्हे उस काम से घृणा हो जायगी। इसी कारण जब रोगी की सेवा करने का अवसर आता है तो सेवा करने वाली को भाग्यवान् आदि ऊचे विशेषणो से सबोधित किया जाता है, जिससे कि सेवा करने वाली को अपने कार्य के प्रति घृणा न हो और हर्षपूर्वक वह काम करे। इसी प्रकार भगियो को न जाने क्या कह कर यह काम सौंपा गया होगा? इसी कारण भगी को महत्तर—पद दिया गया है—नीचतर पद नही दिया गया है।

कम्बल ओढ कर मेहतरानी बाजार मे होकर गई और राजा के द्वार के सामने झाडने लगी। रास्ते मे जिस किसी ने उसे रत्न—कम्बल ओढे देखा उसकी दृष्टि उस पर ठहर गई सब ने सोचा उसे ठहरा कर कबल के विषय मे पूछताछ करे। मगर उसने उत्तर दिया— मुझे काम करना है। देरी हो गई है। इस समय ठहर नही सकती और वह बिना ठहरे चलती गई है। लोग चकित रह गये कि जिस रत्न—कम्बल को महाराजा श्रेणिक भी नही खरीद सके थे, वह मेहतरानी के पास कैसे आ गया? किसी ने कहा कफन का होगा। दूसरे ने उत्तर दिया— इसे खरीदा ही किसी ने था कि कफन मे इसे मिला होगा।

सबेरा हो चला था। महारानी चेलना अपने महल के झरोखे मे बैठी प्रात कालीन शोभा का निरीक्षण कर रही थी। उसी समय मेहतरानी झाडनेके लिये पहुची। महारानी की दृष्टि तत्काल उस पर पडी और कम्बल देखकर वह आश्चर्य मे डूब गई। रानी को यह पहिचानते देरी न लगी कि यह वही कम्बल है जो दरबार मे बिकने आया था और मैने एक कम्बल खरीदने के लिये महाराजा से निवेदन किया था, मगर यह बहुमूल्य कम्बल मेहतरानी के पास कैसे आ गया?

कई लोग भगिन के पास खडे होकर उसी कम्बल के विषय मे पूछताछ कर रहे थे। भगिन परेशान थी ओर शायद सोचती थी कि ये लोग कैसे निकम्मे है जो अपना—अपना काम छोड कर यहा जमा हुए हे। मे अपना काम नियत्त समय पर न करती अर्थात जल्दी शालिभद्र के घर की तरफ न जाती तो ये कम्बल केसे मिलते?

आखिर महारानी ने मेहतरानी को आवाज दी। मेहतरानी सोचने लगी– आखिर इस कम्बल के पताप से ही आज मुझे महारानी के दर्शन करने का सौभाग्य मिल रहा है। फिर उसने कहा–'जी अन्नदाताजी।

महारानी ने किंचित् रुखाई प्रकट करते हुए पूछा–सच बता यह कम्बल कहा से लाई?

मेहतरानी–अन्नदाता मैं चोरी करके तो ऐसी चीज ले ही कैसे सकती हू? आप सरीखे किसी दाता से मुझे मिल गया है।

महारानी– इसे देने वाला दयालु कौन है?

मेहतरानी– मैं पहले–पहल शालिभद्र के यहा झाडू लगाने जाती हू। वहा मुझे ऐसे–ऐसे बत्तीस कम्बल मिले है।

महारानी– तूने ऐसा क्या काम किया था कि इतने कम्बल इनाम मे पाये?

मेहतरानी– वही जो आपके यहा करती हू।

महारानी– सच–सच कह देना, चुराकर तो नही ले आई हैं?

मेहतरानी– महारानीजी चुराकर लाती तो क्या बाजार मे ओढकर निकलती?

भगिन की बात सुनकर महारानी सन्नाटे मे आ गई। उसका चेहरा उदास हो गया। सोचने लगी–ओफ! मै महारानी होकर भी जिस वस्तु से वंचित रह गई वही मेहतरानी को अनायास प्राप्त हो गई। जिसके घर ऐसे बहुमूल्य कबल भगिन को दे दिये जाते है उसके यहा कैसे कपडे पहने जाते होगे।

रानी उदास होकर वहा से चल दी। पास खडे लोग सोच रहे थे कि व्यापारियो के पास कुल सोलह कबल थे। जिसने सोलहो कबल खरीद कर और एक–एक के दो–दो टुकडे करके भगिन को दे दिये वह कितना भाग्यवान पुरुष होगा।

सारे नगर मे आज यही चर्चा थी। जो सुनता, आश्चर्य करता और सोचता इतनी सम्पत्ति शालिभद्र के पास कहा से आई होगी? लेकिन वे लोग कुछ भी निश्चय न कर सके।

महाराज श्रेणिक को सूचना दी गई कि आज महारानीजी उदास होकर कोपभवन मे हैं। श्रेणिक ने सूचना पाकर सोचा–रानी प्रजा की माता हे। उसका उदास रहना उचित नही है। यह सोचकर श्रेणिक रानी के पास आये और उन्होने उदासी का कारण पूछा।

रानी ने कहा– मेंने आपसे एक रत्न–कम्बल खरीदने की प्रार्थना की थी। मगर आपने उस प्रार्थना को स्वीकार नही किया। आपने सोचा होगा इतनी रानियो मे एक रत्न–कम्बल लेने से आपस मे तकरार होगी। यह विचार कर आपने एक भी कम्बल नही लिया। में मानती हू कि राजा का कोष प्रजा के कठिन परिश्रम से भरता है और अनेक कम्बल खरीदना–प्रजा के प्रति अन्याय होता। लेकिन एक कम्बल खरीद लेना तो कोई बडी बात नही थी। क्या आप नही जानते कि हम सब रानिया आपस मे हिल–मिल कर रहती है। एक कम्बल खरीदने से हमारी परीक्षा भी हो जाती। या तो हम एक–एक दिन उसे ओढ लेती या फिर जिसे आपकी इच्छा होती उसी को आप दे देते। मगर एक कम्बल तो ले लेना ही उचित था। बेचारे व्यापारी बडी आशा लेकर मगध की राजधानी मे आये थे। वे निराशा लेकर लौटे। इससे राज्य की प्रतिष्ठा और मर्यादा को क्या क्षति नहीं पहुची है? इसके अतिरिक्त देश के कला–कौशल को इससे कितनी हानि पहुचेगी, आपने यह भी सोचने का कष्ट नही किया। आपके लिये धन इतना मूल्यवान हो गया कि उस पर आपने राज्य की प्रतिष्ठा को, कला–कौशल के उत्कर्ष को और पटरानी की साध को भी निछावर कर दिया।

राजा श्रेणिक हठीले पुरुष नही थे कि अपने पुरुषत्व के अभिमान मे आकर पत्नी की उचित बात को भी अस्वीकार कर देते। वस्तुत पत्नी के समुचित परामर्श को स्वीकार कर लेने जितनी उदारता तो पति मे होनी ही चाहिये। यद्यपि रानी के कथन मे उलाहने की प्रधानता थी फिर भी उस उलाहने मे जो परामर्श छिपा था उस पर श्रेणिक का ध्यान गया। उन्होने कहा–महारानी मुझसे भूल अवश्य हो गई हे। पर उसका प्रतिकार भी हो सकता है। उन व्यापारियो को बुलाकर एक कम्बल खरीद लूगा।

राजा ने उसी समय व्यापारियो को बुला लाने का आदेश दिया। व्यापारी अपने ठहरने की जगह अपने धनमाल की हिफाजत मे लगे हुए थे। इसी समय राजा के आदमी वहा जा पहुचे। उन्होने राज–दरबार मे उपस्थित होने की राजाज्ञा उन्हे सुनाई। राजा का आदेश सुनकर व्यापारी चिन्ता म पड गये। सोचने लगे–क्या राजा चुगी मागना चाहता हे? हमने सुना था। राजा

श्रेणिक धर्मराज्य करते है और उनके राज्य मे चुगी नही ली जाती। फिर क्या हमसे चुगी ली जाएगी?

व्यापारी अनमने भाव से राजा के पास पहुचे। राजा ने उनसे कहा—तुम लोग जो कम्बल लाये थे उस समय तो जचे नही थे। मगर महारानी की इच्छा एक कम्बल खरीदने की है। इसलिए एक कम्बल दो तो और उसका मूल्य कुछ अभी ले लो कुछ फिर ले लेना।

राजा के खजाने मे किसी पकार की कमी नही थी। फिर भी उसने व्यापारियो की परीक्षा करने के उद्देश्य से यह कह दिया कि कीमत का कुछ भाग अभी ओर कुछ फिर ले लेना। राजा ने सोचा—ये व्यापारी परदेश से आये है। देखना चाहिए इनके मन मे मगध के पति विश्वास है या नही? एक व्यापारी ने कहा महाराज आप मगध के पुण्यशाली सम्राट हैं। कम्बलो की कीमत कही डूब नही सकती, यह बात हम भली—भाति समझते हैं। मगर अब सब कम्बल बिक चुके है और उनकी कीमत भी हम लोग पा चुके हैं।

राजा श्रेणिक व्यापारी की बात सुन कर दग रह गये। कहने लगे क्या इस नगर मे ऐसा भी कोई ऋद्धिशाली है जो वह रत्न—कम्बल खरीद सके।

व्यापारी—हा महाराज! आपके राज्य मे ऐसे—ऐसे सम्पत्तिशाली मौजूद है जो एक क्या सोलह रत्न—कम्बल खरीद सकते हैं। शालिभद्र ऐसे ही श्रीमान है। उन्हे घर के काम—काज की चिन्ता ही नही है। उनकी माता ने उन्हे इस चिन्ता से परे ही रख छोडा है। हम लोगो ने उन्हे देखा भी नही। पर हमारे सभी कम्बल उनके यहा खरीद लिए गए हें और उनका मूल्य भी हमें चुका दिया गया है।

कि मै राजा होकर भी एक कम्वल नही खरीद सका ओर एक ही सेठ ने सोलह कम्वल खरीद लिये।

रानी मन ही मन कहने लगी– अभी तो इन्हे खरीदने की वात पर ही आश्चर्य हो रहा है, परन्तु जव यह सुनेगे कि वे सव कम्वल भगिन को दे दिए गए तो केसा आश्चर्य करेगे?

राजा आगे वोले– शालिभद्र के घर सोलह कम्वल खरीदे गये हें तो उनमे से एक कम्वल मोल खरीदा जा सकता हे। उसे नगद कीमत चुका दी जायेगी। वह चाहेगा तो नफा भी दे देगे।

क्या राजा का नगर मे कोई विश्वास नहीं करता था जो उन्हे कहना पडा कि उसे नकद कीमत चुका दी जायेगी? वास्तव मे बात यह हे कि बुद्धिमान लोग आपस मे उधार का लेन–देन नहीं रखते। इससे स्नेह–सम्बन्ध कायम रहता है और प्रीति टूटने का अवसर नही आता। इसी अभिप्राय से राजा ने नकद कीमत दे देने की बात कही है।

राजा श्रेणिक अगर आजकल के राजाओ के समान होता तो पैर मे सोना पहिनने की निषेधाज्ञा के समान रत्न–कम्बल न ओढने की आज्ञा जारी कर सकता था। मगर प्राचीनकाल के राजा कृत्रिम उपायो से अपनी मर्यादा रखने का प्रयत्न नही करते थे। यही कारण है कि उनकी जो मान–मर्यादा थी उसका भाताश भी आज के राजाओ को प्राप्त नही हे।

राजा श्रेणिक का भेजा हुआ सेवक भद्रा के घर पहुचा। भद्रा को सूचना दी गई। भद्रा विचार करने लगी–आज तक कभी राजा का आदमी यहा नही आया। आज उसक आने का क्या कारण हो सकता हे? मेरे यहा न किसी का लेन–देन है औंर न मने किसी की फरियाद ही की हे। हमारे खिलाफ भी किसी की कोई शिकायत नही हो सकती। लेकिन उनकी छत्र–छाया मे रहते है। वह मालिक हे। उनका आदमी आया हे तो सोभाग्य की बात है।

भद्रा ने राजा के आदमी को सत्कार के साथ भीतर लाने का हुक्म दिया। जव सामने आया तो भद्रा ने उचित आदर करके उसके आने का कारण पूछा।

भद्रा–सोभाग्य की बात हे कि आज हमारे महाराज ने हमे याद किया हे। कहो महाराज की क्या आज्ञा हे?

आदमी– सुना हे आपके यहा रत्न कम्वल खरीदे गये ह। महारानी जी आज हठ चढ गई हें। उनका कहना हे कि कम्वल न लेने स उसका

अपमान हुआ है। अतएव महाराज ने मुझे आपके पास भेजा है कि कम्बल नकद लागत मूल्य मे या कुछ नफा लेकर दे दे।

भद्रा—बस इसलिए भेजा है?

भद्रा सोचने लगी— महाराज ने कम्बल मगाया है। और वह भी नकद दाम चुका कर। दरअसल वे अन्तर्यामी हैं। वे हृदय की भावनाए पहिचानते है। वे हुक्म देकर भी कम्बल मगवा सकते थे, मगर वाह रे! दयालु राजा। उन्होने सोचा होगा— यो ही हुक्म देकर कम्बल मगवाने से भद्रा को दुख होगा। उन्होने मेरी हृदय की भावनाओ को पहिचान लिया है। इसी कारण तो नकद कीमत चुकाने की बात कहला भेजी है।

मित्रो! आपको भी अन्तर्यामी बनना चाहिये। कम से कम अपनी स्त्री के अन्तर्यामी तो बनना ही चाहिये। पति को पत्नी का और पत्नी को पति का हृदय तो पहिचानना ही चाहिये। दोनो को एक दूसरे की भावनाओ को समझना और उनकी कद्र करना चाहिये। मगर इस ओर कौन ध्यान देता है? पत्नी को वस्त्रो और आभूषणो की चिन्ता से अवकाश नही और पति विषय—भोग मे फसा रहता हैं। कौन किसके अन्तरग को पहिचाने? पति—पत्नी गुरु—शिष्य ओर राजा—प्रजा अगर हृदय से हृदय को पहिचानने का प्रयत्न करे तो किसी प्रकार की गडबड ही क्यो हो?

भद्रा सोचती है— जो राजा अपनी प्रजा की भावनाओ का सन्मान करता है उसके लिए प्रजा तन मन धन निछावर कर दे तो कौन बडी बात है। प्रजा के स्वामी होकर भी महाराज नकद दाम देकर कम्बल मगा रहे हैं इसी से प्रकट है कि वे किसी को सताना नही चाहते। ऐसे अन्तर्यामी राजा के लिए मै प्राण भी निछावर कर सकती हू, कम्बल की तो बात ही क्या है?

भद्रा ने राजा के आदमी से कहा— आप महाराज का सन्देश लेकर आए सो अच्छा हुआ। मगर मेरे यहा बहुए ऐसी सुकुमार हैं कि यहा का बारीक से बारीक और मुलायम से मुलायम वस्त्र भी वे नही पहिचान सकतीं। [illegible] भी उनका शरीर छिलता है। ऐसी दशा मे उनसे कम्बल नही [illegible] सकते है।

बहुओ ने प्रेम के साथ मेरे हाथ से कम्बल ले लिए मैंने गनीमत समझी। उन्होने शायद ही उन्हे ओढा हो। स्नान करके शरीर पोछ कर निर्माल्य वस्त्रो मे डाल दिया होगा। अव विचारणीय वात तो यह हे कि निर्माल्य वस्तु महाराज को कैसे भेट करू?

निर्माल्य वस्तु न देने के भद्रा के कथन मे रहस्य हे। उसे समझना होगा। आजकल के लोग प्राय झूठी चीज दूसरो को देकर उनका अपमान करते है। मगर ऐसा करना मनुष्यता की अवहेलना करना हे। भद्रा के कथन मे एक रहस्य यही है। दूसरा रहस्य यह कि मानव–शरीर कैसा ही सुन्दर क्यों न हो, वह पवित्र वस्तु को भी अपवित्र वना देता है। शरीर के ससर्ग से उत्तम से उत्तम वस्तु भी घृणित हो जाती है। अतएव मनुष्य उत्तम आभूषण पहनने बढिया वस्त्र धारण करने अथवा सरस भोजन करने से ही उत्तम नही हो सकता, वरन् श्रेष्ठ कर्त्तव्य करने से ही श्रेष्ठ वनता है। लोग अहकार मे पडकर धर्म को भूल जाते हैं परन्तु कल्याणकारी तत्त्व की ओर कभी ध्यान नहीं देते। भद्रा सेठानी को इन बातो का ज्ञान था। इसी कारण वह निर्माल्य वस्तु न देने के लिए कह रही हैं।

निर्माल्य का अर्थ हें– काम मे आई हुई अपवित्र वस्तु। सवा लाख स्वर्ण–मोहरो के मूल्य का वस्त्र शरीर पर ओढा गया तो शरीर ने उसकी कद्र बढाई या घटाई?

'घटाई !

मनुष्य–शरीर जब ऐसा है तो फिर लोग किस विचार से मूछो पर ताव देते हैं ! क्या वस्तु को बिगाडने वाले ही मूछो पर ताव दिया करते हैं। सरस से सरस भोजन को भी विष्टा बना देने वाले और वस्त्रो को निर्माल्य कर देने वाले भी मूछो पर ताव देते हैं। इस पर मनुष्य को लज्जित होना चाहिये या मूछो पर ताव देना चाहिये? भद्रा कहती हे–महाराज को निर्माल्य वस्त्र दू तो कैसे दू?

मित्रो ! जब राजा को भी अशुद्ध वस्तु नही चढती तो भगवान् को कैसे चढेगी?

देहो देवालय प्रोक्तो जीवो देव सनातन ।
त्यजेदज्ञाननिर्माल्य सोऽह भावेन पूजयेत्।।

तुम्हारा शरीर देवालय है। इसमे चिदानन्द आत्मा देव विराजमान है। अज्ञान निर्माल्य हे। आप भगवान् को निर्माल्य अज्ञान केसे चढाते हें?

अज्ञान क्या हे? यही कि हमे जो मार रहा हे उस मारने वाले को हम अपना शत्रु समझते हें यह अज्ञान हे। यह अज्ञान भगवान् को नही चढ

सकता। ऐसे अवसर पर ज्ञान की शरण लेना ही भगवान् की सच्ची पूजा है इस पकार की पूजा करने वाले आत्म–स्मरण के द्वारा परम कल्याण के पात्र बनते है।

भद्रा को पता नही था कि बहुओ ने कम्बल भगिन को दे दिए है। उसका अनुमान था कि उन्होने शरीर पौछ कर कम्बलो को निर्माल्य वस्त्रो मे डाल दिया होगा। इसी कारण भद्रा ने राजा के आदमी को यह उत्तर दिया भद्रा का उत्तर सुनकर वह चकित रह गया और भद्रा के घर से चल दिया।

भद्रा के घर से लौट कर आदमी जब राजा के पास पहुचा, उस समय राजा रानी चेलना के भवन मे थे। दोनो कम्बलो की ही चर्चा कर रहे थे और आदमी के लोटने की प्रतीक्षा कर रहे थे। आदमी को खाली हाथ आता देखकर राजा को आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा–क्या शालिभद्र ने नकद दामो पर भी कम्बल देना स्वीकार नही किया ! क्या मेरा प्रताप इतना घट गया है? प्रजा को तो उचित है कि वह मेरी आज्ञा पाकर ही वस्तु दे दे, मगर नकद कीमत और नफा पर भी क्या कम्बल देने को शालिभद्र तैयार नहीं हुआ? क्या मेरा भाग्यफल इतना निर्बल हो चुका है?

आदमी के आने पर राजा ने पूछा–कम्बल नही लाये?

आदमी ने कहा– सेठानी भद्रा ने बडी प्रार्थना के साथ कम्बलो के विषय मे जो निवेदन किया है उसे सुनिये। उन्होने कहा कि नगर की प्रतिष्ठा के लिये मैने सोलह कम्बल खरीदे थे। उनके बत्तीस टुकडे करवा डाले थे।

राजा ने आश्चर्य के साथ कहा– रत्न– कम्बलो के टुकडे करवा डाले। क्यो !

आदमी–सेठानी ने कहा कि मेरे यहा बत्तीस बहुए है। मेरे लिए सब समान है कोई प्रिय और कोई अप्रिय नही है। अत सब को बराबर बटवारा करने के लिए बत्तीस टुकडे करवाए थे।

राजा– अच्छा तो देने के लिए क्या कहा ! एक या दो टुकडे ही क्यो नही दिये?

राजा ने पूछा– जब भद्रा की वहुओ को कम्बल पसन्द नहीं हें और वे उन्हे नही ओढती हे तो फिर एक कम्बल या उसका एक टुकडा देने मे क्या हर्ज था?

आदमी– सेठानी ने एक–एक टुकडा अपनी वहुओ की परीक्षा के लिये दिया था। वहुओ ने उन्हे प्रेम–पूर्वक ले लिया ओर इस प्रकार अपनी सास के प्रति आदर प्रकट किया।

उन्होने अपने व्यवहार से प्रकट कर दिया कि देवलोक के वस्त्र पहिनने पर भी वे अपनी सास की अवहेलना नही करती। इस प्रकार वहुओ ने वह कम्बल प्रेमपूर्वक ले तो लिए, मगर ओढे नहीं होगे। जेसे प्रतिदिन पहिने हुए कपडे उतार कर निर्माल्य वस्त्र भण्डार मे डाल दिये जाते हे उसी प्रकार कम्बल भी शरीर पौछकर भण्डार मे डाल दिये होगे। अतएव भद्रा ने प्रार्थना की कि निर्माल्य वस्त्र मैं अपने महाराज को कैसे दे सकती हू?

सेवक की बात सुनकर राजा और रानी के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। राजा ने रानी की ओर एक खास तरह की नजर से देखा जिसका आशय यह था कि क्या निर्माल्य वस्त्र भण्डार मे से भी कम्बल मगवा ले?

रानी सोचने लगी– इन निर्माल्य कम्बलो ने तो हमको ही निर्माल्य बना दिया।

राजा और रानी आपस मे कहने लगे अपना सुकृत समालो। हम लोग तो एक कम्बल के लिए तरस रहे हें ओर भद्रा के घर सोलह कम्बलो के बत्तीस टुकडे कर दिये गए। ओर फिर वे निर्माल्य वस्त्रो मे फेक दिये गये। उसके और अपने पुण्य की तुलना करो। रानी कहने लगी– में रानी हू, मगध के विशाल साम्राज्य की स्वामिनी कहलाती हू और भद्रा मेरे राज्य मे रहने वाली प्रजा है। फिर भी उसका सुकृत देखकर आज मैं निर्माल्य बन गयी हू। मुझे खयाल आ रहा हे कि सवा लाख स्वर्ण–मोहरो के मूल्य का वस्त्र भी जिस शरीर को छूकर निर्माल्य हो गया तथा शरीर पर पडने के कारण में अब उसे नही ले सकती, किन्तु घृणा करती हू, वह शरीर केसा हे? आत्मन! तू किस शरीर मे भूला हुआ हे? निर्माल्य वस्त्र का उपयोग करने से घृणा होती है तो यह आत्मा किन–किन निर्माल्य वस्तुओ का सेवन करता हे यह देखने की मुझे अन्त प्रेरणा हुई हे। कम्बल मुझे इशारा कर रहे हें कि निर्माल्य होने के कारण आपने मुझे तो त्यागा मगर भीतर भरे हुए निर्माल्य पदार्थों का त्याग कब किया जायगा?

मित्रो! चर्बी– लगे वस्त्र पवित्र हे या निर्माल्य?

'निर्माल्य!

दूध के कटोरे मे शराब की एक बूद डाल दिया जाय तो पवित्र बना रहेगा या अपवित्र हो जायेगा?

अपवित्र हो जायेगा।

उसे पीना पसन्द करोगे?

'नही।

सून से साफ की गई विदेशी शक्कर की बनी बिस्कुट आप खा जाते है तो फिर क्या कहा जाय? आपमे भी रानी चेलना सरीखी चेतना होनी चाहिये। चेलना चाहती तो निर्माल्य कम्बलो मे से कम्बल मगवा लेती और अग्नि मे डालकर उन्हे पवित्र करवा लेती। मगर क्या उसने ऐसी इच्छा भी की? नही। फिर आप भी तो चेलना के भाई-बहिन ही हैं। फिर कैसे कहते है कि चर्बी के वस्त्र पानी मे धो लेने पर पवित्र हो गये।

राजा श्रेणिक ने रानी से कहा-महारानी, अपने घर मे और शालिभद्र के घर मे उतना ही अन्तर है जितना सरोवर और सागर मे होता है। अपना घर सरोवर-सा है और शालिभद्र का घर सागर के समान। अतएव हमे गर्व का आश्रय न लेकर उसक पूर्वकालीन सुकृत की सराहना करनी चाहिये। जिनकी लक्ष्मी दया दान और सुकृत्यो के प्रभाव से है उनकी लक्ष्मी के सामने अहकार और डाह नही करना चाहिये।

पत्येक वस्तु मे गुण और अवगुण दोनो ही मिलते हैं। उस वस्तु को देखने के दृष्टिकोण भी भिन्न-भिन्न होते है। एक आदमी किसी की महान् ऋद्धि देखकर ईर्ष्या से जल उठेगा और पाप का बध कर लेगा और दूसरा जो सम्यग्दृष्टि और ज्ञानी है विचार करेगा कि इस ऋद्धि को देखकर हमे सुकृत्य की शिक्षा लेनी चाहिये।

राजा-रानी के हृदय मे शालिभद्र की ऋद्धि देखकर अगर ईर्ष्या होती तो वे कोई न कोई उपाय खोज कर उसे छीन लेने का प्रयत्न करते। वे सोचते थे कि हमारी प्रजा होकर भी हमारे महल से ऊचा महल और हमारी [illegible] अधिक ऋद्धि क्यो? मगर श्रेणिक ऐसे राजा नही थे। वे प्रजा को अपनी सन्तान समझते थे और उसके उत्कर्ष मे आल्हाद अनुभव करते थे। इसी कारण उस समय राजा और प्रजा के बीच गहरा स्नेह-सम्बन्ध था और चारो ओर सुख-शाति का साम्राज्य था।

करोड अस्सी लाख मनुष्य भस्म हो गये। मगर महारानी चेलना इस कोटि की रानी नही है। वह सम्यक दृष्टि श्राविक थी उसे मालूम था कि ईर्ष्या करके आग भडकाना अपने लिए अशुभ कर्मो का वन्ध करना है। ज्ञानी पुरुष ईर्ष्या की आग से दूर रहते है और इसी कारण उन्हे सन्ताप नही भोगना पडता। पराई सम्पदा देखकर वे यही सोचते है कि यह सव सुकृत्यो का फल हैं अतएव सुकृत्य करना ही उचित है।

एक किसान की अच्छी खेती देखकर उसकी अच्छाई के कारण खोजकर दूसरा किसान अपनी खेती अच्छी वना ले यह तो न्यायसगत हे परन्तु ईर्ष्या से प्रेरित होकर उसकी खेती मे आग लगा देना क्या वुद्धिमत्ता हे? रानी चेलना इस तथ्य को भली–भाति जानती थी। वह ईर्ष्या की आग मे झुलसने से वची रही।

राजा श्रेणिक रानी से कहने लगी– रानी शालिभद्र के सुकृत्यो को देखो। इस नगर मे जिन वस्त्रो को कोई न खरीद सका हम तुम भी लेने मे सकोच कर गये, वही वस्त्र शालिभद्र के घर पाव पोंछ कर फेक दिये गये। शालिभद्र के घर मे ओर अपने घर मे कितना अन्तर हे? सच हे ससार मे कहीं अभिमान करने को अवकाश नही है। यहा सर्वत्र एक से एक बढकर मिल सकते हे। दीपक भले ही गर्व करे मगर सूर्य गर्व नही करता ओर कहता है– गर्व किस बूते पर किया जाय मैं तो देखते–देखते ही अस्त हो जाता हू। चन्द्रमा कहता है– मे गर्व करने के योग्य नही क्योकि राहु मुझे ग्रस लेता हे और काला स्याह बना देता है। जब गगनविहारी सूर्य ओर चन्द्रमा भी गर्व नहीं करते तो हम किस प्रकार गर्व करे? हमारे पास अभिमान की सामग्री ही क्या है।

इस प्रकार विचार करते–करते राजा श्रेणिक को शालिभद्र से मिलने की इच्छा हुई। उसने सोचा–जिसकी ऋद्धि ऐसी अनुपम हे देखना चाहिये वह स्वय केसा है। वह अपने साथ क्या–क्या सुकृत्य लाया हे यह तो अनुमान से ही जाना जा सकता हे परन्तु उसके पुण्य के व्यजक लक्षण शरीर पर क्या–क्या हैं, यह तो प्रत्यक्ष देखा जा सकता हे। शालिभद्र को प्रत्यक्ष देखने पर ही पता चल सकेगा।

नास्तिक लोग लक्ष्मी को निर्हेतुक मानते हे। उनके अभिप्राय से विना ही किसी कारण के लक्ष्मी यो ही मिल जाती हे। मगर आस्तिको का कहना हे कि जिनके शरीर पर सुलक्षण हें ओर जो सुकृत लेकर आया हे उसी के यहा लक्ष्मी आती हे।

ब्रह्मदत्त राजा भिखारी बनकर जगल मे गया था। उसके पैरो के निशान देखकर एक निमित्तवेत्ता ने सोचा– इस ओर कोई चक्रवर्त्ती गया है। वह इस आशा से दौड गया कि चकवर्त्ती मिल जायगा तो मै निहाल हो जाऊगा। मगर आगे जाने पर उसे चक्रवर्त्ती के बदले एक भिखारी दिखाई दिया। यह देखकर निमित्तवेत्ता ने कहा– मे चक्रवर्त्ती के दर्शन की अभिलाषा से दौडा आया था लेकिन यहा तो तुम्हारे दर्शन हुए। मैंने सोचा था– चक्रवर्त्ती के मिलने पर मै मालामाल हो जाऊगा– मेरा भाग्य जाग उठेगा। पर अब मै इसलिए रोता हू कि भाग्य न जागा तो न सही, पर मेरा शास्त्र ही झूठा हो रहा है।

ब्रह्मदत्त ने कहा– पण्डित तुम्हारा शास्त्र झूठा नही हैं। मै चक्रवर्त्ती ही हूं मगर समय के फेर से मुझे भिखारी बनना पडा है। जब मेरा भाग्य फिर से पलटे तब तुम मेरे पास आना। मै तुम्हे एक गाव दूगा। तात्पर्य यह है कि झूठ–कपट का सहारा लेने से लक्ष्मी नहीं मिलती। लक्ष्मी के साथ सुकृत्यो का सम्बन्ध रहता है और शरीर पर से वह प्रकट हो जाता है। यह सम्बन्ध देखने के लिए ही राजा श्रेणिक शालिभद्र को अपने पास बुलाने का विचार कर रहा है।

17. शालिभद्र–श्रेणिक–समागम

शालिभद्र को देखने की अभिलाषा राजा श्रेणिक के हृदय मे बलवती हो गई। अतएव उसने अपने मन्त्री और पुत्र अभयकुमार को बुलाया ओर कहा– अभय ! जाओ, शालिभद्र सेठ को सत्कार के साथ यहा ले आओ। मैं उसे देखना चाहता हू।

राजा शालिभद्र की सम्पदा नहीं देखना चाहता शालिभद्र को देखना चाहता है। अब आप विचार कीजिए कि बडा कौन है– शालिभद्र या शालिभद्र की सम्पदा?

'शालिभद्र !"

लोग लक्ष्मी को देखना चाहते हैं मगर लक्ष्मीपति को नहीं देखना चाहते। यह चाह रावण की चाह सरीखी है। रावण ने सीता को तो चाहा मगर राम को न चाहा। इसका फल क्या रहा?

"नाश !"

इसी प्रकार अधिकाश लोगो को लक्ष्मी चाहिए लक्ष्मीपति नही चाहिए। दाम चाहिए राम नही चाहिए।

श्रेणिक आकर शालिभद्र की लक्ष्मी को देखना चाहता तो दोडकर उसके घर जाता। मगर वह तो लक्ष्मीपति को देखना चाहता था। इसी कारण उसने अभयकुमार को भेजा कि वह शालिभद्र को बुला लावे।

आप लोग पाप का सग्रह करके लक्ष्मी चाहते हैं। अर्थात् राम का तिरस्कार करके सीता चाहते हैं। रावण ने राम को दूर रखकर सीता को अपनाने का जेसा उपाय किया था वेसा ही उपाय आप पुण्य को दूर रखकर लक्ष्मी को अपनाने के लिए करते हैं। किन्तु राजा श्रेणिक अपने घर ओर शालिभद्र के घर मे सरोवर तथा समुद्र सरीखा अन्तर देखकर भी लक्ष्मी को नही वरन् लक्ष्मीपति को देखना चाहता हे।

अभयकुमार शालिभद्र के विषय मे सब वृत्तान्त सुन चुके थे। उन्होने कहा– महाराज ! सब आपका ही पताप है। जिस राजा के राज्य मे शालिभद्र सरीखे सम्पत्तिशाली पुण्यवान गृहस्थ निवास करते हैं, उस राजा की कहा तक बडाई की जाय?

श्रेणिक–तो जाओ शालिभद्र को बुला लाओ। उसे दूसरे के साथ बुलाना उचित नही होगा यह विचार कर तुम्हे भेजता हू।

अभय– मेरे लिये तो एक पथ दो काज होगे। आपके आदेश का पालन भी हो जायगा और उस ऋद्धिमान का दर्शन आप से भी पहले मुझे हो जायगा।

प्रधान अभयकुमार बडी शानशौकत के साथ शालिभद्र के घर गया। पधान राजा का दूसरा अग होता है फिर अभयकुमार तो राजा का पुत्र ओर इस समय पतिनिधि भी था। इसलिए यह कहा जा सकता है कि राजा ही शालिभद्र के यहा चला।

भद्रा को सूचना दी गई कि अभयकुमार प्रधान उसके यहा आ रहे ह। वह सोचने लगी– शायद उन कम्बलो के सिलसिले मे ही आ रहे होगे। मेरे यहा जो कुछ है वह मै उनके सामने हाजिर कर दूगी यह सोचकर भद्रा ने अपने मुनीम आदि कर्मचारियो को सामने जाकर आदरपूर्वक अभयकुमार को ले आने के लिए भेजा। मुनीम आदि ने अभयकुमार के सामने जाकर जिस पकार की नम्रता दिखलाई उसे देखकर अभयकुमार बहुत प्रभावित हुआ। वह सोचने लगा– भद्रा ओर शालिभद्र की नम्रता एव सज्जनता की चासनी यही चखने को मिल रही हैं। जैसे डके की आवाज सुनकर फौज का हाल मालूम हो जाता है उसी प्रकार कर्मचारियो का व्यवहार देखकर उनके स्वामी के व्यवहार का पता चल जाता है।

भद्रा भीतर ही भीतर अत्यन्त प्रसन्न हुई। जिसके वेटे के दर्शन के लिए मगध सम्राट लालायित हो उसे प्रसन्नता क्यो न हो? फिर उसने सोचा– अगर मैने बेटे को राजा के घर भेज दिया ओर वहा उसे राज्यपवन लग गया तो अनर्थ हो जाएगा।

भद्रा अपने पुत्र को राजा के घर नही भेजना चाहती इसका कारण समझना चाहिए। आप सोचते होगे, शालिभद्र की सुकुमारता का विचार करके माता उसे नही भेजना चाहती। मगर वास्तव मे भद्रा की भावना दूसरी ही हे। वह सोचती है– शालिभद्र स्वर्गीय भोग–विलास भोग रहा हे। उसकी दृष्टि ऊची हे। राजदरबार मे जाने से उसे वैसा ही कष्ट होगा जेसा मनुष्यलोक मे आने पर देवो को होता है। इसके अतिरिक्त वह स्वतन्त्र विचारो का है। उनके जैसे विचार अभी हैं, उन्हे देखते हुए नही कहा जा सकता कि ससार की असारता देखकर वह सहन कर लेगा। राज दरबार मे वह जायगा तो सम्भव है कि किसी दूसरे विचार से वह प्रभावित हो जाय और फिर हाथ से निकल जाय। अतएव उसे राजा के पास भेजने की अपेक्षा राजा को ही यहा लाना उचित होगा। राजा के यहा आने पर उसकी किसी भावना को ठेस नही लगेगी और वह यह सोचकर कि राजा भी उसका सम्मान करता है ससार मे उलझा रहेगा। राजा के आने से शालिभद्र अपने पुण्य को बडा समझेगा और ससार मे उसे विराग नही होगा।

ग्रन्थकारो को कथन है कि शालिभद्र इतना अधिक सूकुमार था कि पृथ्वी पर उसका पैर ही नही टिकता था। वह सूर्य और चन्द्रमा की किरणे भी नही देखता था। लेकिन यह तो आलकारिक वर्णन हे। इस भाषा के मर्म को समझना चाहिए। अलकारो को कल्पना के द्वारा दूर करके वस्तुतत्त्व का विचार किया जाय तभी असली तत्त्व हाथ लगता है।

प्राय लोग सन्तान को गुलाम बनाने के प्रयत्न करते हैं। वे चाहते है– लडका पैसा लावे फिर चाहे जिसकी गुलामी करनी पडे तो कोई हर्ज नही है। लेकिन पहिले के लोग पैसे की अपेक्षा स्वाधीनता की भावना की अधिक कीमत समझते थे। भद्रा माता नही चाहती थी कि राजा के सामने पहुचकर शालिभद्र को किसी भी प्रकार की आत्मग्लानि अथवा हीनता का वोध हो। वह सोचती थी–शालिभद्र सिह हे। वह किसी प्रकार के पलान को सहन नही कर सकता। घोडा ओर गधा तो पलान को सहन करते हे सिह नही। इसके अतिरिक्त शालिभद्र जिस रूप मे यहा देखा जा सकता हे उस रूप मे राजदरवार मे नही क्योकि अगूठी मे नग की जेसी शोभा अगूठी मे जडे रहने पर होती हे वेसी अलग होने पर नही रहती।

यही सब विचार कर भद्रा ने आवेदन किया—शालिभद्र के बदले एक बार मै महाराज के दर्शन करना चाहती हू। कोई आपत्ति न हो तो आज्ञा दीजिए। अगर महाराजा फिर आज्ञा देगे तो शालिभद्र भी क्या दूर है?

अभयकुमार ने विचार किया— शालिभद्र का अपमान नही होना चाहिए। यह परिवार अपनी विनमता के कारण ही हमे राजा मानता है अन्यथा यह देवलोक का खाते—पीते है। इन्हे हमसे क्या सरोकार है? हमारी परवाह इन्हे क्यो होने लगी? अगर इनमे विनयशीलता न होती और अविनीतता होती तो कह सकते थे कि हमे राजा के पास जाने की आवश्यकता नही है। देव जिनका रक्षण और पालनपोषण करता है उनका कौन क्या बिगाड सकता है? मगर भद्रा बडी नम्रता के साथ आवेदन कर रही है। ऐसी स्थिति मे शालिभद्र की स्वतन्त्रता मे बाधा पहुचाना उचित नही है। शालिभद्र को ले जाने की अपेक्षा महाराज को यहा लाना ठीक है।

माता भद्रा को साथ लेकर अभयकुमार महाराज श्रेणिक के पास चले। भद्रा के साथ अनेक दासिया थी और मुनीम—गुमाश्ते आदि भी थे। भद्रा बडे ठाठ के साथ रवाना हुई। वह ऐसी जान पडती थी मानो इन्द्राणी हो। भद्रा को राजा के पास जाते देखकर नगर के लोग अनेक प्रकार के विचार वितर्क करने लगे। कोई उन्हे आदर के साथ उपहार देता था। कोई उनके दर्शन करके अपना अहोभाग्य समझता था। कोई कहता था—यही भद्रा माता अपने नगर की लाज बचाने वाली है। कोई कहता— आज राजा कम्बल चुरा तो नही लिये थे? इस पकार नगर के बाजार मे और घरो मे तरह—तरह की बाते होने लगी।

भद्रा राजा के यहा पहुची। सूचना पाकर श्रेणिक उनसे मिलने के लिये आये।

इस प्रकार के कथानको से मालूम होता हे कि प्राचीन काल मे पर्दे की कैद नही थी। पर्दे की प्रथा मुसलमान के समय मे आरम्भ हुई है। जैसे लोग शास्त्र मे ही शरण मानते हैं उसी प्रकार पर्दे मे ही लज्जा मानते हैं। मगर दोनो मान्यताए भूल से भरी है। घूघट काढ लेना असली लज्जा नहीं है। असली लज्जा है– पर–पुरुष को भ्राता, पुत्र समझना और वैसा ही उनके साथ व्यवहार करना।

भद्रा ने महाराज श्रेणिक को बहुमूल्य भेंट दी। महाराज ने अभयकुमार से पूछा– क्या शालिभद्र तुम्हारे जाने पर भी नहीं आये?

राजा के प्रश्न के उत्तर मे अभयकुमार ने भद्रा की ओर सकेत करते हुए कहा– यह शालिभद्र की माता आप से कुछ निवेदन करने आई है। इनका कहना है कि पहले यह आपसे निवेदन करले, फिर शालिभद्र क्या दूर है?

श्रेणिक आजकल के राजाओ जैसे होते तो शालिभद्र के न आने पर आग उगलने लगते अपने हुक्म का अपमान समझकर भद्रा को दुत्कार देते। मगर राजा श्रेणिक ने सोचा–यह पुण्याई और ही है जो पुत्र को न भेजकर माता स्वय आई है। फिर अभयकुमार से कहा–इनका कथन अगर तुम्हे ठीक मालूम हुआ हो तो यह मुझसे भी कह सकती है।

राजा की आज्ञा पाकर भद्रा कहने लगी– शालिभद्र का स्वभाव ऐसा है कि चन्द्रमा और सूर्य की किरणे भी वह सह नही सकता और पृथ्वी पर उसका पैर नही टिकता। उसे नही मालूम कि सूर्य किधर उगता है और किधर अस्त होता है।

यह वर्णन, जैसा कि पहले कहा जा चुका है अलकारमय वर्णन है। इसे आलकारिक रूप मे ही समझना चाहिए। इसका शाब्दिक अर्थ लगाने से सत्य का ज्ञान नही होगा। इस कथन का वास्तविक अर्थ इस प्रकार है– शालिभद्र रवि–शशि की किरणे सहन नही कर सकता इसका अर्थ यह है कि शालिभद्र ने अभी तक गर्मी और सर्दी सहन नही की है अर्थात उसके सामने कभी कठोर प्रसग उपस्थित नही हुआ है। शालिभद्र का पेर पृथ्वी पर नही टिकता इस कथन का आशय यह हे कि वह किसी के आश्रित नही हे स्वतन्त्र है और सुकुमार है। उसे सूर्य के उदय–अस्त की खबर नही हे इसका अर्थ यह है कि वह किसी प्रकार की व्यवस्था करने के प्रपच मे नही पडता।

भद्रा ने आगे कहा– मे जो निवेदन कर रही हू उसे आप सत्य । वह लक्ष्मीपति है। आप इस स्थान को समीप ही समझते हे लेकिन लिए यह हजार कोस दूर हे। अतएव उसे यहा न बुलाकर आप ही

वहा पधारने का अनुग्रह करे तो अच्छा है क्योकि जो स्थान मेरे पुत्र के लिये हजार कोस दूर–सा है वह आपके लिए सन्निकट है। आप यह सोचते होगे कि शालिभद्र आपका पजाजन है और आप राजा होकर उसके पास क्यो जाये तो दूसरी बात है। पर वह आपका ही बालक है। बालक दूर रहे तो उसके माता–पिता प्यार करने उसके पास जाते ही है। इस पर भी आप न पधारना चाहे और उसे ही बुलाना चाहे– आप उसे अपना बालक न माने तो आपकी मर्जी ! फिर जैसा आपका आदेश होगा, पालन किया जायगा।

भद्रा ने चतुराई से अपना पक्ष उपस्थित किया। राजा श्रेणिक निरभिमान व्यक्ति थे। वे उसके सामने देखने लगे।

इसके बाद भद्रा ने फिर कहा–महाराज ! आप नरेश हैं, प्रजा के पिता है। अगर आप मेरी लाज रखना चाहते है अगर आप मुझे सम्मान देना चाहते है तब तो अवश्य ही मेरी कुटिया को पावन कीजिये। सम्भव है, आपको कई प्रकार के अनुकूल–प्रतिकूल परामर्श देने वाले मिलेगे। कोई कहे कि प्रजा के घर जाने मे राजा का गौरव घटता है पर आप इन बातो पर विचार न करके अपने स्वतन्त्र विचार पर आ जाइये। अगर शालिभद्र पर आपकी थोडी–सी भी पीति हो तो अधिक विचार मत कीजिये।

जिसकी जिस पर प्रीति हो जाती है, वह उसके बल–अबल को नही देखता। माता प्रीति के वश होकर अपने बालक की अशुचि उठाती है। वह अनुभव करती है कि मै ऐसा करके बालक की रक्षा कर रही हू। अगर अपने बालक की अशुचि उठाने वाली माता से कोई दूसरा अपने बालक की अशुचि उठाने के लिए कहे और उसे मनचाहा मेहनताना देने का प्रलोभन दे तो क्या वह अशुचि उठाने को तैयार होगी? कभी नही क्योकि दूसरे के बालक के प्रति उसमे आत्मीयता नही है– प्रीति नही है। हा प्रीति होने पर वह पडोसी के बालक की अशुचि बिना मेहनताने के ही उठा सकती है। तात्पर्य यह है कि असली चीज प्रीति है।

भद्रा की भद्रतापूर्ण विनीत वाणी सुनकर राजा अपने मन्त्री से सलाह करने लगा। उसने पूछा–क्यो अभय ! तुम्हारी क्या सलाह हे?

अभयकुमार– मुझे तो जाने मे कोई हानि नही जान पडती वल्कि मेरी भी यही प्रार्थना हे कि शालिभद्र के घर अवश्य पधारिये। जब आप जाएगे तो अवश्य सोचेगे कि आप ऐसे स्थान पर नही गये जहा आपको जाना चाहिए था।

राजा– तो फिर ठीक है। आगे तुम चलो, पीछे से में भी आता हू।

अभयकुमार चलने को उद्यत हुए। साथ यह विचार भी होने लगा कि राजा के साथ और कौन–कौन जाए? बडे–वडे लोगो को राजा के साथ चलने का निमन्त्रण दिया गया। बडो के साथ छोटे आदमी नोकर–चाकर भी जाते हैं। जिन बडो को राजा का निमन्त्रण मिला था उनके नोकर अपने स्वामियो से कहने लगे– आप अपने साथ मुझे अवश्य ले चले। किसी ने कहा– हुजूर, मैं आपकी सेवा मे रहूगा तो ठीक रहेगा। इस प्रकार शालिभद्र के घर जाने के लिए लोगो मे होड–सी मच गई।

इस प्रकार अनेक बडे–बडे लोगो के साथ राजा श्रेणिक ने शालिभद्र के घर जाने के लिए प्रस्थान किया। मगध–सम्राट को शालिभद्र के घर जाते देख नगरवासियो मे एक प्रकार की हलचल–सी मच गई। विशाल जनसमूह राजा के पीछे हो गया मानो किसी उत्सव के अवसर पर राजा का जुलूस निकल रहा हो। लोग सोचने लगे– जिस शालिभद्र को देखने के लिए मगधेश स्वय जा रहे है, वह पुण्यशाली शालिभद्र केसा होगा।

वस्तु महगी तभी होती हे जव बडे लोग उसकी माग करते हैं। इसी प्रकार जिसे श्रेणिक देखना चाहते है उसे कोन देखना न चाहेगा? इसी कारण वहुत–से लोग अपनी सम्पत्ति का अभिमान त्याग कर राजा श्रेणिक के पीछे–पीछे हो लिये थे। लोगो मे उत्कठा इतनी प्रवल हो उठी थी कि कोई अगर पगडी पहिन पाया तो और कोई कपडे ही नही पहन सका। किसी ने कपडे पहिन लिये तो उसे पगडी पहिनने का समय न मिला। मतलब यह हे कि लोग राजा के साथ शालिभद्र के घर जाने के लिए इतने उत्सुक हो उठे कि उन्हे वस्त्र धारण करने का भी खयाल न रहा।

राजा चले जा रहे थे ओर दुदुभि वज रही थी। प्रश्न हो सकता ह कि दुदुभि क्यो वजती हे? इसका उत्तर समझने के लिये यह देखना चाहिय कि हाथी के गले मे घण्टा क्यो वाधा जाता हे। हाथी का पर इतना धीमा पडता हे कि पास वेठे लोगो को भी उसके निकल जान की खवर नही पडती।

अतएव हाथी के निकलने की सूचना देने के लिए उसके गले मे घटा बाध दिया जाता है। हाथी के समान बडे आदमियो की चाल भी धीमी होती है, तिस पर भी राजा की चाल का तो कहना ही क्या है! इसलिए राजा के साथ उसका राजसी ठाठ रहता है कि लोग उसे पहिचान ले।

अभयकुमार भद्रा के साथ पहले ही शालिभद्र के घर पहुच चुके थे। भद्रा ने कहा– आपकी कृपा से ही महाराज मेरे यहा पदार्पण कर रहे हैं। मगर मुझे तो यह भी नही मालूम कि महाराज का स्वागत–सत्कार किस प्रकार किया जाता है? अतएव आप ही हमारे पथपदर्शक बनिये।

अभयकुमार ने भद्रा की पशसा करते हुए कहा– जिस प्रकार सोने को रगने की आवश्यकता नही होती उसी प्रकार आपके यहा किसी तैयारी की आवश्यकता नही है। आपके यहा तो सभी प्रकार की तैयारिया पहले ही हैं।

भद्रा ने मोती–माणिक आदि रत्नो से भरे हुए थालो के लिए मुनीम आदि को अपने साथ लिया और अत्यन्त उत्साह और ठाठ के साथ राजा के सामने जाकर वह उन्हे बधा कर घर मे लाई।

शालिभद्र का घर क्या था, दिव्य और अद्वितीय महल था। उसे देखकर राजा सोचने लगा– अब तक मै सोचा करता था कि स्वर्ग है या नहीं? आज यह सन्देह तो मिट गया परन्तु यह सन्देह होने लगा है कि स्वर्ग बना है या महल?

राजा बहुत विचार करने पर भी किसी निर्णय पर न आ सका। वीर राजा [illegible] वह इस महल मे आकर भौंचका–सा रह गया और घबराने लगा, जैसे किसी बन्दर को जगल से लाकर राजसी भवन मे छोड दिया गया हो। इतने ही मे भद्रा ने आकर कहा– महाराज पधारिये।

हे ओर यही आखे नही ठहरती तो आगे क्या हाल होगा? फिर भी वह अभयकुमार के साथ आगे वढा। इस तीसरी भूमि तक तो राजा के साथ ओर भी कुछ लोग आये थे मगर इससे आगे वढने की हिम्मत किसी की न हुई।

चोथी भूमि पर पहुच कर राजा ओर अभयकुमार चित्रलिखित–से रह गये। राजा को भ्रम होने लगा–यह मनुष्यलोक ही है या स्वर्गलोक मे आ पहुचे है? यहा मनुष्यलोक सम्वन्धी कोई वस्तु ही दिखाई नही देती।

भद्रा राजा के हाव–भाव देखकर उनके मन की वात समझ रही थी। उसने सोचा महाराज यहा तक आकर ही इतने घवरा गये हें तो सातवीं मजिल तक इन्हे केसे ले जा सकूगी। ये मेरे मकान तक और उसमे भी चोथी मजिल तक आ गये यही वहुत है। अव शालिभद्र को तीन मजिल नीचे उतार कर मिलाना ही उचित होगा। इस स्थान पर दोनो की मुलाकात होने में कोई हर्ज नही हे। इसमे शालिभद्र अपना सम्मान ही समझेगा, अपमान नहीं।

भद्रा ने दोनो के लिए सिहासन डलवा दिये। राजा ओर अभयकुमार को उन पर बैठने के लिए कहा। उसने यह भी कहा– अब आपकी आज्ञा हो तो शालिभद्र को आपके पधारने की सूचना दे दी जाय। राजा सोच ही रहे थे कि अव और आगे न चलना पडे तो अच्छा हे। भद्रा ने उनके मन की वात कह दी। राजा ने सोचा–गनीमत हुई कि इन्होने स्वय ही ऐसा कह दिया। उसने भद्रा की बात स्वीकार कर ली। दोनो सिहासन पर बेठ गये ओर भद्रा ऊपर चली गई।

पिता और पुत्र दोनो चकित थे। उन्होने जो कुछ देखा था एकदम अपूर्व, असाधारण और अलोकिक था। जो दृश्य कभी कल्पना मे भी नहीं आ सकते थे, वह आखा के आगे आ रहे थे। दोनो पिता ओर पुत्र एक–दूसरे के सामने देख रहे थे। पहले तो किसी के मुख से वोल ही न निकला अन्त मे राजा कहने लगा– यहा साक्षात् स्वर्ग ही उतर आया जान पडता हे। मैंने भगवान महावीर के मुख से स्वर्ग की जैसी रचना सुनी थी हूबहू वही यहा दृष्टिगोचर हो रही हे। आश्चर्य तो यह है कि इस महल को वनाया किसने होगा? यह कब और कैसे वन गया?

राजा स्वय बहत्तर कलाओ का पण्डित है। पहले के राजा सभी कलाए सीखते थे। कोई काम ऐसा नही होता था जिसे करना वे न जानते हो। वे सभी कलाओ के मर्मज्ञ होते थे। इसलिये श्रेणिक सोचते हें यह महल वना कैसे होगा? केसे–केसे हीरे यहा जडे हुए हें? केसी अदभुत इनकी वनावट हे ओर इनमे से केसी सुगन्ध फूट रही हे। मेरी समझ मे ही नहीं आता

कि यह सब रचना हुई किस प्रकार है?

राजा कहता है– हम राजा है। करोडो मनुष्यो के स्वामी कहलाते है। सभी पर हमारी हुकूमत चलती है और सभी हमारे सहायक है। करोडो की सहायता से भण्डार भरे है और उनसे महल बने हैं। फिर भी वह महल इनके आगे झौपडी की हैसियत भी नही रखते। यह तो साक्षात् ही स्वर्ग जान पडता है।

अभयकुमार अतिशय बुद्धिशाली था। वह जैन शास्त्रो का ज्ञाता था। उसने कहा–पिताजी इन महलो से हमे कई प्रकार की शिक्षा मिलती है। यह महल ओर वैभव पुण्य की भौतिक प्रतिमा है। पुण्य दान मे रहता है आदान मे नही। जो दूसरो का सत्त्व चूस–चूस कर आप मोटा होना चाहता है, वह मोटा भले ही बन जाय पर पुण्य के लिहाज से वह क्षीण हो जाता है, पुण्य के वैभव से वह दरिद्र होता रहता है। इसके विपरीत जो आधी मे से भी आधी देता है वह ऊपर से भले ही दरिद्र दिखाई देता हो पर भीतर ही भीतर उसका पुण्य का भण्डार बढता जाता है और फिर उसी पुण्य के भण्डार मे से ऐसे महलो का निर्माण होता है और यह वैभव उसके चरणो मे लोटने लगता ह। असल पूजी पुण्य है। जहा पुण्य है वहा सहायको की आवश्यकता नही। पुण्य अकेला ही करोडो सहायको से भी पबलतर सहायक है। यह पुण्य त्याग ओर सद्भाव मे ही रहता है। भोग पुण्य के फल हैं किन्तु पुण्य को क्षीण बना देते है।

आप लोग सेठ कहलाते है तो क्या भोग भोगने के लिए ही? बढिया खाने ओर पहिनने के लिए ही? जरा विचार तो करो कि आपको सेठ कौन कहता है? जो आपसे अधिक धनवान है वे आपको सेठ कहते हैं या गरीब? अगर गरीब लोग आपको सेठ मानते है तो क्या वास्तव मे ही आप गरीबो के सेठ बने है? सिर्फ सेठानी के ही सेठ तो नही बने हुए हैं? सच्चा सेठ वह है जो विचारता है कि मै गरीबो के परिश्रम का खाता हू ओर जो गरीबो को [illegible] पहुचाता है वह सेठ ग्रामस्थविर पद का अधिकारी होता है। जो शरीर [illegible] करके अच्छा खाता–पीता हैं वह तो क्षम्य है मगर जो ऊचा [illegible] ऊचा खाता–पीता ह वह अपने लिए नरक का निर्माण

वनवाने वाला यहा तक कि उनमे से अनेको का वशज भी आज मिलना कठिन है । वे आज कहा है? जिनके वैभव-विलास लोगो के हृदय मे ईर्ष्या उत्पन्न करते थे, अब वे कहा चले गये? कुछ पता है उनका? जब आप किसी भवन की सुन्दरता को देखकर मुग्ध हो जाते हैं तब उसके निर्माण कराने वाले की स्थिति पर भी विचार कर लिया करे। यह भी देख लिया करे कि ऐसे सम्पत्तिशालियो का भी आज ठिकाना नही हे तो हमारी सम्पत्ति किस गिनती मे हे? क्या वह इस योग्य है कि उस पर गर्व किया जाय?

इधर अभयकुमार ओर राजा श्रेणिक मे वातचीत हो रही थी उधर भद्रा माता शालिभद्र के पास पहुची। भद्रा को आते देख शालिभद्र आश्चर्यपूर्वक विचार करने लगा- आज कोई विशेष वात जान पडती है जो माता स्वय आई हे। वह उठ खडा हुआ ओर हाथ जोड कर विनय प्रदर्शित करने लगा। उसे आज माताजी के व्यवहार मे कुछ चचलता दिखाई दे रही थी।

शालिभद्र के पास पहुचकर भद्रा ने कहा- बेटा ! जल्दी चलो देर का काम नही है। तुम्हारे घर महाराज श्रेणिक पधारे हैं। रमणिया ओर सेज छोडकर उनक पास चलना है।

माता की बात सुनकर शालिभद्र आश्चर्य मे पड गया। वह सोचने लगा- आज माता घबरा कर यह क्या कह रही हे? आज तक ऐसी जल्दबाजी तो इन्होने कभी नहीं की। माता आज रमणियो को ओर सेज को छोडने के लिये कहती है तो क्या मैं भोगो मे ही डूबा हू? कोई इन भोगो को छुडा भी सकता है? क्या यह भोग अनित्य है?

शालिभद्र ने कहा- माता आप जो उचित समझे करे। मैं चल कर क्या करूगा?

भद्रा- वह अपना स्वामी हे- मगध का राजा हे। वह इन्द्र की होड करने वाला नरेन्द्र है। उसी की छत्रछाया मे हम सब रहते हे। उसके कुशल मगल मे अपना कुशल-मगल है। वह तो कृपा करके तुम्हारे घर आया है और तुम्हे होश ही नहीं। तुम्हे कष्ट से बचाने के लिए मैंने कितना प्रयत्न किया कितनी दोड-धूप की ओर तुम्हारा यह हाल हे ! तुम्हे सेज पर से उठने मे ही आलस्य आ रहा हे।

शालिभद्र की निद्रा मानो उड गई। वह सोचने लगा- आज माताजी मुझे जगाने आई हैं। राजा की कुशल मे हमारी कुशल ह ता क्या मेरा यह वैभव व्यर्थ हे? यह माया इतनी कच्ची हे?

इसी बीच भद्रा ने फिर कहा- तुम लक्ष्मी के गर्व म भूलकर मेरी वात

पर ध्यान नही देते। तुम्हे क्या पता है कि जिस राजा के यहा तुम्हारे जैसे सैकडो धनिक खडे रहते है फिर भी जिनका दर्शन नही पाते, वह राजा स्वय तुम्हारे यहा आये हैं? फिर भी तुम नही उठते। यह महल और वैभव तभी तक तुम्हारा है जब तक उनकी कृपा है। उनकी वक्र दृष्टि होते ही इन महलो से बाहर निकलना पडेगा और इनका स्वामी कोई दूसरा हो जाएगा।

शालिभद्र सोचने लगा– राजा श्रेणिक ऐसा है। उसी की दया पर मेरा ऐश्वर्य टिका है? यह माया ऐसी है कि राजा की अकृपा से बदल जाएगी? सारा ससार इसी तरह ही अस्थिर है।

भद्रा ने अपना भाषण जारी रखा– बेटा, वे राजा है। प्रसन्न है तो खूब अप्रसन्न हैं तो खूब। रूठ जाए तो न मालूम क्या कर गुजरे? तुम्हे अभी राज धर्म का ज्ञान नही है। इसलिये जल्दी करो। वह कही यह न सोचने लगे कि हम इतनी दूर से आये और शालिभद्र को कुछ परवाह ही नही है। ऐसा हुआ तो गजब हो जायगा। यह आमोद–प्रमोद तो फिर भी हो जाएगे, मगर राजा को फिर प्रसन्न करना कठिन है।

भद्रा की यह बाते सुनकर शालिभद्र ऐसे जाग उठा जैसे सोता हुआ केसरी सिह जाग उठा हो। वह सोचने लगा– क्या मुझ सिह पर आज घोडे की जीन कसी जाने वाली है? लेकिन मैं यह सहन नहीं कर सकता। फिर उसकी विचारधारा का प्रवाह सहसा पलट गया। सोचने लगा– मैं अपने पिताजी की दी हुई सम्पत्ति भोगता हू, उस पर भी राजा मेरा नाथ है और मै अनाथ हू? वह चाहे तो क्षण भर मे इसे छीन सकता है। इससे तो यही प्रकट होता है कि सम्पत्ति ही अनाथ बनाने वाली है। मैंने सुकृत नही किए। पूर्वभव मे सुपात्रदान और अभयदान नही दिये। प्राणीमात्र पर समभाव धारण नही किया। इसी का यह फल है कि आज राजा मेरा नाथ बनकर आया है। अगर दूसरे को अनाथ किया और फिर अपने को नाथ माना। इसी व्यवहार का बदला राजा आज माग रहा है। अगर मैं सच्चा नाथ बना होता तो आज [illegible] बनने का अवसर ही क्यो आता? राजा मेरा नाथ बनकर क्यो मेरे सिर पर सवार होता। म कच्चे घडे जैसी सम्पत्ति का स्वामी बना हू, इसी कारण राजा मेरा नाथ बन रहा है। माता ने आज वह बात सुनाई है जो पहले कभी [illegible] थी। लेकिन माता का इसमे दोष ही क्या है?

अक्षय भण्डार के गरूर मे चूर था और अपनी बत्तीस रमणियो का नाथ मानकर फूला नही समाता था। वह अभिमान ही मुझे अनाथ बनाये था।

मित्रो ! शालिभद्र की सम्पत्ति स्वतन्त्र देवप्रदत्त है फिर भी उस पर नाथ खडे हो गये हैं तो आपको भी अपनी–अपनी स्थिति पर विचार करना चाहिए। अनित्य वस्तु पर अधिकार करके नाथ बनने वाले अनाथ ही रहते हैं।

जिस घर को आप अपना समझते हैं उसमे क्या चूहे नही रहते? फिर वह घर आपका ही है उनका नही है ऐसा क्यो? आप भी चूहे की तरह ही थोडे दिनो मे उसे छोडकर नही चल देगे? फिर किस विचार पर आप इतराते हैं? वास्तव मे ससार मे आपका क्या है? कौन–सी वस्तु सदा आपका साथ देने वाली है? किस वस्तु को पाकर आपके सकल सकट टल जाएगे? किसके सयोग से आपकी कामना पूरी हो जाने वाली है। शाश्वत कल्याण का द्वार किससे खुल जाता है? इस बात पर जरा विचार कीजिये।

शालिभद्र सोचता है– इस घर को मैं अपना घर समझता था। इस सम्पत्ति को मैं अपनी सम्पत्ति मानता था। अब मालूम हुआ है कि यह सब तभी तक मेरा है, जब तक राजा की मुझ पर कृपा है। राजा की अकृपा होते ही मेरी समस्त सम्पदा परायी हो जायेगी। ऐसी स्थिति मे मै इस सम्पत्ति का नाथ नही रहा। में तो अनाथ ही ठहरा।

मित्रो ! आपकी भी यही स्थिति है या नही? कदाचित् सम्पत्ति न छूटे तो उसका अभिमान तो छोड दो! जिस सम्पत्ति पर अभिमान करते हैं वह पल भर मे ही क्या पराई नही हो सकती? राजा चाहे तो तत्काल उसे अपने अधिकार मे ले सकता है। सैकडो ओर हजारो के नोट अगर सरकार रद्दी कर दे तो वे अच्छी रद्दी के भाव भी नही बिकेगे। आपकी स्थिति कितनी कच्ची है, इस बात पर जरा विचार किया करो। शालिभद्र की कथा से इतना सीख लोगे तो बेडा पार हो जायेगा।

शालिभद्र कहता हे– जो सम्पत्ति पिता भेजते हे उसके विषय मे माता कहती है कि राजा की कृपा से ही वह तुम्हारे पास बनी हुई हे तो हे आत्मन् ! तू इस सम्पत्ति पर अभिमान मत कर। माता कहती हे– अगर मे राजा की आज्ञा शिरोधार्य न करूगा तो राजा मेरी यह सम्पत्ति छीन लेगा। परन्तु इस सम्पत्ति की रक्षा की आशा से मे राजा को नाथ नही मान सकता। सम्पत्ति रहे या आज ही चली जाए मे एकमात्र परम पुरुप के सिवाय ओर किसी को नाथ नही मानूगा। राजा ने घोडो पर सवारी की हागी लेकिन

आज वह क्या सिह पर सवार होना चाहता है?

मित्रो ! शालिभद्र के पास देव सम्पत्ति है। आपके पास अगर देव सम्पत्ति होती और ऐसा अवसर आ जाता है तो आप देव को ही स्मरण करते। मगर शालिभद्र जानता है कि देव अगर नाथ बना सकता है तो आज राजा उसका नाथ बनने क्यो आता? उसने सोचा– मैं देव की सहायता नही लूगा, मै उन त्रिभुवननाथ की सहायता लूगा जो सहायता लेने वाले को भी त्रिभुवननाथ बना देता है। जब मै उस परमपुरुष की शरण मे चला जाऊगा तो फिर मेरा कोई नाथ नही रह जाएगा बल्कि मै स्वय उसी परमसत्ता मे मिल जाऊगा। जब मैं इस ससार के चक्र से परे हो जाऊगा तो मुझ पर राजा की आन ही क्यो रहेगी?

लोग समझते है कि शालिभद्र विषय–भोग का कीडा था। भोग के अतिरिक्त उसने कुछ समझा ही नही था। अगर ऐसा होता और शालिभद्र आत्मचिन्तन न करता होता तो यकायक उसकी आत्मा मे यह जागृति कैसे उत्पन्न हो जाती? वह अब तक समझ रहा था कि मुझे कोई दुःख नही है, मैं देवलोक से आई सम्पत्ति का भोग कर रहा हू, परन्तु आज उसे विदित हुआ कि मैने सुकृत्य नही किये है। सुकृत्य किये होते तो ऐसी स्थिति मे क्यो होता कि मुझे राजा की आन माननी पडे ! माताजी ने आज मुझे चेतावनी दी है। उन्होने समझा दिया है कि अरे शालिभद्र ! तू कब तक सोता रहेगा? जाग, उठ देरी हो रही है।

मेनचेस्टर के कपडो मे?

"मैनचेस्टर के कपडो मे।"

बिस्कुट ओर हलवाई की दूकान की मिठाई मे अधिक अनाथता हे अथवा घर की रोटी मे?

'बिस्कुट और हलवाई की चीजो मे'

आप जानते तो सभी कुछ है फिर भी अधिक अनाथ बनाने वाली चीजे नही छोड सकते। बल्कि हलवाई की दूकान की बनी चीजे मिल जाने पर बहिने तो यही समझेगी कि चलो ठीक हुआ चूल्हे–चक्की की खटपट मिटी और आरम्भ–समारम्भ से बचाव हुआ। मैं अगर अधिक आशा न करू तो क्या इतनी भी आशा नही कर सकता कि आप गुलामी के यह बन्धन तोड फेकेगे। शालिभद्र राजा की आन न मानने के लिए सारी सम्पत्ति छोड देने को तैयार है, लेकिन यह समाज आज इतना अनाथ बन रहा है कि घोर पराधीनता मे डालने वाली चीजे भी नही त्याग सकता।

मित्रो ! आत्मा पर विजय प्राप्त करो। जिन कामो से कम पाप लगेगे वे काम अनाथता पैदा करने वाले होगे और जिन कार्यो को करने से अधिक पाप का बध होता है, उनसे उतनी ही अधिक अनाथता बढेगी। अगर समस्त पापो का परित्याग कर सको तो अत्यन्त श्रेष्ठ है। ऐसा सम्भव न हो तो बडे पापो का तो त्याग करो।

शालिभद्र कहता है– यह ससार नाशवान् है। ऋद्धि परिवार ओर मनुष्य शरीर भी नश्वर हें। मैं इन अनित्य वस्तुओ के लिए नित्य की स्वतन्त्रता का घात नही करूगा। श्वास का विश्वास ही क्या? यह तो पवन है। जब तक आता है, आता है, सहसा बन्द हो जायगा तो फिर नही आयेगा ! फिर ससार पर रीझने का कारण ही क्या हे? विषयभोग विष के समान हे यह बात मै समझ गया हू। ज्ञानहीन जन भले इन्हे अमृत माने लेकिन ज्ञान प्राप्त होने पर इनमे अनुराग रखना बुद्धिमत्ता नही हे। जो अपने पाव दृढ कर लेता हे उसे इन्द्र भी नही डिगा सकता ! जब मे आत्मा से स्वतन्त्र बन जाऊगा तो राजा या कोई ओर मेरे सामने क्या चीज ठहरेगी?

माता ने मुझे राजा के भय से ऐसा भयभीत कर दिया हे जेसे बालक को हौआ का डर दिखला कर रोने से रोक दिया जाता हे। बालक होआ से तभी तक डरता हे जब तक उसे जान नही लेता। यह जान लेने पर कि होआ नाम की कोई चीज ही नही हे भय नही रहता। इसी प्रकार जा आत्मा की स्वतन्त्रता को नही पहिचानता होगा वह भले ही राजा स डरता रह जिसन

उस स्वतन्त्रता को समझ लिया है, वह क्यो डरेगा? राजा नाराज होकर करेगा क्या? यही कि इस सम्पत्ति को ले जायगा। मगर मैं तो इसे तिनके की तरह त्यागने को तैयार ही हू। जैसे भग्गू पुरोहित ने सम्पत्ति को त्याग दी थी और राजा ले गया था उसी पकार मैने भी इस सम्पत्ति को वमन कर दिया है। अब कोई भी ले जाए। मुझे सम्पत्ति के जाने की तनिक भी चिन्ता नही है।

इसके बाद शालिभद्र की विचारधारा नवीन दिशा की ओर बह चली। उसने विचार किया– माता का मुझ पर असीम उपकार है। माता ने आज तक कभी किसी काम के लिए आदेश नही दिया। उनका सिर्फ यही पहला आदेश है। अगर मै इसका पालन नही करूगा और टाल दूगा तो उनके हृदय को गहरी चोट पहुचेगी। अतएव माताजी की प्रसन्नता के लिए एक बार राजा के समक्ष उपस्थित होने मे किसी प्रकार की हानि नही है।

माता का विनय करना पुत्र का परम कर्त्तव्य है। जब तक पुत्र गृहस्थ जीवन से पृथक होकर साधु नही बना है तब तक माता उसके लिए देवता है। उसकी आज्ञा को भग करना पुत्र के लिए उचित नही है। ऐसा करने से मेरा जीवन दूषित होगा, अविनय का पाठ सिखाने वाला बन जायगा। मेरी दृष्टि से आत्मधर्म ऊचा है परन्तु माता का विनय करना भी आवश्यक है।

इस प्रकार विचार कर शालिभद्र उठा और अपनी बत्तीसो पत्नियो को साथ लेकर इन्द्राणियो सहित इन्द्र की भाति राजा के सामने जाने को तैयार हुआ।

घर से बाहर नही निकलवा सकता था। अतएव यह तय किया कि बच्चो के सामने खाने–पीने की चीजे रख कर उन्हें एक टोकरे से ढक दिया जाय। यही किया गया। जिस जगह विवाह होने वाला था उसी के पास बच्चे ढाके गए थे। यद्यपि यह सिर्फ सामयिक आवश्यकता के कारण ही किया था लेकिन पीछे से वह रिवाज बन गया। सेठ के लडको ने इसे रिवाज बना लिया और ऐसा रिवाज कि बिल्ली के बच्चो को ढाके बिना उनके घर विवाह ही नही होने लगा। जब विवाह होने को होता तो बिल्ली के बच्चो की खोज की जाती। उन्हे घर ले आया जाता दूध पिलाया जाता टोकरे से ढका जाता। तब कही विवाह हो सकता।

जिस प्रकार विवाह मे बिल्ली के बच्चो का होना आवश्यक मान लिया गया था उसी प्रकार पर्दे की प्रथा भी आवश्यक मान ली गई है। नतीजा यह हुआ कि आजकल स्त्रिया आवश्यक बात कहने के समय टच–टच करती हैं मानो ढोर हाक रही हो और गालिया गाने के समय सारी लाज शर्म को ताक मे रख देती हैं। मगर शालिभद्र के जीवनचरित से इनकी आख खुल जानी चाहिए।

शालिभद्र अपनी पत्नियो के साथ राजा से मिलने चला। राजा की दृष्टि ऊपर की ओर लग रही थी। स्त्रियो के आभूषणो की झकार उसके कानो मे पडी। अभयकुमार और राजा श्रेणिक ने उस ओर नजर फेरी और उसी समय शालिभद्र पत्नियो के साथ इस प्रकार आकर खडा हो गया जैसे बादलो को फाडकर सूर्य निकल आया हो।

शालिभद्र को देखकर राजा चकित रह गया। अभयकुमार से कहने लगा– क्या यह शालिभद्र है? इसे मनुष्य कहे या देव? जान पडता हे कोई देव आकाश से उतरा हे।

शालिभद्र का रूप सोन्दर्य देखकर राजा श्रेणिक की आखो की प्यास ही न बुझी और उसकी आखो की पुतलिया स्थिर हो गईं। इसी समय शालिभद्र ने राजा को प्रणाम किया। राजा प्रेम से विह्वल हो गया। उसने शालिभद्र को अपनी ओर खीचकर छाती से लगाया ओर फिर गोद मे विठा लिया। गोद मे बिठाकर राजा शालिभद्र के ऊपर इस प्रकार हाथ फरने लगा जेसे माता अपने नन्हे से बालक पर हाथ फेरती हे।

इधर शालिभद्र पर हाथ फिराकर राजा अपना हार्दिक प्रेम प्रकट कर रहे हैं, उधर शालिभद्र सोचते हे–राजा ने मुझे खिलोना समझ रखा हें। मुझ

देख–देखकर चकित हो रहे हैं मानो मैं गुडिया हू। यह मेरे नाथ बनना चाहते है। मगर मै स्वय अनाथ को नाथ नही बनाना चाहता। फिर हाथ फेर कर राजा मुझे घोडा क्यो बनाना चाहते हैं?

लोग घोडे पर तो हाथ फेरते हैं मगर कभी किसी को सिह पर हाथ फेरते भी देखा है?

"नही।"

सिह कभी हाथ नही फेरने देता। शालिभद्र भी सिहप्रकृति का पुरुष ह। वह सोचता है–मै परमपुरुष के सिवाय और किसी को अपना नाथ नही दना सकता। शालिभद्र के हृदय मे राजा के प्रति प्रेमभाव नही था। अतएव राजा का करस्पर्श उसे आनन्ददायक नही लगा। इसके अतिरिक्त शालिभद्र का शरीर मक्खन की भाति अत्यन्त कोमल था और राजा की हथेली कठोर थी। मक्खन जैसे आग के हल्के स्पर्श से भी पिघलने लगा, उसके समस्त वस्त्र पसीने से गीले हो गये।

भद्रा वही मौजूद थी। उसने कहा– महाराज इस जन्म मे शालिभद्र ने किसी की सेवा नही की है। ऐसी अवस्था मे यह आपकी सेवा भी कैसे कर सकता है? इसकी ओर से मै आपको किसी प्रकार सन्तुष्ट करू?

अभयकुमार ने कहा– पिताजी इस फूल को तो डाली पर ही रहने देना ठीक है। यहा यह कुम्हला जायगा।

अभयकुमार के कथन का आशय राजा समझ गया और उसने ठीक है ठीक है कहकर शालिभद्र को छोड दिया। शालिभद्र राजा की गोदी मे से उठा और सीधा अपने महल की ओर चल दिया। राजा की ओर आख उठाकर भी नही देखा। राजा उसकी ओर बराबर ताकता रहा कि वह भी एक बार इधर मुह फेरेगा। मगर वह बिना मुह सीधा किये चला गया। राजा को कुछ निराशा हुई।

18 : श्रेणिक का सत्कार

शालिभद्र के चले जाने पर भद्रा ने राजा श्रेणिक और अभयकुमार की अभ्यर्थना करते हुए कहा–'महाराज ! आज यही भोजन करने का अनुग्रह कीजिए यद्यपि यह घर आपके सत्कार करने योग्य नही है। आपके योग्य भोजन सामग्री भी यहा नही है फिर भी मेरी भक्ति रुकती नही है। मेरा दासभाव आज आपकी सेवकाई चाहता है। इस कारण मैं आपकी सेवा करना चाहती हू।

शालिभद्र इस सम्पत्ति–शक्ति का गुलाम नही था। मगर भद्रा मे वह जागृति नही आई थी। जिसे ससार मे रह कर दूसरे के आश्रय से अपना जीवन व्यतीत करना है उसे भद्रा की भाति राजा की या राज्याधिकारियो की खुशामद करनी ही पडती है। राजा को रुष्ट न करके उचित सत्कार करना गृहस्थ का व्यवहार भी है। भद्रा इस ऋद्धि को छोडना नही चाहती और ऋद्धि की रक्षा राजा के द्वारा ही हो सकती है इस कारण खुशामद करना स्वाभाविक है। लेकिन शालिभद्र इसे त्यागने को तैयार बैठा है। वह क्यो राजा की खुशामद करे?

आज बहुत से लोग ऐसे मिलेगे जो कहते हैं– हम शालिभद्र की तरह स्वतन्त्र हैं। अगर वे शालिभद्र की तरह माया के पाश से मुक्त हो जाए निस्पृह बन जाए और सम्पत्ति को अनाथ बनाने वाली समझकर त्याग करने को तेयार हो जाए तो उनका दावा कदाचित् माना जा सकता हे। मगर जिनकी रग–रग मे माया के प्रति ममता रम रही हे, जो धन के लिए छल–कपट करने से भी नही चूकते वे अगर माता–पिता आदि गुरुजनो के विनय का त्याग कर दे तो समझना चाहिये कि वे स्वतन्त्र नही किन्तु उच्छृखल बने हैं। उनमे सच्चा स्वाधीनभाव नही आया हे उद्दडता आई हे। ऐस लोगो का जीवन आग नही बढता ऊचा नही चढता। उनका पतन होता हे।

भद्रा की नम्र वाणी सुनकर राजा ने विचार किया ऐसा यह घर है फिर भी मेरी भक्ति नहीं हो सकती? वास्तव मे लक्ष्मी का निवास वही होता है जहा नम्रता होती है–

पर कर मेरु समान आप रहे रजकण जिसा।

जिनका वैभव मेरु–सा है फिर भी जो रजकण बनकर रहते हैं, वे मनुष्यलोक मे भी देव है। भद्रा के घर वैभव बिखरा पडा है फिर भी वह कितनी नम्र है? इस चरित्र मे आत्मिक शिक्षा के साथ–साथ व्यावहारिक शिक्षा भी दी गई है और अहकार को दूर करने का आदेश उपस्थित किया गया है।

राजा ने सोचा–इन्द्र के वैभव की होड करने वाला वैभव इस घर मे बिखरा पडा है फिर भी भद्रा दासभाव दिखा रही है । धन्य है इसकी सज्जनता ।

अहकार का त्याग करके नम्रता रखने वाला मनुष्य रूप मे देव है, चाहे वे कितने ही गरीब हो। जिसके सिर पर अहकार का भूत सवार रहता है वह धनवान होकर भी तुच्छ है नगण्य है। वह किसी योग्य नही।

भद्रा ने जिस नम्रता के साथ भोजन करने की प्रार्थना की थी उसे देखते हुए राजा अस्वीकार कैसे कर सकता था? उसने प्रार्थना स्वीकार करली।

राजा की स्वीकृति पाकर भद्रा ने सहस्रपाक आदि तेल मगवाकर राजा तथा अभयकुमार की मालिश करवाई। राजा उस सुगधित तेल के [illegible] से दग रह गया। सोचने लगा वाह ! यह कितना उत्तम तेल है।

मालिश हो जाने के बाद राजा श्रेणिक को स्नान–मण्डप मे रत्नो की [illegible] पर बिठलाया गया। राजा स्नान–मण्डल की शोभा देखकर और भी

की उगली मे एक अत्यन्त मूल्यवान अगूठी थी। माणिक जडी वह अगूठी सारे राज्य का सार थी। माणिक ऊची कीमत का होता ही है। शास्त्रो मे भी कहा है कि माणिक सब मणियो का सार हैं। स्नान करते समय वह अगूठी किसी तरह निकल गई और पानी के साथ किसी ओर वह गई। राजा अपने हाथ मे वह अगूठी न देखकर अत्यन्त उदास हुआ। वह सोचने लगा—मैने आज राज्य का सार खो दिया।

राजा देश का स्वामी होता है, फिर भी अगूठी गुम जाने से उसे चिन्ता हो गई। उसकी उगली अगूठी से खाली हो गई। राजा ने अपनी उगली की सगाई अगूठी से की थी और उसे ब्याह भी दिया था। लेकिन वह 'परणी' हुई अगूठी भी उसे छोडकर चली गई। वह तो खो गई ही, साथ ही राजा का अपमान भी रह गई। इसीलिये मीरा ने कहा है—

ससारी नो सुख काचो, परणीने रडावू पाछो।
तेने घैर सिद जइए रे मोहन प्यारा।।

जो परणेगी उसे ही कभी न कभी राड बनना पडेगा। मगर कुवारी रहने वाली राड क्यो बनेगी? यह बात मुदरी के लिए भी है। उगली को पहले से ही अगर नखरे मे न रखते तो आज वह खाली क्यो दीखती ओर चिन्ता किसलिए करनी पडती? हिम्मत वाला मर्द हानि होने पर प्रकट मे तो नही रोता, मगर चित्त तो उसका भी उदास हो जाता है। राजा का मुह उतर गया।

लोग गहने पहिन कर टेढे—टेढे चलते है मगर सच्चाई देखी जाय तो गहनो से कभी किसी को शान्ति नही मिलती।

राजा के मुह की उदासी ओर खाली उगली देखकर भद्रा ताड गई। उसने अपनी दासियो से कहा—स्नान करते समय महाराज की मुदरी गिर गई है जाओ ढूढ लाओ।

दासिया गई। मगर अगूठी न मालूम किस ओर वह गई थी। बहुत खोजने पर भी कही नही दिखाई दी। भद्रा ने दासियो को एक खास इशारा करते हुए फिर खोज करने की ताकीद की। अबकी बार दासिया भद्रा का अभिप्राय समझ गई और एक थाल भरकर अगूठिया ओर दूसरे आभूषण ले आई। भद्रा ने थाल श्रेणिक के सामने रख दिया ओर कहा— महाराज ये सभी आपकी ही तो हैं। आपको जो पसन्द हो रख लीजिए।

श्रेणिक के विस्मय का पार न रहा। उसने विचार किया— म एक अगूठी के लिये रोता था ओर यहा उनकी गिनती ही नही है। मरी कीमती अगूठी इन अगूठियो के सामने कुछ भी नही हे? ओर यहा वेसी अगूठी की

कोई परवाह ही नही है । सचमुच आज मुझे सच्चे बाण लगे है। आज मै ससार की सच्ची स्थिति समझ पाया हू। वह अगूठी उगली से क्या गिरी मुझे वैराग्य दे गई?

भद्रा ने राजा की उगली मे अगूठी पहिना दी ओर गले मे हार डाल दिया। इसके अनन्तर कचन के पाट बिछाकर सामने रत्नो की चौकियो पर रत्न-जटित थाल रख दिये गये। राजा वह सब देखकर दग था। मन ही मन वह सोचता था- मेरी अगूठी की कई गुनी कीमत के तो यहा थाल ही मौजूद है । अब कौन सेवक है और कौन स्वामी? यह दिव्य सम्पत्ति इनके यहा है और राजा मै कहलाता हू और ये दास कहलाते हैं।

सच पूछो तो भद्रा भी दास है और राजा भी दास है। नाथ तो शालिभद्र बना है। अलबत्ता भद्रा का विनय और राजा का तत्त्वचितन गजब का है । राजा की नीयत खराब होती तो झगडा पैदा कर सकता था कि तुम्हारे पास यह सम्पत्ति आई कहा से? लेकिन शालिभद्र भद्रा और राजा- तीनो धर्मप्रिय है। शालिभद्र की सम्पत्ति देखकर भी राजा के हृदय मे डाह नही हुई। उसे पुण्य का वह फल देखकर आन्तरिक हर्ष हो रहा है।

मित्रो । आप लोगो को दु ख क्यो है? अगर खाने पीने का दु ख हो तब तो सिर्फ आध सेर आटे की ही बात है और उसकी पूर्ति होना कठिन नही है। अगर असली दु ख यह नही है। असली दु ख ईर्ष्या का है। उसके पास अमुक वस्तु है और मेरे पास नही है इस भावना की पूर्ति के लिए जितना भी हो थोडा है। वास्तव मे परायी वस्तु देखकर रोना पुण्य-पाप को न जानने का ही फल है।

राजा इस प्रकार कह रहा था उसी समय भद्रा अपनी देखरेख मे तैयार हुई रसोई लेकर आ पहुची। रसोई देखकर राजा दग रह गया। उसने सोचा– हम तो अभी तक इतना भी नही जानते कि भोजन क्या होता हे । इसे कहते हे भोजन ।

भद्रा ने राजा को मेवा ओर मिष्टान्न परोसा।

प्रश्न होता है– मेवा बडा या मिष्टान्न?

फिर आप बादामो को बिगाड कर बरफी क्यो बनाते हैं? वास्तव मे आप यह जानते ही नही कि मेवा क्या हे और मिष्टान्न क्या है।

वस्तु का मिठास उसकी स्वाभाविकता मे है। मेवे मे जो मीठापन हे वह उसी मे है। कई लोग दूध मे शक्कर डाल कर उसे मीठा करते हैं यह अज्ञान है कुरुचि हैं। वस्तु को किस प्रकार मीठा बनाना चाहिए यह बात लोग समझते नही है, फिर भी उसे मीठा बनाने का प्रयत्न करते हैं। अच्छी गाय के दूध मे जो स्वाभाविक मिठास होगी वह मिठास क्या शक्कर डालने से आ सकती है? नही। बहुतेरे लोग आम के रस मे शक्कर डालकर उसे मीठा बनाते हैं मगर जो आम–रस खट्टा है उसे शक्कर डालकर मीठा वनाना तो विकृति पैदा करना है। लोग अपनी विकृत रुचि के कारण वस्तुओ को विकृत कर डालते है।

वस्तु की परीक्षा पहले आखे करती हैं। एक कटोरा दूध का ओर एक रक्त का भरा हुआ हो तो दोनो मे से कौन–सा कटोरा आखो को प्रिय लगेगा? निस्सदेह दूध का कटोरा प्रिय लगेगा ओर रक्त देखकर घृणा होगी।

आखो के बाद नाक की बारी आती हे। नाक सूघ कर बतलाती हे कि वस्तु केसी हे? प्याज को सूघ कर ही नाक बतला देगी कि तामसिक वस्तु हे। फिर भी लोग उसे खा जाते हें। सूखी मछली बडी बदबू देती हे फिर भी खाने वाले उसे भी नही छोडते। यह सब चीजे आपके लिए हानिकारक ह। में आपसे ऐसी चीज त्यागने के लिए नही कहता जिससे आपका निर्वाह ही न हो परन्तु जो वस्तु शरीर को ओर वुद्धि को हानि पहुचाती हे उसका त्याग अवश्य कर देना चाहिये।

आख ओर नाक के बाद जीभ परीक्षा करती हे। मिर्च को अगर आप हाथ पर मले तो हाथ जलने लगेगा। जीभ पर रखते हें तो जीभ जलने लगती है। प्रतिदिन मिर्च का व्यवहार करन से कई लोगो का उसका तीखापन खटकता नही हे फिर भी तीखापन तो हे ही। कुछ दिना तक आप मिर्च खाना छोड दीजिए ओर फिर खाइय तो आपका पता लगेगा कि उसम केसा

तीखापन है। फिर भी भोजन–शूर लोग यह सब नही देखते। उनका भोजन जीभ के लिए ही होता है। शरीर चाहे बिगडे चाहे सुधरे इसकी उन्हे परवाह नही।

जीभ भोजन के विषय मे पूरी जानकार है। सादे भोजन के सहारे सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया जा सकता है बादाम की कतली पर दो महिने निकालना भी कठिन है। कहावत है–'जो रुचे सो पचे।' लेकिन अधिकाश लोग जबर्दस्ती पेट मे भोजन ठूसने के उद्देश्य से दस तरह के शाक और चटनी–आचार आदि का आसरा लेते है। इतना करके भी क्या आप अकेले जगल को पार कर सकते है? नही सिर्फ खाने मे ही शूर है। शूर तो वे हैं जो कडाके की भूख लगने पर चने चबा कर मस्त रहते है और जिन्हे आपके समान चोचले नही आते।

श्रेणिक सोचते है– भोजन की क्रिया आज मेरी समझ मे आई। भद्रा भोजन परोस कर ऐसी मीठी बोली कि उसका चित्त पसन्न हो गया। वह कहने लगा वास्तव मे इस घर के लोग बडे समझदार हैं। सब देव के समान मालूम होते है। दरअसल देव के समान वही कहलाते हैं जिनकी खाने–पीने आदि की क्रिया उच्च श्रेणी की है।

भोजन के पश्चात तरह–तरह की बहुमूल्य वस्तुए उपहार मे देकर भद्रा ने राजा श्रेणिक को विदा किया। भद्रा के घर आकर यद्यपि श्रेणिक ने बहुमूल्य वस्तुए पाई लेकिन उनसे भी अधिक मूल्यवान जो वस्तु उसे मिली वह थी हृदय की जागृति। पुण्य का पभाव पत्यक्ष देखकर मगध सम्राट के हृदय मे एक अपूर्व जागृति उत्पन्न हुई। नवीन भावना लेकर वह भद्रा के घर से रवाना हुआ

19 : शालिभद्र की विरक्ति

राजा श्रेणिक के पास से हटकर शालिभद्र अपनी पत्नियो के साथ ऊपर चला गया। वह अपने स्थान पर इस प्रकार बैठा जैसे कोई योगी परमात्मा के साथ आत्मा की भेट कर रहा हो। उसकी पत्निया उसका चेहरा देखकर चिंतित हो गई, आपस मे कहने लगी– आज स्वामी मे बडा परिवर्त्तन दिखाई दे रहा है। आज इनका रूप भी कुछ निराला है।

आज प्राय सर्वत्र गुलामी की उपासना हो रही है। लोगो ने परतन्त्रता को ही जीवन समझ रखा है। ऐसे लोगो मे शालिभद्र का चरित खेद पैदा कर सकता है। अशक्त आदमी सूर्य के ताप को नहीं सह सकता। वह सूर्य को दोष देता है और चाहता है कि सूरज अस्त हो जाय तो अच्छा। इसी प्रकार आज लोगो की आत्मा कायरता के बन्धनो मे ऐसी बुरी तरह जकड गई है कि वे इस चरित को सहन नही कर सकते हैं। मगर कायरो के चाहने से सूर्य अस्त नही हो जाता। वह अपने स्वभाव के अनुसार चमकता ही रहता है, इसी प्रकार यह चरित भी सूर्य की भाति चमकता ही रहेगा।

शालिभद्र अपने मन मे विचार करने लगा– ताजन घोडा कोडा केसे सह सकता है? वीर क्षत्रिय मृत्यु का आलिगन करना पसन्द करता हे मगर किसी का तू– तडाका सहन नही करता तो क्या मे राजा की गुलामी सहन करूगा? स्वतन्त्रता की सादगी भली परतन्त्रता की रग–रेलिया भली नही हैं। मैं राजा की दासता किसी भी अवस्था मे सहन नही कर सकता।

रावण ने सीता से कहा था– ये उत्तम वस्त्र ओर आभूषण जो मदोदरी लेकर आई है, धारण करो और आनन्द मनाओ। छाल से यह सुकुमार शरीर ढक कर राम के साथ जगल–जगल भटकते फिरने मे क्या रखा हे? मेरे साथ रह कर जीवन सफल करो।

सीता राम के अधीन तो थी मगर आत्मधर्म की रक्षा करते हुए स्वेच्छा से किसी की अनिवार्यता अधीनता स्वीकार करना बुरा नही हे। रावण

तो सीता का धर्म ही छुडाना चाहता था। तब सीता को क्या करना चाहिय था? गरीबी मे रहना चाहिए था या अमीरी मे?

'गरीबी मे।

और आपको? आपको भोजन और वस्त्रो की चिन्ता से छुटकारा नही है। आप सोचते है–विलायत से कपडे न आएगे तो क्या करेगे? आपमे आज शक्ति नही रही है। यही कारण है कि आप विलायती वस्त्र नही त्याग सकते। आपको धर्म का विचार नही अधर्म से बचने की प्रबल आकाक्षा भी नही। शक्कर मे गाय की हड्डिया ओर केशर मे गाय की आते भले हो, लोगो को हर्ज नही मालूम होता।

सीता मे उदात्त धर्मभावना थी। उसने रावण के दिये वस्त्रो और आभूषणो को धर्म की रक्षा के निमित्त घृणा के साथ ठुकरा दिया।

उधर राजा श्रेणिक मे भी आज नवीन चेतना और नयी स्फूर्ति आई है। उसने अभयकुमार से कहा– अभय आज अन्त करण मे अपूर्व भावना का उदय हो रहा है। यह सुन कर अभयकुमार ने कहा–पिताजी शालिभद्र के घर का अन्न निर्दोष है। वह किसी को सताकर किसी को लूटकर या धोखा देकर नही कमाया गया है। उसी अन्न के प्रभाव से अन्त करण मे नवीन जागृति मालूम होती है।

इधर शालिभद्र सोचता है– घर की पतली छाछ जेसा आनन्द देती [illegible] आनन्द पराये घर का दही भी नही दे सकता। देवलोक से आने वाले [illegible] और आभूषण पराये घर के है ये मेरे काम के नही। मैं सयम धारण [illegible] पराधीनता स्वीकार नही करूगा।

आत्मकल्याण का जो अवसर आपको मिला है उसे खो देना उचित नही है। मानव–जीवन ही आत्मा के श्रेयस का सर्वोत्तम साधन हे। अतएव [illegible] को यथाशक्ति आत्मोन्नति के कार्य मे लग जाना चाहिए ओर [illegible] जीवन व्यतीत करने की शक्ति न हो तो भी कम से कम उसे [illegible] तो रखनी ही चाहिए। रामचन्द्रजी कहते हैं–

अपूर्व अवसर एहवो क्यारे आवशे
क्यारे थईशु बाह्याभ्यन्तर निर्ग्रन्थ तो।
सर्व सबधनु बधन तीक्षण छेदिने
विचरशु क्यारे महतपुरुषना पथ जो। अपूर्व०।

एक भावना यह भी हे कि कब में वाहर से धन–धान्य आदि को ओर भीतर से काम क्रोध आदि को त्याग करके महापुरुष के पथ पर विचरण करता हुआ आत्मस्मरण करूगा?

शालिभद्र के अन्त करण मे आज यही भावना जागृत हुई है। शालिभद्र के लिए देवलोक से सम्पत्ति आती थी, फिर यह विचार करता हे कि सासारिक भोगोपभोगो की सामग्री मुझे नाथ नही बनाती है बल्कि अनाथ बनाती है। इस सम्पत्ति की अपेक्षा, स्वतन्त्रता देने वाली गरीबी ही मेरे लिए भली है।

मित्रो ! आपको त्याग की मेरी ये बाते पसन्द न होगी फिर भी मैं आपको सुनाने जा रहा हू। में मानता हू कि इस पथ का अनुसरण किये बिना आपका वास्तविक कल्याण नही हो सकता। कोई पराधीन होकर सुखी नही बन सकता।

पराधीन सपनेहु सुख नाही।

पराधीनता मे सुख मानना आत्मा की गिरी हुई दशा की सूचना है। अगर आपने इस सत्य को समझ लिया हो तो आप यह बारीक और मुलायम वस्त्र, जो आत्मा को गिराने वाले हैं कभी धारण न करे।

शालिभद्र ने स्वाधीनता का मार्ग समझा था। इसी कारण वह कहता है– मैं अपने ऊपर किसी दूसरे को नाथ नहीं रख सकता। मैं दूसरे की आज्ञा अपने पर नही चलने दूगा। अष्टापद का छोटा बालक भी मेघ के गरजने पर अभिमान करके कहता है कि मेरे सामने कौन गरजता है? वह अपने पराक्रम से पर्वत मे सिर लगाकर कहता है– मैं इतना पराक्रमी हू, फिर भी मेरे सामने गर्जना करने वाला यह कौन है? जब एक जानवर भी दूसरे की गर्जना नही सह सकता तो मैं मनुष्य होकर अपने ऊपर नाथ का होना कैसे स्वीकार करू? मैं अनाथ रहू और राजा मेरा नाथ हो, यह न सह सकना मेरी आत्मा की स्वाभाविकता है।

शालिभद्र अपने ऊपर नाथ न होने देना स्वाभाविकता बतलाता हे तो क्या यह अष्टाह के बालक की तरह पर्वत से सर टकराएगा? अगर शालिभद्र श्रेणिक राजा को राज्य से च्युत करके आप राजा बनना चाहता तब तो यह कहना ठीक भी होता मगर उसने अपने लिए जो रास्ता चुना है वह सिर टकराए विना ही स्वय नाथ बनने का रास्ता है।

शालिभद्र सोचता हे– सयम ग्रहण करने से दो लाभ हें। प्रथम तो परलोक के लिए अविचल राज्य स्थापित हो जाता हे दूसरे इस भव मे काई नाथ नही रहता वरन स्वतन्त्रता मिलती हे। यह एक पथ दो काज हे।

आज लोग समझते हैं कि देव और गुरु तो परलोक के लिए है और भैरो-भवानी इस लोक के लिए हैं। लेकिन भगवान मे क्या भैरो जितनी भी करामात नही है? अगर है तो इस लोक के भैरोजी को नाथ बनाने की क्यो आवश्यकता पडती है।

शालिभद्र जब राजा के पास से अपने स्थान पर पहुचा तो उसके हृदय मे इसी पकार मथन हो रहा था। जब हृदय-मथन गहराई तक पहुचता ह तब चेहरे पर उसकी छाप पडे बिना नही रहती और दूसरी चेष्टाए भी बदल जाती हैं। शालिभद्र अपनी जगह आकर विचार मे मग्न हो गया। उसके चेहरे पर गम्भीरता छा गई। वह सोच रहा था– सयम के सिवाय दूसरा कोई नाथ बनाने वाला नहीं है। राजा के आने से आज मुझे ससार की ठीक-ठीक स्थिति का भान हो गया। अब तक इस सम्पत्ति के कारण मैं अपने को नाथ समझता था आज मालूम हुआ कि यही सम्पत्ति तो अनाथ बनाने वाली है।

ध्यानस्थ शालिभद्र को मूर्ति की तरह अचल बैठा देखकर बत्तीसो स्त्रिया आपस मे कहने लगी-आज क्या कारण है कि पतिदेव न हसते है, न बोलते ह । नीचे से ऊपर आते ही मन मे न जाने क्या परिवर्तन हो गया है।

दूसरी ने कहा– आज स्वामी की गम्भीर मुखमुद्रा के सामने देखने की भी हिम्मत नही होती। आज उनकी आखो से हमारे प्रति स्नेह नही टपकता। आखो मे एक प्रकार का रूखापन आ गया है। कारण समझ मे नही आता ।

तीसरी बोली– आज तक हम मे से कोई भी जब स्वामी के सामने जाती तो स्वामी सत्कार करके बात करते थे बिठलाते थे और प्रेम के साथ दिया करते थे। इस मर्यादा को उन्होने कभी भग नही किया। लेकिन आज बोलते भी नही है।

पाचवी ने कहा– वास्तव मे ही आज पति मे अद्भुत परिवर्त्तन दिखाई दे रहा है। यह मत समझना कि रग दिखाने लिए ऐसा कर रहे हैं। आज कोई न कोई गम्भीर वात अवश्य हे। देखो न, उनकी चित्तवृत्ति कितनी स्थिर मालूम होती है।

मन की एकाग्रता ही योग की सिद्धि है। चित्तवृत्ति को रोकना ही योग कहलाता है। मन की एकाग्रता प्राणायाम आदि की साधना से होती है। मगर जिन महापुरुषो ने पहले सुपात्रदान आदि किसी ऊचे कर्त्तव्य का पालन किया है, वे किसी निमित्त को देखने मात्र से ही यह सिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। उनका चित्त अनायास ही इह लोक की बातो से निकल कर परलोक की बातो मे चला जाता है।

छठी स्त्री ने कहा– सखियो, इन सुन्दर सुकुमार, रसिक और आखो के इशारो मे समझने वाले पतिदेव की हममे से किसी ने आसातना तो नही की है?

सातवी– ऐसा होता तो हमे देखकर कम से कम मुह तो बिगाडते। चेहरे पर क्रोध तो दिखाई देता? पर न मुह बिगडा दिखता है न क्रोध ही दिखाई देता है। हमारे प्रयत्न करने पर भी उनके चेहरे पर कोई बात नही मालूम होती।

इधर शालिभद्र बैठा हुआ चिन्तन कर रहा है। वह सोच रहा है जिस वस्तु से आत्मा अनाथ बनती है उसे अपनी न समझना ही श्रेयस्कर है।

कहावत है– जो अपना–पराया न समझे वह मनुष्य नही। ज्ञानी पुरूष इस कहावत को दूर तक ले जाते हैं। शालिभद्र ने भी अपने–पराये की समस्या को अपने विचार का केन्द्र बनाया।

उधर आठवी स्त्री कहने लगी– पति का ऐसा रूठना तो कभी नही देखा। आज हमारा भाग्य है कि उन्होने अपना तिरस्कार कर दिया। न मालूम हमसे क्या चूक हो गई हे अपने मे उन्हे कोन–सा दुर्गुण दिखाई दिया हे? ऐसा क्या अपराध बन गया हे कि प्राणनाथ आज अपनी तरफ आख उठाकर भी नही देखते? अपराध होता भी तो एक का होता, दो का होता। सवका तो ो नही सकता। और बिना ही किसी अपराध के ऐसा रूखा मन धारण करना कहा तक उचित है?

नवी बोली– क्रोध का तो लेश भी उनके चेहरे पर नही जान पडता। स्वामी की मुखमुद्रा तो योगियो की तरह गम्भीर हे।

दसवी– भले ही क्रोध न हो बहिन अगर वे सहज रीति से अपनी ओर न देखे, न बोले तो क्रोध न होने पर भी अपना जीवन तो निस्सार ही हो जायगा।

पतिव्रता की जैसी भावना पति के पति होती है वैसी परपुरुष की ओर कभी नही होती। सीता को रावण ने कितने ही प्रलोभन दिये, मगर वह अपने निश्चय पर अचल रही तिल भर भी अपने सकल्प से नही डिग सकी।

सीता राम मे ही तल्लीन थी। उसे पर– पुरुष की खबर ही नही थी इसी पकार शालिभद्र भी अपने सयम के विचार मे निमग्न है। कहा भी है–

ज्यो पनिहारी कुज न विसरे, नटवो वृत्त निधान।
पलक न विसरे हो पदमणी पिउ भणी, चकवी विसरे न भान।।

यह भावना योगियो की है। शालिभद्र की स्त्रिया केवल 'पिउ तक ही पहुची हैं शालिभद्र ऊचा पहुच गया है। उसका सन्देश है– जैसा तुम मुझे पेम करती हो वैसा ही मैं भी अपने पति से प्रेम करता हू।

महल मे बैठी हुई शालिभद्र की सभी स्त्रियो की दृष्टि शालिभद्र पर है और शालिभद्र की दृष्टि परमात्मा पर है उसकी स्त्रिया उसे हाव–भाव दिखलाकर पसन्न करना चाहती है। यह देखकर शालिभद्र सोचता है– यद्यपि म इनका नाथ नही हू, फिर भी ये मुझे नाथ मानकर कल्पित नाथ से इतना पेम करती है तो मुझे अकृत्रिम नाथ मे कैसा प्रेम होना चाहिये?

देखा जाय तो एक बात मे शालिभद्र की उत्कृष्टता है और दूसरी मे उसकी पत्नियो की। पति से प्रेम वही करेगी जो सती होगी। असती पति से पेम नही करती। जैसे सीता राम मे मग्न थी उसी प्रकार ये बत्तीस स्त्रिया शालिभद्र मे मग्न है। इन सबका जीवन एकमात्र शालिभद्र ही है। इसी कारण शालिभद्र के न बोलने पर भी वे हाव–भाव दिखला रही हैं।

से पूछना चाहिए। अगर यो पूछने पर न वोले तो हाथ लगा कर उनका ध्यान भग करना और पूछना चाहिये कि हमारी किस चूक के कारण आप इस तरह उदास बैठे हैं? कहना चाहिये कि अगर हमारी कोई भूल हुई है ओर उसी से आपको कष्ट पहुचा है तो हम आग मे जलकर पानी मे डूब कर या अपनी जीभ खीच कर मरने को तैयार हे। अगर हमारी कोई भूल नही है तो आपको इस प्रकार निठुर नही बनना चाहिये। वास्तव मे पति का रूठना हमारे लिए ऐसा है, जैसे मछली के लिए पानी का सूख जाना या भ्रमर के लिए केतकी का सूख जाना।

पतिव्रता स्त्री की भावना पति के प्रति कैसी होनी चाहिये यह यहा बतलाया गया है। पतिव्रता के इस उदाहरण को ज्ञानीजन ऊपर तक ले जाते हैं और यही बात परमात्मा की भक्ति के लिये मानते हैं। पत्नी का पति के प्रति जो गहरा अनुराग होता है उसी अनुराग को अगर आगे बढाकर परमात्मा के साथ जोड दिया जाय तो वह वीतराग के रूप मे परिणत हो जाता है और आत्मा को तार देता है।

शालिभद्र की पत्निया उससे कहने लगी– प्राणनाथ। प्रियतम। हमारी ओर आख उठाकर देखिए तो सही। आप गुणवान विवेकवान हैं। अगर हमारी कोई चूक हुई हो और यह क्षमा करने योग्य न हो तो आपको हमारी अवज्ञा करने का अधिकार है। मगर बहुत विचार करने पर भी हमे अपना अपराध दिखाई नही देता। फिर आप महापुरुष होकर इस तरह क्यो रूठे हें? आपने हमारा हाथ पकडा है। हम तो आपसे रूठती नही उल्टे आप हमसे रूठ रहे हैं।

मित्रो। हथलेवा क्या चीज है? भले आदमी जीभ से कही बात भी नही बदलते तो जिन्होने पाणिग्रहण किया हे वे किस प्रकार बदल सकते हैं?

बाह बदल वाटी बदल, वचन बदल बेसूर।
यारी कर ख्वारी करे तिनके मुह मे धूर।।

शालिभद्र की पत्निया कहती हे– अकारण ही हम अवलाओ की अवज्ञा करना क्या आपके लिए उचित हे? हम तो चिऊटी की तरह हे फिर हमारे ऊपर इतना क्रोध क्यो? अगर कोई भूल हो गई हे तो उसे कृपा करके प्रकट तो कर दीजिये? यह मदिर–महल शय्या ओर आप हम सव वे ही हे जो पहले थे। लेकिन आज आप ओर हम दो दीखते ह। इसका कारण क्या है? आज आपके नेत्रो मे सदा जैसा प्रेम दिखाई नही देता। इसलिये हमे सर्वत्र सूनापन नजर आता है।

शालिभद्र की पत्निया कह रही है कि प्राणनाथ की कृपादृष्टि के बिना हमे सर्व सूनापन दिखाई देता है।

इसका कुछ मर्म समझे? आपका भी कोई पाणनाथ है या नही?

धर्म जिनेश्वर ! मुझ हिवडे वसो,
प्यारा प्राण समान
पलक न विसरे हो पद्मणी पिउ भणी,
चकवी सिरे न भान। धर्म जिनेश्वर०।

क्या आप परमात्मा को ऐसा भी नही समझते, जैसा शालिभद्र की पत्निया शालिभद्र को समझ रही है? यदि इससे अधिक समझते है तो क्या परमात्मा की कृपा बिना आपको ससार सूना दीखता है?

व्रत नियमो का यथावत पालन होता रहे यह परमात्मा की कृपा है। जहा परमात्मा की यह कृपा न हो वहा मिलने वाले राज्य को भी सम्यग्दृष्टि पुरुष त्याग देने मे सकोच नही करेगा। ऐसा हो तो समझना चाहिये कि आपमे परमात्मा के प्रति पतिव्रता की–सी भक्ति है, अन्यथा आप भी गहनो के लिये पति का आदर करने वाली स्त्रियो के समान समझे जाएगे।

सुदर्शन सेठ को नियम भग करने से राज्य मिलता था और नियम न भग करने पर सूली पर चढना पडता था। एक ओर सासारिक सुख और राज्य था तथा दूसरी ओर सूली थी। दोनो मे से एक चीज सुदर्शन को पसन्द करनी थी। सुदर्शन सेठ ने राज्य पसन्द नही किया– सूली पसन्द की, पर अपना व्रत नही तोडा। व्रत पर दृढ रहने से अन्त मे सूली भी सिहासन बन गई। साराश यह है कि ईश्वर की कृपा प्राप्त करने के लिये अगर विश्व की समस्त वस्तुओ को तुच्छ न समझा तो समझना चाहिये कि अभी हृदय मे परमात्मा की भक्ति नही है।

शालिभद्र की पत्निया बोली– अगर आप बिना अपराध ही हमारे पति निष्ठुर बने रहेगे तो सच समझिये कि हम उसी प्रकार प्राण त्याग देगी जैसे पानी से निकली हुई मछली प्राण त्याग देती है।

नही है? ये जिस तरह मुझे चाहती है उसी प्रकार तू परमात्मा को चाहता हे या नही? इतना अनुनय–विनय करने पर भी में इनका दु ख दूर नही कर सकता। यही तो मेरी अनाथता हे। मुझे यह अनाथता हटाकर नाथ वनना हे। इस प्रकार स्त्रियो की बाते शालिभद्र के विचार–रूपी अग्नि मे घी आहुति का काम कर रही हैं।

इधर स्त्रिया कहती हैं–'अगर आप हमसे हसी करते हो तो वस कीजिए। यह समय हसी का नही हे। पतली छाछ मे अधिक पानी नही समा सकता। अधिक पानी डालने से वह वेस्वाद हो जाती हे। हम यह सताप सहती–सहती पतली छाछ के समान तो हो गई। अब हममे ओर ज्यादा दु ख सहने की शक्ति नहीं रही है। बस हमे जो कुछ कहना था कह दिया हे। अव कुछ कहना शेष नही रहा। अब कृपा करके पतली छाछ मे पानी मत डालिए।

यह सुनकर शालिभद्र विचारने लगा– 'वास्तव मे पतली छाछ मे पानी का निभाव नहीं हो सकता। अधिक पानी डालना छाछ खराव करना है। राजा श्रेणिक के आने से और उनके सम्बन्ध की बाते सुनकर मे पतली छाछ सा तो हो ही गया था अब इन स्त्रियो की बातो के पानी के लिए गुजाइश नही रही।

उधर स्त्रिया कहती हे–नाथ । जिसने अपराध किया हो उसे दण्ड दीजिये परन्तु हम अबलाओ के दिल पर क्यो घाव करते हैं? सुगुण । आज तक हम आपके साथ आनन्दपूर्वक विलास करती रही मगर यकायक क्या हो गया? अपका वह बोलना देखना ओर विलास करना कहा चला गया? आपको ऐसा ही करना था तो पहले प्रीति जोडी ही क्यो थी? आपने हमारे साथ विधिपूर्वक लग्न किया हे। क्या लग्न विधि की मर्यादा का आज लोप कर देगे? हमारी कोई चूक हुई हो तो भी आपको उदारता के वश होकर हमारा निर्वाह करना उचित था। मगर बिना ही किसी अपराध के ऐसा व्यवहार करना कहा तक उचित हे?

शालिभद्र सोचता है– अब तक मे जानता था कि ससार का सुख सच्चा ओर स्थाई हे परन्तु यह तो झूठा ओर अस्थाई निकला। इसलिये प्रेम को ईश्वर तक ले जाकर समाप्त कर देने मे ही जीवन की सार्थकता हे। इसी मे मेरा कल्याण हे।

शालिभद्र की स्त्रियो का कथन चालू ही था– अगर हमसे काई भूल होती तो भी उसे सहन कर लेना आपका धर्म था लेकिन हम यह भी नही कहती। हमारा कथन तो यह हे कि हमारी भूल वतला दे ता हम उसक लिए

यथोचित पायश्चित्त कर ले। आपका ऐसा व्यापार भी नही है जिसमे घाटा लग गया हो और न घर मे ही कोई काम बिगडा है। स्वर्ग की पेटिया भी पतिदिन आ रही हैं घर का सारा काम–काज माताजी ही करती हैं वह भी आपको नही करना पडता। आपके पास अधिक लोग आते–जाते भी नही हैं हमी आती हैं ऐसी अवस्था मे सिवाय इसके कि हमसे ही कोई अपराध हो गया हो चिन्ता का दूसरा क्या कारण हो सकता है?

शालिनद्र सोचता है– मेरा काम कैसा–क्या बिगडा है इस बात की खबर ही इन्हे नही है। लेकिन मेरा जैसा काम बिगडा है वैसा शायद ही किसी का बिगडा होगा। मेरी सब आवश्यकताए देवलोक से पूरी होती है फिर भी मेरे सिर पर नाथ क्यों? ये कहती हैं हमारा क्या अपराध है? लेकिन वास्तव मे अपराध इनका भी है मैं इनका नाथ न होता तो मेरा नाथ कोई क्यों बनता? मैं चाहता हू इनका नाथ बन कर मैं अनाथ न बनू और न इन्हें भी अनाथ रखू।

शालिनद्र की स्त्रिया अपना ही दोष देख रही हैं और उसके लिए पायश्चित्त करने को तैयार हैं। आजकल की स्त्रिया भी क्या ऐसा ही करती है? वास्तव मे पतिव्रता स्त्री और भक्तजन अपना ही दोष देखते हैं, दूसरो का नही। अन्यथा कहावत है–

अमल पानी मे कंतजी यो कहे।
राडली राबड क्यो कर्यो खारो।।
राडला कतजी पीस लो पोयलो।
आप ही हाथ सुधार लो सारो ।।
धिक्क तू पापिन शखिनी जन्मनी।
धिक्क तेरो बाप पापी हत्यारो।।
ऊ खेंचे चोटलो वा खेचे मूछडी।
ऐसा–ऐसा स्वाग को धिक्क जमारो।।

शालिभद्र की स्त्रिया ज्ञानशून्य नही थी। अगर अशिक्षित होती तो इतना अनुनय–विनय न करती। वे स्वय रूठकर बेठ जाती। पर उन्हे शिकायत यह हे कि शालिभद्र ने उनका कोई अपराध नही बताया और उनकी ओर से अचानक ही मन खीच लिया है। उन्हे यही व्यथा हे। इसी व्यथा के कारण वे व्याकुल हैं। वे कहती हैं– अगर हम सबका या हममे से किसी का अपराध है तो हमारा मस्तक चाहे काट ले हम यह सहन कर लेगी मगर अपराध बतलाये बिना रूठना हमे सह्य नही है। वास्तव मे भक्त और पतिव्रता की बात सरीखी होती है। ऐसे–ऐसे भक्त हुए हैं जिन्होने परमात्मा के लिए अपने प्राणो का भी उत्सर्ग कर दिया है। वे कहते थे– परमात्मा मिले अर्थात ध्यान मे आवे, यदि ऐसा नही होता– परमात्मा का ध्यान नही बनता तो इस जीवन की आवश्यकता ही नही हे। शालिभद्र की स्त्रिया भी ऐसा ही कह रही है।

पति के असन्तुष्ट हो जाने पर पतिव्रता के लिए यही अन्तिम मार्ग रह जाता है। ये स्त्रिया अपनी चूक के लिए सिर काटने को तैयार हैं तो मैं अपने पति (परमात्मा) को प्रसन्न करने के लिये क्या करने को तैयार हू? मैंने परमात्मा का क्या अपराध किया हे, जिससे श्रेणिक मेरा नाथ बना हुआ है? मैं भी अपने मस्तक पर किसी को नाथ बनकर नही बैठने दूगा। मेरी पत्निया मेरे जैसे झूठे अनाथ नाथ के लिए भी प्राण देने को तेयार है तो मे अपने सच्चे त्रिभुवननाथ के लिए जीवन देने मे क्यो सकोच करू।

इस प्रकार शालिभद्र अपने विचार मे मग्न हे ओर उसकी पत्निया उससे प्रार्थना कर रही हे। शालिभद्र ओर उसकी स्त्रिया अपने–अपने लक्ष्य पर पूर्ण हे। बत्तीसो स्त्रिया तो अपने पतिप्रेम मे निमग्न हैं ओर शालिभद्र परमात्मप्रेम मे मग्न हे।

शालिभद्र की स्त्रिया अपना अपराध जानने के लिए उत्सुक हे। वास्तव मे भक्ति वह नही है जो अपने गुण पूछती फिरे। सच्ची भक्ति वह हे जो अपने दोष देखती हे। भक्ति सीखना हो तो शालिभद्र की स्त्रियो से सीखो। आज के लोग अपने दोष नही पूछते गुण पूछते हें–बल्कि अपने गुणा ो स्मरण करा कर दोषो को ढकने का प्रयत्न करते हें। मगर भक्ति ऐसी नही हे वह तो सदा ही कोमल ओर नम्र हे।

एक विद्वान ने भक्ति ओर ज्ञान की तुलना करक बतलाया ह कि दोनो मे वडा कोन हे? उसका कथन हे कि ज्ञान वडा ह ओर कल्याणकारी हे, लेकिन पुरुष हे। भक्ति स्त्री हे। ज्ञान ओर भक्ति के वीच

मे माया नाम की एक स्त्री ओर है। पुरुष को तो स्त्री छल सकती है, लेकिन स्त्री को स्त्री नही छल सकती। अगर ज्ञान माया द्वारा न छला जाय तो ज्ञान भक्ति से ऊचा है। अगर छला गया तो वह गिर जाता है। मगर भक्ति तो पहले से ही नम्र है और स्त्री है। माया भक्ति को तो नही छल सकती। इसलिये ज्ञान और भक्ति मे भक्ति ही बडी है।

भक्त अपने गुण नही देखता दुर्गुण देखता है। आप अगर ज्ञानी न बन सके और भक्त ही बन जाए– हृदय से भक्ति को अपना ले तो भी आपका कल्याण हो जायगा। तिलक–टीका लगाने से या मुहपत्ती बाधने से ही कोई भक्त नही हो जाता। भक्त बनने के लिए यह देखना पडता है कि मुझमे कौन–कौन से दुर्गुण भरे हुए है। मै कहा–कहा त्रुटि कर रहा हू? इस प्रकार अपने दुर्गुण और त्रुटि को दूर करने की चेष्टा करने वाला ही सच्चा भक्त कहलाता है।

शालिभद्र और उसकी पत्नियो का अपने–अपने दोष देखने का प्रयत्न हो रहा है। उसकी पत्निया कहती है–आप हमारा अपराध हमे वतलाइए और उसके प्रतिकार के लिए उचित प्रायश्चित्त दीजिए। शालिभद्र सोचता है– इनका कथन भी मेरे लिए उपदेश बन रहा है। ये कहती हैं हमारा अपराध क्या है? और मै भी परमात्मा से पूछता हू–नाथ ! मेरा क्या दोष है जिससे मुझे अनाथ बनना पडा और राजा श्रेणिक मेरा नाथ बनने आया? इन स्त्रियो को मेरी उदासी का कारण मालूम ही नही है। मै इनके अवगुणो के कारण नही वरन अपने ही अवगुणो के कारण उदास हू। मै सोचता हू– प्रभु मेरे प्रति उदास क्यो है? मेरी आत्मा परमात्मा के अनुकूल नहीं है यही मेरे दुःख का कारण है। मगर अज्ञान के कारण ये स्त्रिया अपने को मेरे दुःख कारण समझ रही है।

निराशा के साथ उसकी सहेलिया चिन्ता और व्यग्रता भी आ धमकी। उन्हे किसी गम्भीर दुर्घटना की आशका होने लगी। अन्त मे उन्होने कहा—स्वामी, आज किसी कारण आपका फूल—सा कोमल हृदय वज्र के समान कठोर हो गया है। आपकी प्रसन्नता प्राप्त करने के हेतु हमने अपने पेट की सब बाते कह दी हैं, फिर भी आपके मुख से एक बोल तक नही निकलता । न तो आप हमारा दोष बतलाते है, न हमे निर्दोष ही कहते हैं। फिर भी यह दड क्यो दे रहे हैं? यह न्याय नहीं है, अन्याय है। अगर आपके न्यायालय मे न्याय—अन्याय का विचार नही है, आरोपित को अपराध बताये बिना ही दड दिया जाता है तो हमे अपील करनी होगी। अब सासजी के पास जाने के सिवाय कोई चारा नही रहा। आपका विचार न मालूम किन उलझनो मे उलझा है और नही कहा जा सकता कि इससे क्या अनर्थ हो सकता है । अगर आप अपने मन की बात कह दे तो अच्छा है अन्यथा हमे सासजी के पास जाना पडेगा।'

शालिभद्र की स्त्रियो ने यह कह कर प्रकट कर दिया कि हम सासजी के पास जा रही है। फिर यह न कहियेगा कि माता से यह हाल कहने की क्या आवश्यकता थी? जब आप नही सुनते तो माताजी को पच बनाकर ही फैसला कराना होगा। यह नही हो सकता कि निर्दोष होने पर भी आप हमे त्याग दे।

प्राचीन काल मे पति—पत्नी का प्रेम बहुत प्रगाढ होता था। कदाचित कभी कलह हो जाता तो सास तक को भी पता नही चल पाता था। स्त्रियो मे खूब गम्भीरता होती थी। लेकिन आजकल वह बात नही रही। आजकल दाम्पत्य प्रेम मे छिछलापन आ गया हे। घर मे लडाई हुई तो बाहर नमक मिर्च मिलाकर उसका समाचार पहुचाये बिना औरतो को चैन नही पडता। इसी कारण कहावत प्रचलित हे—कुत्ते के पेट मे खीर ठहरे तो स्त्रियो के पेट मे बात ठहरे । यद्यपि सभी स्त्रिया कभी समान नही होती फिर भी आज अधिकाश मे यह बात सुनी जाती है।

एक पिता ने अपनी पुत्री को ससुराल जाते समय शिक्षा दी थी—बेटी घर की आग बाहर मत निकालना। यह सीख बडी सुन्दर हे। इसका तात्पर्य यह नही कि कोई आग मॉगने आए तो देने से मना कर देना। अर्थ यह हे कि घर मे कभी कलह—क्लेश हो भी जाए तो उसे दूसरे के सामने प्रकट मत करना। जहा की बात तहा दबा देने से वह बढती नही हे।

प्रेममय जीवन और कलहमय जीवन मे कितना अन्तर हे इस बात पर गहराई से विचार करो। वाल्मीकि रामायण मे लिखा हे कि राम को सीता

मेरी बहुओ के नेत्र आसूओ से भरे हें?

आखिर भद्रा ने पूछा– वेटियो आज क्या कारण हे कि तुम इस स्थिति मे मेरे पास आई हो? तुम्हारे ससुर भेजते हें और तुम खाती–पीती हो। दास–दासिया सब तुम्हारी आज्ञा मे हें। फिर दु ख का क्या कारण हे? शालिभद्र की ओर से कोई वात हुई जान पडती हे। जो हो साफ–साफ बता दो।

ज्यो–ज्यो भद्रा वहुओ को आश्वासन देती थी त्यो–त्यो उनका दु ख अधिकाधिक उमडता जाता था। उन्हे सकोच भी होता था कि आज पति की फरियाद लेकर उन्हे सास के पास आना पडा है। इस कारण पहले तो वे चुपचाप खडी रही मगर कई वार पूछने और समझाने पर उन्होने धैर्य धारण करके कहा– माताजी, आज वे (शालिभद्र) न जाने क्यो उदास हैं। उदासी का कारण न वे बतलाते है और न ही हमारी कल्पना मे ही आ रहा हे। राजा श्रेणिक के आने पर जब आप उनके पास पहुची तभी से वे उदास हो रहे थे–लेकिन लौटने के बाद तो पूछिए ही नही। अब वह मन ही नही रहा है जो पहले था। न बोलते हैं और न आख उठाकर सामने देखते ही हैं। हम सब कह–कह कर थक गईं। जब कुछ भी फल न निकला तो आपके पास आना पडा है।'

बहुओ की बात से भद्रा को विस्मय होना स्वाभाविक था। एकदम अपूर्व घटना थी। फिर भी भद्रा ने सात्वना देकर कहा– अच्छा चलो। मैं साथ चलती हू। देखू, क्या बात है?

20 : माता का संबोधन

भद्रा चिन्ता करती हुई वहा पहुची जहा शालिभद्र ध्यान मे मग्न बैठा था। शालिभद्र की अपूर्व मुद्रा देखकर भद्रा ने साश्चर्य विचार किया– आज यह किस ध्यान मे डूबा है? जान पडता है आज सुआ पिजरे मे नहीं है मगर कारण क्या हो सकता है? खान–पान और परिधान मे तो कोई त्रुटि होने की सभावना है नही। कोई गडबड हुई होगी तो बहुओ की तरफ से ही हुई होगी।

इस पकार विचार कर भद्रा ने कहा– बेटा शालिभद्र ! क्या आज मेरा सत्कार करना भी भूल गये? ऐसे कैसे बैठे हो? ये बत्तीसो हाथ जोडकर खडी है। इनकी ओर आख उठा कर भी नही देखते? ये नम्र है विनीत हैं और क्षमाशील है। कभी तुम्हारी आज्ञा का उल्लघन नही करती ! मंने कई बार इनकी परीक्षा की हैं और उसके बाद तुम्हे इनके भरोसे छोडा है। ये तुम्हारे मन के अनुसार चलती है। रूपवान है कुलवान है सहज सलोनी हैं। तुम्हारे ऊपर इनका प्रेम दिखावटी–बनावटी नही। ऐसी हालत मे आज ये दु खी क्यो है आसू क्यो बहा रही है? ये घर की लक्ष्मी है। लक्ष्मी को अप्रसन्न करना विचारशील पुरुष को योग्य नही है।

ध्यान मे लीन हो तो वैठा रहने पर भी अविनीत नही कहलायगा। शालिभद्र अपनी माता का जी नही दु खाना चाहता। इसीलिए तो इच्छा न होने पर भी वह राजा श्रेणिक के पास गया था। मगर इस समय वह लोकोत्तर विचार मे डूबा है।

शालिभद्र सोचने लगा—माता ! ये स्त्रिया ठीक वैसी ही हैं जैसी तुम समझती और कहती हो। पर मैं नही जानता, इनके दु ख का क्या कारण है? न मैंने इनसे कुछ कहा है न इनका कुछ छीना है। अगर मेरी उदासी के कारण ही ये उदास हैं तो इसका अर्थ हुआ कि अपने सुख मे बाधा पडने से ये उदास हैं। ये कहती है— निष्कारण हमारा त्याग करना उचित नही है। परन्तु अगर मैं इन्हे त्याग कर दूसरी स्त्री से विवाह करता तो यह कहना ठीक होता। मैं तो सच्चे नाथ की खोज करना चाहता हू, फिर भी मैं उलाहने का पात्र कैसे? जब ये मुझे नाथ मानती हैं तो फिर भय क्यो मानती हैं? नाथ मान लेने पर भी भय बना हुआ है तो समझ लेना चाहिए कि मैं इनका सच्चा नाथ नही हू। इसी घटना से ससार की असली स्थिति का पता चल जाता है।

भद्रा कहती है—शालिभद्र ! स्त्रिया तुम्हारे पसीने के बदले अपना खून बहाने को तैयार हैं। सदा तुम्हारे साथ रहती हैं। तुम्हारे कहने पर चलती हैं। फिर इनकी इतनी उपेक्षा करने का क्या कारण है?

शालिभद्र सोचता है— अगर ये मेरे कहने पर चलती हैं तो मैं कहता हू कि ये कभी वृद्धा न हो, कभी मरे नही इनकी इन्द्रिया कभी शिथिल न हो, इन्हे कभी रोग—शोक न हो। क्या ये ऐसा कर सकेगी? मै चाहता हू, ये उदास न हो, फिर ये उदास क्यो हुई है? उदास होने के लिये क्या इन्होने मुझसे आज्ञा ली है? माताजी, व्यावहारिक दृष्टि से तो इनमे वे सब गुण विद्यमान हैं जो तुमने बतलाये हैं। ससार—व्यवहार मे मे इन्द्राणी को भी इनसे बढकर नही मानता। यह मेरा जितना विनय ओर सत्कार करती हैं उतना शायद इन्द्राणी भी इन्द्र का न करती हो? वास्तव मे स्त्री कहलाने की अधिकारिणी ये ही है। फिर भी ये आज उदास हे क्योकि में अपनी मूल ओर असली स्थिति पर आ गया हू। अब न मै इनका स्वामी हू ओर न ये मेरी पत्निया हें। मैं तो इनके आसू भी नही पौंछ सकता। जो स्वय अनाथ हे वह किसी के आसू कैसे पौंछ सकता है?

भद्रा कहती हे— ये वेचारी तुम्हारी आज्ञा की प्रतीक्षा मे खडी ह आर तुम आख उठाकर भी इनकी ओर नही देखते। तुम ऐसे वेठे हो जेसे कोई भक्त भगवान् का जप कर रहा हो ओर उसे किसी दूसरे विपय मे जवान हिलाने

का अधिकार न हो।

भक्त अपनी जीभ परमात्मा को समर्पित कर देते है। सिर जाने पर भी वे किसी और का गुण नही गाते।

कहते है– श्रीपति एक कवि था। यह परमात्मा के सिवाय किसी दूसरे का गुणगान नही करता था। लोगो ने बादशाह अकबर से उसके विषय मे कहा। बादशाह ने उसे अपने दरबार मे बुलाया और एक समस्या पूर्ण करने को दी। समस्या थी– **करो मिल आस अकब्बर की।'**

इस समस्या की पूर्ति कवि श्रीपति ने इस पकार की–

प्रभु को यश छाडि औरनि को भजे,
जिभ्या काटो उस लब्बर की।
अब की दुनिया गुनिया को रटे
सिर बाधन पोट अकब्बर की।।
श्रीपति एक गोपाल रटे नही
मानत शक कोउ जब्बर की।
जिनको हरि की परतीति नहीं
सो करो मिल आस अकब्बर की।।

श्रीपति के इस सवैये से अकबर उसकी भावनाओ को समझ गया और पारितोषिक देकर प्रसन्नता के साथ उसे विदा किया।

भद्रा कहती हैं– जैसे भक्त परमात्मा के सिवाय और किसी के गुण नही गाता इसी तरह ये बत्तीसो तुम्हारे सिवाय किसी के गुण नहीं गाती। ये तुम्हारी मधुर वाणी सुनने के लिये लालायित हैं। फिर तुम सकोच करके क्यो बैठे हो? मैने तुम्हे पहले कभी उलाहना नही दिया था। राजा श्रेणिक के आने पर एक बार उलाहना देना पडा था और अब दूसरी बार देना पड रहा है। मैं समझती थी– तू बडा ही बुद्धिमान है। आज मालूम होता हे तू विचार–

जो वास्तव मे नाथ है ओर जिसकी शरण ग्रहण करने पर मे स्वय नाथ बन सकता हू। मै उसी नाथ की खोज करना चाहता हू। क्या यही मेरा अपराध है, यही मेरी विचार–हीनता है? ऐसा हो तो मेरी विचारहीनता मुझे मुबारिक है।

यहा एक बात ध्यान रखने योग्य है। भद्रा ने शालिभद्र को समझाने के उद्देश्य से जो कुछ भी कहा हे, वह अपने को आगे करके नही अपनी बहुओ को आगे करके कहा है। पुत्र के प्रति माता के उपकार असीम हैं फिर भी भद्रा शालिभद्र के समक्ष अपने उपकारो का बखान नही करती। वह चाहती तो कह सकती थी– मै तेरी माता हू। मेरी कूख से तेरा जन्म हुआ है। तेरे लिए मैंने अनगिनत कष्ट सहन किये हैं। फिर भी तू मेरी बात नही सुनता। आज मुझसे बोलना भी नही चाहता। मगर भद्रा ने ऐसा नही कहा। वह गभीर है। उसका आशय महान् है। अपने किये का उपकार जतलाना अपनी क्षुद्रता प्रकट करना ही है। महान् आशय वाले कभी ऐसा नही करते। वे समझते है मैने जो किया है, अपना कर्त्तव्य समझ कर किया है। इसमे किसी पर एहसान क्या? और फिर अपने किये उपकारो का अपने ही मुख से बखान करना उनका मूल्य घटा लेना है।

यह सोचकर भद्रा अपनी बहुओ की ओर से वकालत कर रही है। वह कहती है–'बेटा। इनके सामने देख। ये तेरी प्रसन्नता की भिखारिने हैं। इन्हे अप्रसन्न मत कर। दिल खोलकर बात कह। इनके किसी व्यवहार से अगर तेरे दिल को चोट पहुची तो उसे सम्भाल कर छिपा रखाने से कोई लाभ नहीं होगा। मैं नही कहती कि ये निर्दोष है मगर जो दोष हो उसे इन्हे बतादो। इसी मे सबका कल्याण है।

भद्रा केसी आदर्श माता है। आज भद्रा सरीखी माता होती तो लोग देवी मानकर उसकी पूजा करते। शालिभद्र पर पिता की अपेक्षा भी माता का अधिक उपकार है। माता ने ही पुत्र के बिना अपना स्त्रीजन्म निष्फल समझा था और उसी की आशा पूर्ण करने के लिये गोभद्र सेठ के हृदय मे तडप पेदा हुई थी। उसके बाद भी माता ने उस पर बडे–बडे उपकार किये हे। आज उनका स्मरण करके वह गर्व कर सकती हे, शालिभद्र के आगे उनका बखान सकती हे। वह कह सकती है कि तुम पडे–पडे मोज करते हो, फिर भी की हिमाकत किये बिना नही रह सकते? मगर नही भद्रा ने ऐसा नही कहा। उसने सिर्फ यही कहा हे कि इन बेचारी बहुओ को क्यो दु खी कर रहा है?

मातृ–प्रेम के समान ससार मे कोई प्रेम नही। मातृ–प्रेम इस ससार

की सर्वोत्तम विभूति है ससार का अमृत है। इसी कारण शास्त्रो मे माता को देव–गुरु के समान बतलाया है। फिर भी भद्रा अपना उपकार न जताकर यही कह रही है तुझे बडे–बडे सद्गृहस्थो ने अपनी–अपनी बेटिया दी है। उन्होने अपनी बेटिया मुझे सौंपी हैं। उन्हे उदास न रहने देना, तेरा और मेरा कर्त्तव्य है आज ये सब उदास हें। मैं कहती हू– तू मेरा पक्ष चाहे न ले पर इन्हे उदास मत कर। यह सब छाया की भाति तेरे साथ रहने वाली हैं। फिर इन पर कोप क्यो? उठकर इन्हे सतोष दे। कदाचित् इनसे कोई अपराध हुआ हो तो भी तू अपने धर्म का स्मरण कर। तेरा धर्म यह है कि कभी इनकी त्रुटि प्रत्यक्ष देखी हो तो उस देखी को भी अनदेखी कर जा। नारी जाति को मत सता। ये बडे घरो की लडकिया अपने साथ लाखो का धन लाई है और तेरी दासी बनी हुई है। इन पर इस प्रकार कोप करना उचित नही है।

भारतवर्ष ही ऐसा देश है जहा पत्नी, पति की दासी बनी रहती थी, किन्तु पति स्वय स्वामी होता हुआ भी अपनी स्त्री को स्वामिनी मानता था। आर देशो मे यह बात नही देखी जाती। यूरोप मे स्त्रिया पुरुषो की हर बात मे बराबरी करना चाहती है अपने अधिकारो के लिए लडाई करती हैं, मगर भारत की प्राचीन सस्कृति के अनुसार पति और पत्नी मिलकर दम्पति हैं। दोनो मे एकरूपता है। वहा अधिकारो को लेने की समस्या ही खडी नहीं होती वरन् समर्पण की भावना ही प्रधान है। यही कारण है कि प्राचीनकाल का भारतीय दाम्पत्य जीवन अतिशय मधुर होता था। मगर धीरे–धीरे दाम्पत्य जीवन का यह आदर्श नीचे गिरता गया और आज हालत यहा तक आ पहुची है कि पुरुषो ने स्त्रियो को अपना गुलाम समझ लिया है। अपने आधे अग को गुलाम बनाने का नतीजा पुरुषो को भी भोगना पडा। उन्हे स्वय विदेशियो की गुलामी स्वीकार करनी पडी।

रहते है और पत्नी अगर उनकी उस प्रवृत्ति मे वाधा पहुचाती हे तो उसे बुरी तरह मारते–पीटते हैं। नारी जाति का इस तरह अपमान करने वालो को धिक्कार के सिवाय और क्या कहा जा सकता हे?

भद्रा फिर कहती है– मैं बहुओ का दु ख नही देख सकती। फिर कान पास मे करके कहती है– अगर इनका दोष इनके सामने कहने मे सकोच होता हो तो ले मेरे कान मे कह दे मगर शालिभद्र चुप है। भद्रा के कान मे कोई आवाज नही पडती।

भद्रा फिर कहती है– शालिभद्र समझदार होने के कारण अपनी पत्नियो का दोष खुलकर नही कहना चाहता। विवेकवान् व्यक्ति अपने घर की बात दुनिया पर जाहिर नहीं करते, जिससे लोक–हसाई न हो। मगर इतने पर भी शालिभद्र का मौन भग न हुआ, तब भद्रा ने कहा– मैं नही जानती थी कि मेरे इतना कहने पर भी तू मूर्ति बना बैठा रहेगा। आज मालूम हुआ कि या तेरे हृदय नही है या हृदय मे प्रेम नही है। तेरी उदासी से घर सूना–सूना लग रहा है। वह झौपडी अच्छी है, जहा सज्जन प्रसन्न रहते हैं। वह महल भला नही, जिसमे सज्जन उदास हो। स्त्रियो को इस प्रकार परेशान करना क्या पुरुष का धर्म है? तेरे सिवाय इन्हे किसका सहारा है। देवर जेठ छोटा बडा जो समझा जाय, एकमात्र तू ही तो है। इस घर मे दूसरा है ही कौन? मनमोहन नाथ या नगीना तू ही तो है। फिर क्यो स्वय उदास हो रहा है और क्यो दूसरो को मुसीबत मे डाल रहा है।

आज सास को बहू का इतना ध्यान हो तो क्या घर मे क्लेश हो।

'नही।'

भद्रा भी अपनी बात न कहकर बहुओ की ही बात कहती हे। भद्रा की यह उदारता सासो के लिए अनुकरणीय हे। सच्ची सास वही हे जो अपनी बहू को बेटी से भी अधिक चाहती है।

शालिभद्र अपने ध्यान मे मग्न है। वह चाहता है कि मे सवका नाथ वनू और भद्रा चाहती है कि वह अपनी बत्तीस स्त्रियो का ही नाथ वना रहे। भद्रा कहती है तू बहुओ को दु खी मत कर। शालिभद्र सोचता हे– में इन्हे क्या ख दे रहा हू। ये बत्तीसो स्त्रिया सुकुमारी हे सुबुद्धिवाली हे नम्र हें ।ज्ञाक रे०। है मेरे पसीने के बदले अपना खून बहाने को तेयार हे माता–पिता को छोड कर मेरे आश्रय मे आई हें। फिर में इन्हे दु खी क्यो रखू? जब ये निरपराध ह तो में इन्हे दासी बनाकर क्यो रक्खू? इन्हे दासी बना कर रखने का मुझे क्या अधिकार हे। में मर जाऊ तो ये विधवा हो जाएगी आर

रूठ जाऊ तो तडफडा एगी। लेकिन विधवा बनाने या तडफाने का मुझे क्या अधिकार है। इनका अपराध ही क्या है? क्या मै इन्हे विधवा बनाने के लिए नाथ बना हू? पति पत रखने वाला है या पत गवाने वाला है? मै अगर नाथ हू तो इन्हे अखण्ड और अक्षय सौभाग्य प्रदान करना मेरा कर्त्तव्य है।

मित्रो । शालिभद्र के इस मूक कथन पर आप विचार करे। आप लोगो को क्या अधिकार है कि आप स्त्रियो को दासी बनाकर रखे? कदाचित् आपका यह खयाल हो कि हम खाने-पीने और पहिनने-ओढने के साधनो की व्यवस्था करते है और हमारी बदौलत ही स्त्री मौज करती हैं तो क्या शालिभद्र ऐसे ही विचार नही कर सकता था।

शालिभद्र आगे सोचता है- मोह राजा ने इन स्त्रियो को भी गुलाम बना रखा है और मुझे भी। मोह न होता तो जिस तरह ये मेरी सेवा करती हैं वैसे परमात्मा की सेवा क्यो करतीं? जैसी मेरी दासी बन रही है, वैसे परमात्मा से इन्हे मिलने ही नही दिया। मै स्वय मोह का मारा हू, फिर इन्हे किस मुह से दोष दूँ। वास्तव मे मैं इन्हे दुखी नही कर रहा हू, मोह ही इन्हे सता रहा है।

आप किसे अच्छा मानते है- मोह राजा को या परमात्मा को?

परमात्मा को।

अगर कोई मोह के पजे से निकल कर ईश्वर भक्त बने तो आप प्रसन्न होगे या अप्रसन्न।

प्रसन्न।

लेकिन कदाचित आपका ही लडका मोह त्याग कर साधु बनने को तैयार हो जाय तो आप क्या करेगे।

गालिया देने लगेंगे।

है कि भोग तो मोह के है मेरे नही। मे वीच मे पडकर वृथा ही इनमे सुख मानता हू। भर्तृहरि कहते हे–

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता ।

अर्थात्–भोगो को हमने नहीं भोगा वरन् भोगो ने ही हमे भोग लिया है।

शालिभद्र कहता है–मोह हमे भोग रहा है। उसने इन्हे मेरा ओर मुझे इनका दास बना रखा है।

जो रक्षा करता है, वही पति कहलाता है। आपकी स्त्री का सिर दुखने लगे तो क्या आपमे दर्द दूर कर देने की शक्ति है? अगर नहीं तो आप पति कैसे ।

शालिभद्र मन ही मन कहता है– माताजी । यह सब मोह का चमत्कार है। अज्ञान के वश होकर जीव मोह का पोषण करता है और फिर भी आनन्द मानता है। मगर ये ससार बढाने का ही मार्ग है। माता। यद्यपि तू मेरा हित चाहती है लेकन तुझे मेरे अन्त करण की बात मालूम नहीं है। तू नही जानती है कि मैं क्या करना चाहता हूं? मैं इन स्त्रियो को रुला नही रहा हू, इनका असली स्वरूप इन्हे समझाने का प्रयत्न कर रहा हू। मैं इन्हे अपनी ओर से स्वाधीनता दे रहा हू और कहता हूँ– तुम गुलाम मत बनी रहो। परमात्मा के चरणो का आश्रय लो। वही आश्रय सच्चा आश्रय है। इनकी और मेरी आत्मा समान है। फिर इन्हे गुलाम रहने की क्या आवश्यकता है?

अब शालिभद्र ने अपना ध्यान भग किया। भद्रा फिर पूछने लगी–तूने यह क्या कर रखा है?

शालिभद्र– कुछ नही आनन्द था।

भद्रा– लेकिन यह आनन्द तो अच्छा नही लगता।

शालिभद्र– क्यो?

भद्रा– इसलिए कि यह नया खेल हे।

शालिभद्र– असली खेल यही हे मा ओर सव तो इन्द्रजाल हे।

भद्रा– सो कैसे।

शालिभद्र– श्रेणिक के आने पर आपने कहा था– उठो नाथ आया है। वह चाहेगा तो तुम्हे तुच्छ बना देगा। माता क्या तुम यह चाहती हो कि तुम्हारा बेटा ऐसा हो कि एक राजा भी उसे तुच्छ बना सके । इसके अतिरिक्त में इन स्त्रियो को अपनी दासी केसे बनाये रख सकता हू? जा दूसरा का तुच्छ बनाएगा वह स्वय तुच्छ हे में तुच्छ बनना नही चाहता।

माता मे तो स्वय अनाथ हू। मेने मध्यलोक मे रहकर देवलाक क

भोग भोगे है। इससे मुझे अनाथता आ गई है। जब मैं स्वय अनाथ हू तो दूसरो का नाथ कैसे हो सकता हू। मै अपनी अनाथ अवस्था को त्यागना चाहता हू। इसी कारण तुम और तुम्हारी बहुए घबरा रही है। यह सब मोह का ही पताप है। क्या श्रेणिक के आने पर तुम्ही ने नही कहा था कि चलो नाथ आया है। ऐसी अवस्था मे मुझे अपना अनाथपन दूर करना होगा और वह तभी दूर होगा जब मै स्वय किसी का नाथ होने का दावा नही करूगा।

जननी जब मनुष्य पर के पाश मे बद्ध होता है, तभी उसमे अनाथता आती है और अनाथना दूर करने के लिये पर–पदार्थो के सयोग का त्याग कराना आवश्यक है। मैने ऐसा ही करने का निश्चय कर लिया है।

21 : प्रभु का पदार्पण

शालिभद्र भद्रा से यह बाते कह ही रहा था कि इसी समय वहा बनपाल आ पहुचा।

प्रश्न हो सकता है— आज वनपाल क्यो आया? अगर वह पहले कभी नही आया था तो आज ही उसके आने का क्या कारण है?

जो लोग कथा के अलकार को नही जानते वे कथा का मर्म भी नही समझ सकते। लोग समझते हैं कि शालिभद्र भोग मे ही डूबा रहता था। उसे दीन—दुनिया का कुछ पता ही नही था। मगर ऐसा होता तो आज वनपाल बधाई लेकर क्यो आता? वास्तव मे यह खयाल गलत है कि शालिभद्र भोग के सिवाय और कुछ समझता ही नही था। वह सब कुछ समझता था। धर्म की सब बातो से भी वह परिचित था। उसे ये भी मालूम था कि नगर मे कोन बडा है और कौन छोटा हे।

आप कह सकते हैं— अगर शालिभद्र इतना जानकार था तो उसने श्रेणिक राजा को जो प्रसिद्ध सम्राट था ओर राजगृह ही जिसकी राजधानी थी, क्यो नही जाना? इसका उत्तर यह है कि वह राजा श्रेणिक को भी जानता अवश्य था मगर देवलोक के भोगोपभोग भोगने के कारण उसकी यह धारणा हो गई थी कि वह सर्वथा स्वाधीन है। उसे राजा से कोई वास्ता नही हे। भद्रा ने जिस प्रकार से श्रेणिक का परिचय दिया उससे शालिभद्र की धारणा को अचानक ही चोट पहुची। उसे यकायक अपनी अनाथता का बोध हुआ और यह बात उसके दिल मे खटक गई। उसने सोचा— मध्यलोक की वस्तुए छोड कर दिव्यलोक की वस्तुए भोगने पर भी म अनाथ ही बना रहा तो फिर भोग मात्र का त्याग करना ही योग्य हे। जब भाग मात्र का त्याग कर दूगा तो अनाथता के लिए कोई अवकाश ही न रह जायेगा। यह विचार उसके हृदय मे उत्पन्न हुआ ओर तत्काल ही सकल्प के रूप मे पलट गया।

वनपाल ने शालिभद्र से निवेदन किया– आप जिन नाथ के दर्शन करना चाहते है वे ही महाप्रभु महावीर भगवान् आज उद्यान मे पधारे हैं।

वनपाल की बात सुनते ही शालिभद्र अतिशय प्रसन्न हुआ और सोचने लगा आज मेरा मनचाहा पाश गिरा। आज मेरे यहा अमृत की वर्षा हो गई। शालिभद्र ने वनपाल की प्रशसा करते हुए कहा– 'आज तू ने बहुत सुन्दर बधाई दी है। इस बधाई का बदला किसी भी वस्तु को देकर नही चुकाया जा सकता। परन्तु तुम ससारी हो और अभी मै भी ससारी हू। अतएव सिर्फ दातो मे ही रख देना योग्य नही है। इतना कह कर शालिभद्र ने अपने शरीर के समस्त आभूषण उतार कर उसे परितोषिक मे दे दिये।

वनपाल खुशी–खुशी लौटा। उसके चले जाने के बाद शालिभद्र ने अपनी माता से कहा माताजी आप मेरे इस प्रश्न का उत्तर नही दे सकी कि मे अनाथ कैसे बना? मगर इसका सही उत्तर देने का सौभाग्य से आगमन हुआ है। उसकी सेवा मे मै भी चलता हू, तुम भी चलो और इन बत्तीसो को भी लेती चलो। उन्ही से अपने प्रश्न का समाधान होगा और तब अनाथता मिटाने का उपाय भी विदित हो जायेगा।

भद्रा गभीर विचार मे डूब गई। उसने समझ लिया कि पुत्र अब माया के जाल मे फसा नही रहेगा। अब पछी उडना चाहता है। शालिभद्र सिह है। यह अब तक अपने स्वरूप को भूल कर गाडरो मे रहता आया है। अब इसे अपने असली स्वरूप का भान हो गया है। अब यह गाडरो मे नहीं रहेगा। इसके पिता ने सिहवृत्ति धारण की थी तो यह कैसे रुक सकता है? इस एक उदाहरण से समझो–

उसने सोचा– मेरी सूरत तो उस दिन के सिह सरीखी हे। मगर उस सिह की पूछ तो उसके सिर तक आ जाती थी। देखू, मेरी पूछ आती हे या नहीं। उसने देखा तो पूछ सिर पर आ गई। पचा सिह के समान उठ गया। इसके वाद वह सोचने लगा– सिह के गरजने से उस दिन भेडे भाग खडी हुई थी। देखना चाहिये मेरे गरजने से भी ये भागती हें या नही? यह सोचकर शेर के बच्चे ने जो गर्जना की तो भेडे पानी पीना छोडकर प्राण लेकर भागी। समझ गया, मैं भेड नही सिह हू।

भद्रा कहती है– शालिभद्र की स्थिति भी यही हे। अव तक अपने स्वरूप को भूल कर यह हमारे साथ रहा। अव उसने स्वरूप समझ लिया है इसलिये मुनि–सिह के साथ ही रहेगा। अव यह हमारे साथ रहने का नहीं।

भद्रा ने प्रकट मे कहा– 'अगर तुम्हारी यही इच्छा हे तो चलो। मैं तुम्हारी इच्छा पूरी होने मे विघ्न नही डालना चाहती।

माता की स्वीकृति पाकर शालिभद्र प्रसन्न हुआ। उसे सदेह था कि माता मुझे भगवान् के समीप जाने की आज्ञा देगी या नही? मगर सस्ती स्वीकृति पाकर उसके हर्ष का ठिकाना न रहा। शालिभद्र सोचने लगा– मैंने अपनी अनाथता को नष्ट करने का विचार तो पक्का कर लिया था परन्तु उसके नाश का मार्ग निश्चित नही किया था। अब भगवान के आगमन से यह समस्या सहज ही सुलझ जाएगी। भगवान का इस समय आना ऐसा ही हे जैसे बिल्ली के भाग्य से छीका टूटना।

शालिभद्र बडी सज–धज के साथ प्रभु के दर्शन करने के लिये रवाना हुआ। माता और पत्निया साथ ही थी। नगर मे सर्वत्र खवर फेल गई कि जिस शालिभद्र को देखने के लिये राजा श्रेणिक स्वय उसके घर गये थे फिर भी जो अपना घर छोड कर उनके सामने नही गया था वह शालिभद्र भगवान् के समीप जा रहा हे।

प्रश्न हो सकता हे– भगवान महावीर मे ऐसा कोनसा आकर्पण था कि शालिभद्र उनकी ओर अनायास ही खिचकर चला गया? जो पुरुप महान मगध–सम्राट श्रेणिक के राजमहल तक नहीं जाना चाहता था ओर जिसन अपने घर पर भी उनसे मिलने मे अपने गोरव की क्षति समझी वह किस चुम्बकीय शक्ति से आकर्पित होकर चला जा रहा हे? भगवान के पास न भेट देने को फूटी कोडी हे न राज–मुकुट ह आर न दर्शनीय वेशभूपा ह। मुडा हुआ सिर हे मलिन शरीर हे ओर वह भी तपस्या से सूखा हे। उनम दर्शनीयता क्या हे । इधर शालिभद्र स्वर्गीय सम्पत्ति का स्वामी ह। वह असाधारण

सौन्दर्य से सम्पन्न है। फिर भी वह भगवान की शरण मे जा रहा ह।

लोग समझते है कि हम अपने से अधिक ठाठ–बाठ वाले के पास जाएगे तो लाभ होगा। आज के राजा लोग भी यही विचार करते हैं कि जिस साधु के पास हाथी–घोडे चामर–छत्र आदि ठाठ हो, उसी के पास जाना अच्छा है। अनगार और भिक्षु के पास धरा ही क्या है? मगर ऐसा सोचन वाले भ्रम मे है। न ऐसा भक्त भक्ति का मर्म सूझते हे और न ऐसे साधु–साधुता के रहस्य को ही समझ पाए हैं।

शालिभद्र भली–भाति समझता था कि जिसने जगत् के समस्त पदार्थों की मोह–ममता तज दी है और जो निस्पृह जीवन व्यतीत करता हे, वही मेरा नाथ हो सकता है बल्कि उसी की उपासना करके मैं नाथ बन सकता हू।

शालिभद्र उसी गुणशील उद्यान मे पहुचा जहा भगवान् विराजमान थे। दूर से ही भगवान् को देखकर उसने पाच अभिगमन किये। अभिगमन इस प्रकार है–

(1) सचित्ताइ दव्वाइ विउस्सरणियाए

(2) अचित्ताइ दव्वाइ अव्विउस्सरणियाए

(3) एगसाडी– उत्तरासग

(4) चक्खूफासे अजलिपग्गहण

(5) मणसा एगत्तीकरण

एक पन्ने वस्त्र का उत्तरासग करने का पहला कारण यह हे कि ऐसा वस्त्र मागलिक समझा जाता ह। दूसरे वस्त्र बुनने की कला तो प्राचीन हे किन्तु वस्त्र सीने की कला प्राचीन नही है। प्राचीन काल के लोग सिला वस्त्र नही पहनते थे। यही प्राचीनकाल की परिपाटी थी। इसी परिपाटी के अनुसार [illegible] वस्त्र का उत्तरासग दतलाया गया है।

त्याग देना। (2) अचित्त द्रव्यो को नही छोडना। (3) एक पन्ने वस्त्र का उत्तरासग करना। (4) दृष्टिगोचर होते ही हाथ जोड लेना। (5) मन को एकाग्र कर लेना।

अनन्तकाल तक रहेगा तो कही से अवश्य आया हे और कही अवश्य जाएगा। इसलिये आत्मा की ओर देखो। सोचो कहा से आये हो और कहा जाना हे? यह मनुष्यशरीर दीपक है ओर इसमे आयु–रूपी तेल भरा हे। इन्द्रिया इसकी बत्ती हें। मगर ज्ञान–रूपी अग्नि के सयोग के विना दीपक के विद्यमान रहते हुए भी अधकार नही मिटता। इसलिए ज्ञान प्राप्त करलो तो भीतर–वाहर का अधकार दूर हो जाएगा। किन्तु विलम्ब मत करो। तेलपात्र फूट जाने पर अथवा तेल या वत्ती के हट जाने पर ज्ञान–अग्नि का सयोग केसे करोगे? जव तक मनुष्य शरीर रूपी दीपक आयु रूपी तेल ओर इन्द्रिय रूपी बत्ती है, तभी तक ज्ञान– अग्नि का मिलाप हो सकता है। इसलिये इस अवसर को हाथ से मत गवाओ। कार्य उपयोगी ओर महत्त्वपूर्ण है, समय थोडा है। बीच मे विघ्न हैं। जो क्षण मिला है उसे अगले क्षण पर मत छोडो। 'काल करे सो आज कर, आज करे सो अव,। आगे का भरोसा मत कर। अगर पश्चात्ताप से वचना हे तो हे भद्र जीव ! अपने कल्याण के मार्ग को पहचान ले और उस पर चल दे। इसी मे तेरा हित है। इसी मे तेरा कल्याण हे।

अरे प्राणी सोता मत रह जाग उठ। भाग। भागने के समय पडा क्यो हे? तीन भयानक लुटेरे तेरे पीछे पडे हें। जन्म जरा ओर मरण तुझे अपना शिकार वनाना चाहते हें ओर तू अचेत पडा हे ! प्राणो के रहने पर ही चेष्टा की जा सकती हे। जिस गाव को जाना हे उसकी ओर जल्दी प्रस्थान कर दे। सामने श्मशान हे। वहा भस्म होना हे ओर यहा शृगार सज रहा हे। जो शरीर भस्म वनने वाला है उसे सजा रहा हे ओर जो साथ जाने वाला हे उसकी ओर ध्यान ही नही हे।

गाफिल ! किसके भरोसे वेठा हे? कोन तेरी रक्षा करेगा ! फोज? फौज रक्षा करने मे समर्थ होती तो चक्रवर्ती क्यो उसे त्यागते? परिवार तेरी रक्षा करेगा? ऐसा होता तो कोई मरता ही क्यो? सभी के परिवार वाले मरने वाले को वचा न लेते? किला भी रक्षा नही कर सकता। सुन–

कोटि–कोटि कर कोट ओट मे उनकी तू छिप जाना
पद–पद पर प्रहरी नियुक्त करके पहरा विठलाना।
रक्षण हेतु सदा हो सेना सजी हुई चतुरगी काल वली ले जाएगा दखगे साथी सगी।

X X X X

अक्षय धनपरिपूर्ण खजाने शरण जीव को होते, तो अनादि के धनी सभी इस भूतल पर ही होते।

पर न कारगर धन होता है बन्धु! मृत्यु की बेला राज–पाट को छोड चला जाता है जीव अकेला।

X X X X

अम्बर मे पाताल लोक मे या समुद्र गहरे मे, इन्द्र–भवन मे शैलगुफा मे सेना के पहरे मे।

वज्र–विनिर्मित गढ मे या अन्यत्र कही छिप जाना, पर भाई! यम के फदे मे अन्त पडेगा आना।

X X X X

देखो देखो खोजो अपनी दृष्टि जरा फैलाओ, कण–कण, अणु–अणु देख तर्क के तीखे तीर चलाओ।

ऊपर–नीचे दक्षिण उत्तर–पश्चिम, पूर्व निहारो यदि रक्षक हो कही शरण लो उसकी मृत्यु निवारो।

तात्पर्य यह है कि ससार की कोई भी शक्ति ऐसी नही है जो मनुष्य को मृत्यु का ग्रास होने से बचा सके। काल इतना बलवान है कि लाख प्रयत्न करनेपर भी आ ही धमकता है। इसलिये निर्भय और अमर बनने का वास्तविक उपाय करो। ऐसा करो कि तुम्हे काल से न डरना पडे। वरन् काल ही तुमसे डरे। अगर तुम चेत जाओगे और ज्ञान प्राप्त कर लोगे तो तुम्हारे अन्त करण मे यह भावना उत्पन्न होगी–

मरने से जग डरता है मो मन परमानन्द।
कब मरिहौ कब भेटिहौ पूरन परमानन्द।।

हे भद्र पुरुष! काल के आने पर ससार का धन जन आदि कोई नहीं बचा सकता।

भगवान् ने कहा— जब तक तुम ससार की किसी भी वस्तु के नाथ बने रहोगे तब तक तुम्हारे सिर पर भी नाथ रहेगा ही। अगर तुम्हारी इच्छा है कि कोई तुम्हारा नाथ न रहे तो तुम किसी के नाथ मत रहो। अर्थात जगत की वस्तुओ से अपना स्वामित्व हटालो ममत्व त्याग दो यह समझ लो कि न तुम किसी के हो, न कोई तुम्हारा है। सब प्रकार के सयोग से मुक्त हो जाओ। यही स्वाधीन बनने का मार्ग है।

शालिभद्र— अर्थात् मुनि बने विना यह सम्भव नही कि सिर पर नाथ न हो?

भगवान्—हा भद्र ! सत्य यही है।

22 : दीक्षा

मेरे भाई शालिभद्र को ससार से वैराग्य हो गया है और वह मेरी बत्तीसो भौजाइयो मे से नित्य पति एक–एक को समझा कर त्यागता जा रहा है यह समाचार शालिभद्र की बहिन सुभद्रा ने भी सुना। सुभद्रा को इससे बहुत दु ख हुआ। मेरे जिस भाई ने जीवन भर आनन्द ही आनन्द भोगा है, जो बहुत कोमल शरीर वाला है और जिसे यह भी मालूम नही कि दु ख कैसा होता है वह सयम मे होने वाले कष्ट किस तरह सहेगा ! भिक्षा किस तरह करेगा? आदि विचारो ने सुभद्रा के हृदय मे उथल–पुथल मचा दी। इतने मे ही उसका पति स्नान करने के लिए आया। अपने पति धन्ना को सुभद्रा अपने हाथ से ही स्नान कराया करती थी। धन्ना को स्नान करने के लिए आया देख कर सुभद्रा क्षण भर के लिए अपने हृदय का दु ख दबा कर धन्ना को स्नान कराने गई।

पर गरम –गरम बूद गिरी जानकर धन्ना चोक उठा। ये गरम बूद कहा से गिरे, यह जानने के लिए इधर–उधर देखते हुए धन्ना ने सुभद्रा के मुह की ओर देखा तो उसे सुभद्रा की आखो से आसू गिरते दीख पडे। अपनी प्रिय पतिव्रता पत्नी की आखो से आसू गिरते देखकर धन्ना को आश्चर्य हुआ। वह निश्चय न कर सका कि आज सुभद्रा की आखो से आसू क्यो गिर रहे हें?

धन्ना ने सुभद्रा से कहा– प्यारी सुभद्रा आज तुम्हे ऐसा क्या दु ख है कि आसू वहा रही हो? मैने दु ख के समय भी तुम्हारी आखो मे आसू नही देखे, फिर आज तुम्हारी आखो मे आसू क्यो ! आज तुम्हे ऐसा क्या दु ख हे? जहा तक मैं समझता हू, तुम सब तरह से सुखी हो। तुम पितृगृह की ओर से भी सुखी हो और मेरी ओर से भी। तुम धनिक शिरोमणि शालिभद्र की अकेली तथा लाडली बहन हो ओर मेरी पत्नी हो। यद्यपि तुम्हारी सात सौत हैं, परन्तु उन्होने तुम्हे अपनी स्वामिनी मान रखा है तथा वे स्वेच्छापूर्वक तुम्हारी दासिया बनी हुई हैं। फिर समझ मे नही आता कि तुम्हे किस दु ख ने आ घेरा है, जिससे तुम आसू बंहा रही हो! यदि अनुचित न हो तो तुम अपना दु ख मुझे सुनाओ।

धन्ना का कथन सुनकर सुभद्रा का हृदय दु ख से ओर भी उमड पडा। अपने दु ख का आवेग रोककर उसने करुण स्वर मे कहा– नाथ मेरा भाई शालिभद्र ससार से विरक्त हो रहा है। वह सयम लेने की तैयारी कर रहा है। वह मेरी एक–एक भौजाई को एक दिन मे समझाता ओर त्यागता जा रहा है। जब वह मेरी बत्तीसो भोजाइयो को समझा चुकेगा तब घर त्याग कर सयम ले लेगा। मेरा एक मात्र भाई–जिसने कभी कष्ट का नाम नहीं सुना है– सयम लेगा और पितृगृह की ओर से में भी सुख रहित हो जाऊगी। इसी दु ख के कारण मेरी आखो से आसू निकल पडे हें।

सुभद्रा का कथन समाप्त होने पर धन्ना हस पडा। उसने सुभद्रा के कथन का उपहास करते हुए कहा–तुम्हारा भाई शालिभद्र वीर नही कायर है। यदि वह कायर न होता तो अपनी एक–एक पत्नी को समझाने मे एक–एक दिन क्यो लगाता? ससार मे वेराग्य होने के पश्चात स्त्रियो को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने की क्या आवश्यकता थी? क्या बत्तीस पत्नियो को एक ही दिन मे ओर कुछ ही समय मे नही समझाया जा सकता? वैराग्य होते ही जो ससार–व्यवहारो से अलग नही हो वह वीर नही कायर हे।

सुभद्रा को यह आशा थी कि मेरे पति भाई को किसी प्रकार समझा कर ससार–व्यवहार मे रुके रहने और इस पकार मुझे दु ख मुक्त करने का पयत्न करेगे। लेकिन उसको अपने पति की ओर से ऐसी बात सुनने को मिली जो आशा के विरुद्ध होने के साथ ही भाई का अपमान करने वाली भी थी। सुभद्रा को पति के मुख से यह सुनकर बहुत दु ख हुआ कि तुम्हारा भाई कायर है। यह बात सुभद्रा के हृदय मे छिद गई। उसने धन्ना से कहा–नाथ । बत्तीस स्त्रिया एव स्वर्गीय सपदा त्यागना क्या कायरता है? आप कहते हैं बत्तीस स्त्रियो को समझाने के बहाने बत्तीस दिन रुकने की क्या आवश्यकता है? लेकिन इस समय मे ऐसी सम्पदा और बत्तीस स्त्रिया त्याग कर सयम लेने की तैयारी करने वाला मेरे भाई के सिवाय दूसरा कौन है? इस तरह की भोग सामग्री वर्तमान मे किसने त्यागी है । ऐसा त्याग सरल नही है। अपने तो सासारिक भोगो मे पडे रहे और जो त्यागता है, उसे कायर कहकर उसकी निन्दा करे यह उचित तो नहीं है। भोगियो को उन लोगो की निन्दा न करनी चाहिए जो भोगो को त्याग चुके हैं अथवा धीरे–धीरे भी त्याग रहे है।

सुभद्रा के इस कथन से धन्ना सहसा जागृत हो गया। वह सुभद्रा का कथन सुनता जाता था और अपने हृदय मे सोचता जाता था कि वास्तव मे सुभद्रा का कथन ठीक है। मैं स्वय तो विषय भोग मे पडा रहू और जो एकदम से नही परन्तु धीरे–धीरे भोगो को त्याग रहा है उसको कायर बताऊ, यह अनुचित ही है। शालिभद्र को कायर बताना तभी ठीक हो सकता है, जब मै एकदम से भोगो का त्याग कर दू, और यदि मैं ऐसा न कर सकू तो फिर मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि शालिभद्र कायर नही किन्तु वीर है और मैं कायर हू। मुझको सुभद्रा के कथन से बुरा नही मानना चाहिए किन्तु सुभद्रा के कथन को सदुपदेश रूप मान ससार–व्यवहार से निकल कर सयम स्वीकार करना चाहिए और सुभद्रा को यह बता देना चाहिए कि वीरता ऐसी

का हाथ हटा कर उठ खडा हुआ ओर वाहर जाने लगा। धन्ना का कथन सुनकर तथा उसे जाता देखकर सुभद्रा हक्की–वक्की हो गई। वह दौड कर धन्ना के सामने आ उसके पेरो पर गिर पडी तथा हाथ जोड कर कहने लगी–नाथ, आप कहा जा रहे हैं? वात ही वात मे आप यह क्या करने के लिए तैयार हुए हैं? हो सकता हे कि मैंने वन्धु–वियोग के दु ख मे कोई अनुचित बात कह डाली हो।

इसलिए अपने कथन के विषय मे मुझे पश्चात्ताप है ओर मैं आप से बार–बार क्षमा मागती हू। आप मेरा अपराध क्षमा करिए। आप पुरुष हैं। आपको स्त्रियो की बात पर ध्यान देना उचित नही है। यदि आप भी स्त्रियो का अपराध क्षमा नहीं करेगे, स्त्रियो के प्रति उदारता न रखेगे तो फिर पुरुष लोग किसका आदर्श सामने रख कर स्त्रियो का अपराध क्षमा करेगे? मैं भाई के विरक्त होने से पहल ही दु खी हू। मे सोचती थी कि आप मेरे भाई को समझाकर मेरा दु ख मिटाएगे, लेकिन आप तो मुझे और दु ख मे डाल रहे हैं। जब कोई यह सुनेगा कि सुभद्रा की बातो के कारण उसके पतिगृह ससार त्याग कर सयम ले रहे हैं, तब वह मुझे भी क्या कहेगा और आपको भी क्या कहेगा? यदि अपराध नही किया है फिर आप उन्हे कैसे त्याग सकते हैं? यदि मैं अपराधिन हू तो मुझे त्याग दीजिये। मैं वह सब दण्ड सहन को तैयार हू जो आप मुझे देगे, लेकिन मेरे अपराध के कारण मेरी सात बहनो को दण्ड मत दीजिये। मेरे और मेरी सात बहनो के जीवन आप ही हैं। आपके सिवा हमारा कौन है? यदि आप भी हमे तुच्छ अपराध के कारण त्याग जाएगे तो फिर हमारे लिए किसका सहारा होगा? इसलिए मैं प्रार्थना करती हू कि आप मेरा अपराध क्षमा कर दीजिए और गृहत्याग का विचार छोड दीजिये। यह प्रार्थना करने के साथ ही मैं यह भी निवेदन कर देती हू कि हम सब आपको किसी भी तरह न जाने देगी। स्त्रियो का बल नम्रता एव अनुनय–विनय करना है। हम आपको रोकने मे अपना यह सारा बल लगा देगी लेकन आपको कदापि न जाने देगी।

सुभद्रा का कथन सुनकर धन्ना समझ गया कि सुभद्रा मोह के कारण ही मुझे रोकना चाहती है और साथ ही यह भी सोचती हे कि उसकी वातो से रुष्ट होकर मैं सयम ले रहा हू। उसने कहा बहन सुभद्रा तुम यह क्या कह रही हो? तुमने मुझे अभी अपने वीरतापूर्ण शब्दो द्वारा इस ससार जाल से निकाला है और अव फिर उसी मे फसाने का प्रयत्न करती हो। तुम्हारे वचनो से ही मेरी आत्मा जागृत हुई हे और मैं सयम लेने को तेयार हुआ हू। इसका यह अर्थ नही हे कि मैं तुम से रूठ कर सयम ले रहा हू। तुमने मेरा उपकार

किया है अपकार नही किया है। वास्तव मे तुम मेरी गुरु बनी हो। तुमने मेरी आत्मा को घोर दु खमय ससार से निकालकर कल्याण–मार्ग पर आरूढ किया है। थोडी देर के लिए अपनी स्वार्थ भावना अलग करके विचार करो कि मेरा हित ससार–त्याग कर सयम लेने मे है या विषय–भोगो मे फसे रहने मे है? क्या विषय भोगो मे फसे रहने पर आत्मा का कल्याण हो सकता है? यदि नही तो फिर मेरा सयम लेना क्या अनुचित है? आज मै स्वेच्छा से सयम ले रहा हू परन्तु यदि मेरी मृत्यु हो जाए तो उस दशा मे तुम्हे सेवा से वचित रहना पडेगा या नही? तब मुझे कल्याण मार्ग से रोकने का यही अर्थ हुआ कि तुम क्षणिक एव नाशवान सुख के लिए मेरा अहित करना चाहती हो। सुभद्रा जरा विचार करो। यदि तुम्हे मुझसे प्रेम है तो उसका बदला मेरे अहित के रूप मे न दो। अपने स्वार्थ के लिए मुझे अवनति मे मत डालो। नीतिकारो ने कहा ही है कि–

यौवन जीवित चित्त छाया लक्ष्मीश्च स्वामिता।
चचलानि षडेतानि ज्ञात्वा धर्मरतो भवेत्।।

अर्थात्– जवानी, जीवन, मन, शरीर की छाया, धन और प्रभुता ये छहो चचल हैं यह जानकर धर्म–रत होना चाहिए।

तुम्हारे कथन द्वारा इस बात को जानकर भी क्या मैं इन्ही मे उलझा रहू और धर्म मे रत न होऊं? सासारिक विषय–भोग चाहे जितने भोगो, तृप्ति तो होती ही नही है और अन्त मे छूटते ही हैं। फिर स्वेच्छा से उन्हे त्याग कर सयम द्वारा आत्म–कल्याण क्यो न किया जावे? यह मनुष्य–शरीर बार–बार नही मिलता। न मालूम कितने काल तक दु ख भोगने के पश्चात् यह मनुष्य–भव मिला है। क्या इसको विषय–भोग मे ही नष्ट कर देना बुद्धिमानी होगी? क्या फिर ऐसा अवसर मिलेगा कि मैं स्वेच्छापूर्वक विषय–भोग से निवृत्त हो सयम द्वारा आत्मा का कल्याण करू? यदि नहीं तो फिर मेरा मार्ग क्यो रोक रही हो? मुझे जाने दो। मैंने तुम्हे अपनी बहन कहा है। इस पवित्र [illegible] को तोड कर फिर अपवित्र सम्बन्ध जोडने का प्रयत्न मत करो। तुम [illegible] के इस कथन की ओर ध्यान दो–

यावत्स्वथमिद कलेवरगृह यावच्च दूरे जरा,
यावच्चेद्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुष ।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्य प्रयत्नो महान्
प्रोदीप्ते भवने च कूपखनन प्रत्युद्यम कीदृश ?

इन्द्रियो की शक्ति मारी नही गई है, और आयुष्य नष्ट नही हुआ है तब तक बुद्धिमान् को आत्मा के कल्याण का पूरा प्रयत्न कर लेना चाहिये। जब ये सब बाते न रहेगी, तब आत्मकल्याण के लिये प्रयत्न करना वैसा ही निरर्थक होगा जैसा निरर्थक प्रयत्न घर मे आग लगने पर कुआ खोदने का होता है।

धन्ना को समझाने तथा रोकने के लिये सुभद्रा ने बहुत प्रयत्न किया। उसकी सातो सौते भी आ गई और उन्होने भी धन्ना से बहुत अनुनय-विनय की, परन्तु वैराग्य के रग से रगे हुए धन्ना पर दूसरा रग न चढ सका उसने सब को इस तरह का उत्तर दिया और ऐसा समझाया कि वे सब अधिक कुछ न कह सकी। बल्कि धन्ना के समझाने का सुभद्रा पर तो ऐसा प्रभाव हुआ कि वह भी सयम लेने के लिए तैयार हो गई। उसने धन्ना से कहा कि आपके समझाने का मुझ पर जो प्रभाव हुआ है उसके परिणाम स्वरूप मै भी वही मार्ग अपनाना चाहती हू, जो मार्ग आप अपना रहे हैं। इसलिए आप कृपा करके मुझे भी सयम मार्ग पर चलने के लिए साथ ले लीजिये। आप थोडी देर ठहरिए, मै अभी आपके साथ चलती हू।

सुभद्रा को सयम लेने के लिए तत्पर देख कर, धन्ना को बहुत प्रसन्नता हुई। उसने सुभद्रा से कहा--तुम्हारे विचारो का मैं अभिनन्दन करता हू। तुम तैयार होओ जब तक मैं शालिभद्र से मिलकर उसकी दबी हुई वीरता जागृत करने का प्रयत्न करू।

सुभद्रा से इस प्रकार कहकर तथा अपनी शेष पत्नियो को समझा-बुझा कर धन्ना शालिभद्र के घर गया। उसने भद्रा से पूछा कि शालिभद्र कहा है? अपने जामाता को अनायास आया देखकर तथा उसके शरीर पर पूरी तरह वस्त्राभूषण न देखकर भद्रा आश्चर्य मे पड गई लेकिन उसने यह विचार कर अपना आश्चर्य दबा दिया कि सभवत यह शालिभद्र के वैराग्य का समाचार सुनकर एकदम शालिभद्र को समझाने के लिये आये हैं। वह धन्ना का स्वागत करके उसे शालिभद्र के पास ले गई। शालिभद्र ने भी धन्ना का सत्कार किया। धन्ना ने शालिभद्र से कहा– आप मेरे स्वागत सत्कार की बात छोडकर यह बताइए कि आपका क्या विचार है? मैंने सुना हे कि आप सयम लेने वाले हैं? शालिभद्र ने कहा– आपने जो कुछ सुना हे वह ठीक ही हे। ‹ ह सासारिक सम्पदा मुझे अनाथ वनाये हुये हे परतन्त्रता मे डाले है इसलिये मे इनको त्याग कर सयम लेना चाहता हू। स्त्रियो को समझा रहा हू, जो मुझे अपना पति मान रही हे परन्तु वास्तव मे मे न तो इन्हे स्वतत्र वन सकता हू, न ये ही मुझे स्वतत्र वना सकती हे।

धन्ना ने कहा– ससार त्यागने की वीरता का आवेश आन पर भी

स्त्रियो को समझाने के लिए अधिक समय तक रुक कर उस आवेश को ठण्डा पड़ने देना ठीक नहीं है। जब सयम लेना ही है और इसके लिए पूरी तरह विचार कर चुके है, तब अधिक दिनो तक रुके रहने की क्या आवश्यकता है? वीर रस से भरा हुआ व्यक्ति भविष्य के सम्बन्ध मे चिन्ता नही किया करता और जो अपने भविष्य के सम्बन्ध मे चिता करता है, उसके लिए यह कहा जा सकता है कि वह अभी गृह–ससार त्यागने मे पूरी तरह समर्थ नही है। इसलिये मैं तो यह कहता हू कि सयम लेने जैसे शुभ कार्य मे विलम्ब करना अवाछनीय है।

सुनद्रा को धन्ना की ओर से यह आशा थी कि ये शालिभद्र को सयम न लेने के लिए समझाएगे लेकिन उसने जब यह देखा कि ये तो शालिभद्र को शीघ्र सयम लेने के लिए उपदेश दे रहे है तब उसे बहुत ही आश्चर्य और दु ख हुआ। उसने धन्ना से कहा कि आप शालिभद्र को यह क्या उपदेश दे रहे हैं? क्या आप भी शालिभद्र को सयम न लेने की सम्मति न देगे?

सुनद्रा के इस कथन के उत्तर मे धन्ना ने कहा– शालिभद्र जी से मेरा जो सम्बन्ध रहा है उसे दृष्टि मे रख कर मैं उन्हे वही सम्मति दे सकता हू जिससे इनका हित हो। हितैषी सज्जन ऐसा ही किया करते हैं। जो इसके विरुद्ध करते है वे हितैषी नहीं है। मैं चाहता हू कि शालिभद्र ने जो वीरतापूर्ण विचार किया है उस विचार को वीरतापूर्ण रीति से ही कार्यान्वित करे। इसी विचार से मै शालिभद्र के पास आया हू। तुम्हारी पुत्री के उपदेश से मैं भी वही मार्ग अपनाने के लिए तैयार हुआ हू, जिस मार्ग को शालिभद्र अपनाना चाहता है। तुम्हारी पुत्री केवल मुझे ही उपदेश देकर नही रही है, किन्तु वह भी सयम लेने की तयारी कर रही हैं। मैंने सोचा कि जिनके कारण हम लोगो से बिछुड़े हुए न रह जावे। यह सोचकर मैं शालिभद्र को उसी प्रकार ललकारने आया हू, जिस प्रकार वीरता बताने के लिए सिह को ललकारा जाता है।

लेने की तैयारी कर रही थी। राजा श्रेणिक ने जब यह सुना कि शालिभद्र ओर धन्ना दोनो ही ससार से विरक्त हो गये हैं तथा सयम लेने की तेयारी कर रहे है,, तब वह भी धन्ना के यहा आया। उसने दीक्षोत्सव की तैयारी कराई। अन्त मे सुभद्रा सहित धन्ना पालकी मे बेठ कर शालिभद्र के यहा चला।

उधर शालिभद्र भी अपनी पत्नियो को समझा–बुझाकर दीक्षा लेने के लिये तैयार हो गया था और धन्ना की प्रतीक्षा कर रहा था। इतने मे वह पालकी शालिभद्र के यहा पहुच गई, जिसमे सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था। इन दोनो को देखकर शालिभद्र प्रसन्न हुआ, परन्तु भद्रा का दु ख बढ गया। वह कहने लगी यदि मुझे धैर्य देने के लिये सुभद्रा रही होती तब भी ठीक था, परन्तु वह भी तो जा रही है। भद्रा को विकल देखकर सुभद्रा ने उसे समझा–बुझाकर धैर्य दिया।

राजा श्रेणिक ने शालिभद्र के दीक्षोत्सव की भी तैयारी कराई। शालिभद्र भी एक पालकी मे बैठा। शालिभद्र के साथ उसकी माता भद्रा रजोहरण पात्र आदि लेकर बैठी। एक पालकी मे सुभद्रा सहित धन्ना बैठा हुआ था और दूसरी मे भद्रा सहित शालिभद्र। धन्ना की शेष सात पत्निया धन्ना की पालकी के आस–पास थीं और शालिभद्र की बत्तीस पत्निया शालिभद्र की पालकी के आस–पास थीं। राजा श्रेणिक तथा नगर के और सब लोग भी साथ थे।

उत्सवपूर्वक सब लोग भगवान् महावीर की सेवा मे उपस्थित हुए। शालिभद्र, धन्ना और सुभद्रा पालकियो से उतर कर भद्रा के आगे–आगे भगवान् महावीर के सामने गये। आखो से आसू गिराती हुई भद्रा ने भगवान् से प्रार्थना की–प्रभो, मेरा पुत्र शालिभद्र, मेरी पुत्री सुभद्रा ओर मेरे जामाता धन्नाजी, ये तीनो ससार के दु ख से घबरा कर आपकी सेवा मे उपस्थित हुए हैं और सयम स्वीकार कर ससार के जन्म–मरण रूपी दु ख से मुक्त होना चाहते हे। में आपको शिष्य रूपी भिक्षा देती हू। आप मेरे द्वारा दी गई यह भिक्षा स्वीकार कीजिये।

भगवान से इस तरह प्रार्थना करके भद्रा ने शालिभद्र सुभद्रा ओर धन्ना से कहा– तुम तीनो जिस ध्येय को लेकर गृहससार त्याग रहे हो तथा सयम ले रहे हो वह ध्येय पूरा करना सयम का भलीभाति पालन करना सयम मे होने वाले कष्ट को वीरता के साथ सहना तप करना सन्ता की सेवा करना ओर सब के कृपापात्र बन कर ऐसा प्रयत्न करना कि जिससे फिर इस

ससार मे जन्म लेकर किसी माता को दु खी न करना पडे।

भद्रा की आज्ञा एव शालिभद्र, धन्ना और सुभद्रा की प्रार्थना से भगवान ने धन्नाजी शालिभद्र ओर सुभद्रा को दीक्षा दी। भगवान् ने दीक्षा देकर सुभद्रा को सती चन्दनबाला के सुपुर्द कर दिया। दीक्षा–कार्य समाप्त होने पर शालिभद्र एव धन्नाजी की त्यक्त पत्निया भद्रा और राजा श्रेणिक सब लोग अपने–अपने घर गये तथा भगवान् महावीर भी सन्त–सतियो सहित राजगृह से विहार कर गये।

23 : संथारा

रम्य हर्म्यतल न कि वसतये श्राव्य न गेयादिक
कि वा प्राणसमा समागमसुख नैवाधिक प्रीतये।
किन्तूद्भ्रान्तपतत्पतङ्गपवनव्यालोलदीपाङ,कुरो–
च्छायाचचलमाकलय्य सकल सन्तो वनान्त गता ।।

अर्थात्– क्या रहने के लिए उत्तमोत्तम महल और सुनने के लिए उत्तमोत्तम गीत न थे तथा क्या उन्ह प्यारी स्त्रियो के समागम का सुख न था जो सत लोग जगल मे रहने गये? उन्हे ये सब कुछ प्राप्त था लेकिन उन्होने इन सबको उसी प्रकार चचल समझ कर छोड दिया जिस प्रकार पतग के पखो की हवा से हिलने वाले दीपक की छाया चचल होती हे ओर इसी कारण वे वन मे रहते हैं।

महात्मा पुरुष गृह–ससार त्याग कर वन मे निवास करते हैं सो इसलिए नही कि ससार मे उन्हे विषयजन्य सुख प्राप्त न थे। किन्तु इसलिए रहने लगे हैं कि यह ससार स्वय को विषय भोग की आग से नष्ट कर रहा है। इसलिए यदि हम इसमे रहे तो ससार के लोगो की तरह हमारा भी विनाश होगा। इस तरह स्वय को सासारिक विषय–भोगो की आग से वचा कर अपूर्व शान्ति मे स्थापित करने के लिए ही महात्मा लोग गृह त्याग कर वन मे रहते हें। जो लोग घर स्त्री प्रभृति न होने के कारण अथवा ससार का भार वहन करने की अयोग्यता के कारण या गृह स्त्री आदि नष्ट हो जान क कारण ससार से विरक्त हो जाते हे उनकी विरक्ति श्रेष्ठतम नही कही जा सकती। प्राप्त सासारिक सुख भी स्वेच्छापूर्वक त्याग देना श्रेष्ठ विरक्ति हे।

शालिभद्र मुनि ओर धन्ना मुनि ने श्रेष्ठतम वेराग्य हान स ही गृह त्याग कर सयम लिया था। भगवान से दीक्षा लेकर दोनो मुनि सयम का पालन करने लगे। दोनो मुनियो ने मास–मास खमण की तपस्या प्रारम्भ कर

दी। इस तरह की तपस्या करते हुए उन दोनो को बारह–बारह वर्ष बीत गये। बारह वर्ष व्यतीत होने के पश्चात वे दोनो भगवान के साथ फिर राजगृह आये। वह दिन दोनो मुनियो के पारणे का था। इधर राजगृह नगर मे भगवान् के पधारने की खबरा हुई। भद्रा ने भी सुना कि भगवान् पधारे है और उन्ही के साथ मुनिव्रतधारी मेरे पुत्र तथा जामाता का भी आगमन हुआ है। यह जानकर भद्रा एव उसकी पुत्रवधुओ को बहुत ही आनन्द हुआ। वे सब दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी करने लगी।

भद्रा के यहा तो भगवान् एव उनके साथ की मुनिमण्डली का दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी हो रही थी और उधर शालिभद्र मुनि तथा धन्ना मुनि भिक्षा के लिए नगर मे जाने की स्वीकृति प्राप्त करने को भगवान् की सेवा मे उपस्थित हुए। भगवान् ने दोनो मुनियो को भिक्षा के लिए नगर मे जाने की स्वीकृति देकर शालिभद्र मुनि से कहा–शालिभद्र आज तुम्हारी माता के हाथ से तुम दोनो का पारणा होगा।

भगवान् से स्वीकृति प्राप्त करके धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि भिक्षा के लिए नगर मे गए। दोनो ने विचार किया कि जब भगवान् ने पारणा होने के विषय मे निश्चय कर दिया है तब भद्रा के ही घर चलना चाहिए। किसी दूसरे के घर जाना व्यर्थ है। इस तरह विचार कर दोनो मुनि भद्रा के यहा आए लेकिन भद्रा के यहा तो भगवान् का दर्शन करने के लिए जाने की तैयारी हो रही थी। तप के कारण दोनो मुनियो की आकृति एव उनके शरीर मे भी ऐसा अन्तर पड गया था कि भद्रा के यहा उन्हे किसी ने भी न पहिचाना। अवसर न देखकर दोनो मुनि भद्रा के घर से लौट पडे। उन्होने किसी को अपना परिचय भी नही दिया।

मे लौट चले।

दोनो मुनि चले जा रहे थे। जाते हुए दोनो मुनियो को एक दूध बेचने वाली वृद्धा ने देखा। मुनियो को देखकर वृद्धा वहुत ही हर्पित हुई। उसे इतना हर्ष हुआ कि उसके स्तनो से दूध की धारा छूटने लगी। वृद्धा ने दोनो मुनियो के सम्मुख खडे होकर प्रार्थना की–हे प्रभो, मेरे पास दूध हे। कृपा करके थोडा दूध लीजिये। आपने मेरे हाथ से दूध लेने की कृपा की तो मैं अपने को वहुत सद्‌भागिनी मानूगी।

वृद्धा की प्रार्थना सुनकर दोनो मुनियो ने विचार किया–इस वृद्धा की प्रार्थना कैसे अस्वीकार कर दे? एक ओर तो भद्रा के घर का अनादर और दूसरी ओर इसके द्वारा की जाने वाली यह विनम्र प्रार्थना। दोनो मे कितना अन्तर है। यद्यपि भगवान् ने यह कहा था कि तुम्हारी माता के हाथ से पारणा होगा, लेकिन भगवान् की इस बात का आशय भगवान् ही जाने। भगवान की सेवा में पहुच घर इसका निर्णय करेगे।

इस प्रकार विचार कर दोनो मुनियो ने वृद्धा के सम्मुख अपने पात्र रख दिये। वृद्धा ने हर्ष तथा उत्साह के साथ पात्र दूध से भर दिये। वह हर्पित होती हुई तथा अपना जन्म सफल मानती हुई अपने घर गई।

दोनो मुनि पारणा करके भगवान् की सेवा मे उपस्थित हुए। दोनो को देख कर भगवान् ने उनसे कहा–तुम दोनो पहले दो बार भद्रा के यहा गए थे, परन्तु तुम्हे भद्रा के यहा से भिक्षा नही मिली। जब तुम लोट कर आ रहे थे, तब तुम्हे दूध बेचने वाली एक वृद्धा मिली। उसने तुम्हे दूध की भिक्षा दी। तुम सोचते होओगे कि भगवान् के कथनानुसार हमारा पारणा हमारी माता के हाथ से नही हुआ। परन्तु हे शालिभद्र वह दूध बहराने वाली वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है। उस वृद्धा के प्रताप से ही तुझे इस भव मे सासारिक सम्पदा प्राप्त हुई ओर फिर उस सासारिक सम्पदा को त्याग कर तू यह सयम रूप सम्पति प्राप्त कर सका है।

यह कह कर भगवान् ने शालिभद्र के पूर्वभव का वृत्तान्त उसे सुना दिया। कहा कि– 'हे शालिभद्र पूर्वभव मे तू एक ग्वाले का वालक था। तू जब वालक था, तभी तेरा पिता मर गया था इसलिए तेरी वह दूध देन वाली वृद्ध माता तुझे लेकर इस राजगृह नगर मे ही रहने लगी थी। तेरी माता लोगा के यहा मेहनत मजदूरी करती थी ओर तू लोगा की गायो क वछड चराया करता था। उस समय तेरा नाम सगम था। एक दिन दूसर लडको को खीर खाते देख कर तूने अपनी मा से खीर मागी। तेरी मा न इधर–उधर स दूध

शक्कर चावल आदि लाकर तेरे लिए खीर बनाई। तू खीर ठडी होने की प्रतीक्षा मे थाली मे खीर लेकर बैठा था, इतने मे एक तपस्वी साधु भिक्षा के लिए आये। यद्यपि तूने पहले कभी खीर नही खाई थी, फिर भी उन मुनि को देख कर तुझे हर्ष हुआ तथा तूने प्रसन्नता पूर्वक थाली मे की सब खीर मुनि को बहरा दी। मुनि के जाने के पश्चात् तू थाली मे लगी हई खीर चाटने लगा। इतने मे ही तेरी माता आ गई उसने तुझे खीर दी। तू ने इतनी अधिक खीर खाई कि जिसे पचाना तेरी शक्ति से बाहर था। इस कारण तुझे सग्रहणी हो गई और अन्त मे उसी रोग से तेरी मृत्यु हो गई। परन्तु तेरे हृदय मे उन मुनि का ध्यान बना ही रहा, जिन्हे तूने खीर का दान दिया था। खीर का दान देने एव अन्त समय मे मुनि का ध्यान करने के कारण ही इस भव मे तुझे इहलाकिक तथा पारलौकिक सुख–सामग्री प्राप्त हुई। इस प्रकार जिसने तुझे दूध का दान दिया वह वृद्धा तेरी पूर्वभव की माता ही है।

भगवान का कथन सुनकर शालिभद्र मुनि को बहुत ही आनन्द हुआ। वे सोचने लगे– भगवान ने पूर्वभव का वृत्तान्त सुनाकर हमारी आखे खोल दी है। भगवान ने यह बता दिया है कि पूर्वभव मे कैसे–कैसे कष्ट सहने पडे और किस कार्य के परिणाम स्वरूप इस भव मे सयम का यह अवसर मिला है। इस सयोग के प्राप्त होने पर भी क्या अपन ऐसा प्रयन्त न करेगे कि जिससे अपने को फिर जन्म–मरण न करना पडे और कष्ट न सहना पडे। यदि अपन ने ऐसा प्रयत्न न किया तो यह अपनी भयकर भूल होगी। अब अपना शरीर भी क्षीण हो गया है इसलिये अपने को पडितमरण द्वारा शरीर त्याग कर जीवनमुक्त हो जाना चाहिए।

इस प्रकार विचार कर शालिभद्र मुनि तथा धन्ना मुनि ने भगवान् से सथारा करने की आज्ञा मागी। भगवान ने दोनो को सथारा करने की स्वीकृति दे दी। दोनो मुनि पर्वत पर चढ गये। वहा उन्होने एक शिला पर विधिवत् पादपगमन सथारा कर लिया।

मिल गई, जिसने दोनो मुनियो को दूध वहराया। पूर्वभव की माता द्वारा प्राप्त दूध से पारणा करके दोनो ने अपना-अपना शरीर अशक्त जानकर और अवसर आया देखकर, मेरी स्वीकृति ले वैभारागिरि पर्वत पर सथारा कर लिया हे।

भगवान् से यह सुन कर, भद्रा एव धन्नाजी ओर शालिभद्रजी की पत्नियो को खेद हुआ। भद्रा अपनी मडली के साथ मुनियो के अन्तिम दर्शन करने के लिए वैभारागिरि पर गई। दोनो मुनि परम समाधि मे मग्न थे, आत्मध्यान मे लीन थे। भद्रा आदि ने एक बार नहीं किन्तु कई बार यह प्रयत्न किया कि धन्ना मुनि और शालिभद्र मुनि एक बार हमारी ओर देख कर हमसे कुछ कहे, लेकिन वे अपने एक भी बार के प्रयत्न मे सफल नही हुईं।

देवलोक की प्राप्ति

कई लोगो का कहना हे कि धन्ना मुनि तो सथारे मे अविचल रहे परन्तु शालिभद्र मुनि ने तो भद्रा का रुदन सुन आख खोल कर भद्रा आदि की ओर देख लिया था। परिणामत सथारा समाप्त होने पर धन्ना मुनि तो सिद्ध बुद्ध एव मुक्त हो गए लेकिन शालिभद्र मुनि सिद्ध-मुक्त होने के बदले सर्वार्थसिद्ध विमान मे गए। किन्तु ऐसा कहना ठीक नही हे। वास्तविक वात यह है कि शालिभद्र मुनि का आयुष्य सात लव कम था इससे धन्ना मुनि तो सिद्ध हो गये ओर शालिभद्र मुनि सर्वार्थसिद्ध विमान मे गये।

सवार्थसिद्ध विमान मे सर्वोत्कृष्ट सुख भोगकर वहा से च्युत होने के पश्चात् मनुष्यभव धारण करके शालिभद्र भी सिद्ध बुद्ध ओर मुक्त होगे।

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर

– एक परिचय –

स्थानकवासी जैन परम्परा मे आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा एक महान् क्रातिकारी सत हुए हैं। आषाढ शुक्ला सवत् 2000 को भीनासर मे सेठ हमीरमलजी बाठिया स्थानकवासी जैन पौषधशाला मे उन्होने सथारापूर्वक अपनी देह का त्याग किया। उनकी महाप्रयाण यात्रा के बाद चतुर्विध सघ की एक श्रद्धाजलि सभा आयोजित की गई जिसमे उनके अनन्य भक्त भीनासर के सेठ श्री चम्पालाल जी बाठिया ने उनकी स्मृति मे भीनासर मे ज्ञान–दर्शन चारित्र की आराधना हेतु एक जीवन्त स्मारक बनाने की अपील की। तदन्तर दिनाक 29 4 1944 को श्री जवाहर विद्यापीठ के रूप मे इस स्मारक ने मूर्त रूप लिया।

शिक्षा–ज्ञान एव सेवा की त्रिवेणी प्रवाहित करते हुए सस्था ने अपने छह दशक पूर्ण कर लिए हैं। आचार्य श्री जवाहरलालजी म सा के व्याख्यानो से सकलित सम्पादित ग्रथो को 'श्री जवाहर किरणावली' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। वर्तमान मे इसकी 32 किरणो का प्रकाशन सस्था द्वारा किया जा रहा है इसमे गुफित आचार्यश्री की वाणी को जन–जन तक पहुचाने का यह कीर्तिमानीय कार्य है। आज गौरवान्वित हैं गगाशहर–भीनासर की पुण्यभूमि जिसे दादा गुरु का लाभ देने का सुअवसर मिला और ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म सा की कालजयी वाणी जन–जन तक पहुच सकी।

महिलाओ को स्वावलम्बी बनाने हेतु सस्था द्वारा सिलाई, बुनाई, कढाई प्रशिक्षण केन्द्र का सचालन किया जाता हे, जिसमे योग्य अध्यापिकाओ द्वारा महिलाओ व छात्राओ को सिलाई, बुनाई, कढाई व पेन्टिग कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है। इससे वे अपने गृहस्थी के कार्यों मे योगदान दे सकती हैं और आवश्यकता पडने पर इस कार्य के सहारे जीवन मे स्वावलम्बी भी बन सकती हैं।

सस्था के सस्थापक स्वर्गीय सेठ चम्पालाल जी बाठिया की जन्म जयन्ती पर प्रत्येक वर्ष उनकी स्मृति मे एक व्याख्यानमाला का आयोजन किया जाता है जिसमे उच्च कोटि के विद्वानो को बुलाकर प्रत्येक वर्ष अलग–अलग धार्मिक, सामाजिक विषयो पर प्रवचन आयोजित किए जाते हैं।

उपरोक्त के अलावा प्रदीप कुमार जी रामपुरिया स्मृति पुरस्कार के अन्तर्गत भी प्रतिवर्ष स्नातकस्तरीय कला, विज्ञान एव वाणिज्य सकाय मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे प्रथम व द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियो को नकद राशि, प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है एव स्नातकोत्तर शिक्षा मे बीकानेर विश्वविद्यालय मे सर्वाधिक अक प्राप्त करने वाले एक विद्यार्थी को विशेष योग्यता पुरस्कार के रूप मे प्रशस्ति–पत्र एव प्रतीक–चिन्ह देकर सम्मानित किया जाता है।

विद्यापीठ द्वारा ठण्डे मीठे जल की प्याऊ का सचालन किया जाता है। जनसाधारण के लिए इसकी उपयोगिता स्वय–सिद्ध हे। इस प्रकार अपने बहुआयामी कार्यों से श्री जवाहर विद्यापीठ निरन्तर प्रगति–पथ पर अग्रसर है।